# पद-सूची

❖

## प्रार्थना

हे नाथ अब तो ऐसी दया हो, जीवन निरर्थक जाने न पाये।
यह मन न जाने क्या क्या दिखाये, कुछ बन न पाया मेरे बनाये ।।

संसार में ही आसक्त रह कर, दिनरात अपने मतलब की कह कर।
सुख के लिये लाखों दुःख सहकर, ये दिन अभी तक यों ही बिताये ।।

ऐसा जगा दो फिर सो न जाऊँ, अपने को निष्काम प्रेमी बनाऊँ।
मैं आपको चाहूँ और पाऊँ, संसार का कुछ भय रह न जाये ।।

वह योग्यता दो सत्कर्म कर लूँ, अपने हृदय में सद्भाव भर लूँ।
नरतन है साधन भवसिन्धु तर लूँ, ऐसा समय फिर आये न आये ।।

हे प्रभु हमें निरभिमानी बना दो, दारिद्र हर लो दानी बना दो।
आनन्दमय विज्ञानी बना दो, मैं हूँ 'पथिक' यह आशा लगाये ।।

---

**सन्त-वचन—प्रार्थना दुःखी हृदय की पुकार है। अपनी शक्ति लगा देने के बाद शक्तिमान् प्रभु की ओर देखना ही प्रार्थना है। शक्ति के रहते हुए उसका उपयोग न करने से सच्ची प्रार्थना नहीं होती।**

---

अब और कहाँ जायें, प्रभु आपके गुण गायें ।।

संसार में सब कुछ के, हे नाथ प्रकाशक तुम।
शरणागतों के रक्षक, हो विघ्न विनाशक तुम।
संगी जनम मरण के, सर्वस्व तुम्हें ध्यायें ।। अब०।।

जब तक कि तुममें रहकर, तुमसे बने विमुख हैं।
तब तक सुखों के पीछे, मिलते महान दुःख हैं।
इस दुर्दशा से हे हरि, अब आप ही बचायें ।। अब०।।

हे हृदय निवासी तुम सुधि ले रहे जन जन की।
कुछ कहने के पहले ही, सब जानते हो मन की।
तुमसे ही पूरी होती हैं, मेरी कामनायें ।। अब०।।

हे दीन बन्धु मेरा, अब किस प्रकार हित हो।
बतलाओ वही साधन, जिससे प्रशान्त चित हो।
मुझ पथिक के हृदय का, सब भेद भ्रम मिटायें ।। अब०।।

**सन्त-वचन—परमेश्वर जो दूर प्रतीत होते हैं वह केवल न जानने के कारण और संसार जो निकट प्रतीत होता है वह भी न जानने के कारण परमेश्वर का ज्ञान होने पर दूरी मिट जायेगी। संसार का ज्ञान होने पर सम्बन्ध मिथ्या प्रतीत होगा।**

अब अपने को हमसे छिपाना न स्वामी, भूले हुये को भुलाना न स्वामी ।।
मुझे मूर्ख चंचल प्रमादी समझकर, कृपा दृष्टि अपनी हटाना न स्वामी ।।
यही धुन है निष्काम प्रेमी बनूं मैं, परीक्षा कठिन कोई लेना न स्वामी ।।
यह मन है महा नीच पापी हमारा, प्रलोभन सुखों के दिखाना न स्वामी ।।
मैं दुर्बल हूँ पथ में कहीं गिर न जाऊँ, बचाने में देरी लगाना न स्वामी ।।
बहुत सो चुके मोह निद्रा में अब तो, जगा कर 'पथिक' को सुलाना न स्वामी ।।

**सन्त वचन—परमात्मा को वही भूलता है जो संसार की याद में खोया रहता है। विनाशी की याद हमें चिन्ता, भय से मुक्त नहीं कर सकेगी। इसलिये परमेश्वर को याद करो तो उसकी दया, कृपा सब होगी। मानव उस दयानिधान को भूल जाता है, पर वह किसी को नहीं भूलता।**

अब तक तुम मुक्त भक्त होते, देखो कितने दिन बीत गये ।
खेलते और खाते सोते, देखो कितने दिन बीत गये ।।

यह दुर्लभ मानव तन पाकर, प्रभु के प्रेमी न हुये आकर ।
तब तो फिर व्यर्थ समय खोते, देखो कितने दिन बीत गये ।।

कितनी असार चिन्ताओं का, नित राग द्वेषमय भावों का ।
अति दु:खद भार ढोते-ढोते, देखो कितने दिन बीत गये ।।

जितने भी दिखते हैं बन्धन, रचता इनको अपना ही मन ।
काटते वही जो कुछ बोते, देखो कितने दिन बीत गये ।।

कंचन कमनीया काया में अब, मुग्ध न होना माया में ।
ऐ पथिक यहाँ हँसते रोते, देखो कितने दिन बीत गये ।।

**सन्त-वचन—समय ही जीवन है, समय खोना जीवन को व्यर्थ खो देना है। वही मूढ़ है जो संसार में सब कुछ तथा सुख पाने के भ्रम में आयु खोता रहता है परन्तु अन्त में देखता है कि मिला कुछ भी नहीं। देखो इस हाड़ मांस के शरीर में वह क्या है जो जड़ देह नहीं है ? जिस शक्ति से अन्य को पर को जानते हो उसी शक्ति से, उसी ज्ञान से स्वयं को जान सकते हो।**

अब तुम्हारी शरण हे प्रभु ॥
चतुर्दिक हम भटक आये, मन तुम्हीं में शान्ति पाये ।
तुम्हीं से ही सब प्रकाशित जगत्, जीवन, मरण हे प्रभु ॥

तुम्हीं तो आनन्दघन हो अकिञ्चन के परमधन हो ।
हुआ करता सभी के हित, तुम्हारा अवतरण हे प्रभु ॥

सदा सद्गति तुम्हीं देते, धृति विमलमति तुम्हीं देते ।
तुम्हीं से ही शुद्ध होता हमारा आचरण हे प्रभु ॥

विश्व निर्माता तुम्हीं हो शक्ति के दाता तुम्हीं हो ।
तुम्हीं से ही हो रहा है, सकल पोषण भरण हे प्रभु ॥

बना लो अब हमें ज्ञानी, पूर्ण प्रेमी निरभिमानी ।
हे कृपालो अभय दानी, तुम्हीं हो दु:ख हरण हे प्रभु ॥

तुम्हारे ही ज्ञान द्वारा, तुम्हारे ही ध्यान द्वारा ।
तुम्हें पा जायें पथिक हम, तोड़ कर आवरण हे प्रभु ॥

**सन्त-वचन—शरणागत को आवश्यक वस्तु बिना माँगे ही मिलती है, अनावश्यक वस्तु माँगने पर भी नहीं मिलती। काम का अन्त होने पर राम की कृपा राम से मिलती है। जिसके सभी द्वार बन्द हो जाते हैं तब प्रभु-कृपा का द्वार अवश्य खुलता है। जो प्राप्त का अनादर और अप्राप्त का चिन्तन करते हैं वे प्रार्थना के अधिकारी नहीं हैं। प्रार्थना आस्तिक का जीवन और निर्बल का बल है।**

अब रखना लाज हमारी ॥
प्रभु तुम ही जनहितकारी, तुमसे ही पूर्ति हमारी ।
हम क्षुद्र पतित हैं जितने, प्रभु तुम महान् हो उतने ।

हम अपराधी हैं इतने, पर तुम दयालु हो कितने ।
हम आरत तुम दु:खहारी, अब रखना लाज हमारी ।।

तुम पूरण हम परिमित हैं, तुम पावन हम कलुषित हैं ।
तुम निश्चल हम चलचित हैं, सब विधि अति दीन दलित हैं ।
तुम अमृत हम विषधारी, अब रखना लाज हमारी ।।

निज कर्मों के प्रतिफल में, फँसते नित दु:ख दलदल में ।
चल रहे तुम्हारे बल में, विश्वास यही पल-पल में ।
तुम हरते विपदा सारी, अब रखना लाज हमारी ।।

सोते से तुम्हीं जगाते, मेरा अज्ञान मिटाते ।
बंधन से मुक्त बनाते, ज्ञानामृत हमें पिलाते ।
तब मिटती कुमति हमारी, अब रखना लाज हमारी ।।

ज्यों चाहो नाथ निभा दो, भवनिधि से हमें बचा दो ।
यह जीवन पार लगा दो, प्रेमामृत हमें पिला दो ।
शरणागति 'पथिक' तुम्हारी, अब रखना लाज हमारी ।।

---

**सन्त-वचन—विचार के बिना अनुराग हृदय की पीड़ा बनता है और अनुराग के बिना विचार मस्तिष्क का बोझ बन जाता है।**

---

अब सन्मति दो हे परमात्मन ।।
तुम्हीं प्रगति दो हे परमात्मन ।।

जिसके द्वारा दिखने लगता, इस दुनिया का दु:ख-सुख सपना ।
जिससे तुम बिन और कहीं कुछ, समझ न पड़ता कोई अपना ।।
वह उपरति दो हे परमात्मन ।।

जिसके बल से हानि लाभ, मानापमान में रहें अचंचल ।
जिसके बल से प्रतिक्षण जाग्रत रहकर तुमको ध्यायें अविकल ।।
ऐसी धृति दो हे परमात्मन ।।

जिससे दोषों के आने का, मिलता कोई द्वार नहीं है ।
जिससे प्रलोभनों के आगे, होती दु:खप्रद हार नहीं है ।।
वही सुकृति दो हे परमात्मन ।।

जिससे माया मान मोह में, फँस कर कहीं न धोखा खायें।
जिसके कारण जग में बंधते, पुनः न ऐसे कर्म बनायें।।
वह सुस्मृति दो हे परमात्मन ।।

व्याकुल विरही प्रेमी को जो, सकुशल तुम तक पहुँचा देती।
जिसका अन्त तुम्हीं में है, जो नहीं किसी का आश्रय लेती।।
वह सद्गति दो हे परमात्मन ।।

जिसके द्वारा जग प्रपंच का रहता कुछ भी ज्ञान नहीं है।
जिसके द्वारा 'पथिक' तुम्हारा कहीं भूलता ध्यान नहीं है।।
वही सुरति दो हे परमात्मन ।।

---

**सन्त-वचन—निष्कामता पूर्ण परितृप्ति प्रदान करती है और योगी बना देती है। कामना सत्यानन्द से विमुख रखती है।**

---

अब से शुभ करना सीख लो, दोषों से डरना सीख लो।।

सुख की तृष्णा त्याग करो तुम, अब न किसी से राग करो तुम।
निज मन को आधीन बना, स्वाधीन विचरना सीख लो।।

लोभ मोह अभिमान हटाओ, निज को सरल विनम्र बनाओ।
प्राप्त सुखों से दुखियों की अब, झोली भरना सीख लो।।

करो सार्थक श्रम से तन को, और दान देकर निज धन को।
वीर बनो कष्टों के सम्मुख, धीरज धरना सीख लो।।

अपना सा दुःख सबका जानो, परम आत्मा को पहिचानो।
अवसर पर दीनों दलितों के, बीच उतरना सीख लो।।

इस जग को भवसागर कहते, सब बहते ज्ञानी तट गहते।
तुम सुख दुःख की धाराओं में, निर्भय तरना सीख लो।।

विधि की भूल न होने पाये, देखो जीवन व्यर्थ न जाये।
'पथिक' जगत में जन्म न हो अब ऐसा मरना सीख लो।।

**सन्त-वचन—अज्ञान में जिसे हम जीवन जानते हैं, जिसे अपना मानते हैं उसे ही खो जाने का भय है। जो अपना नहीं है वही मृत्यु में छूटता है, जो हम नहीं है वही छिनता है। अहंकार की मृत्यु ही आत्मा का जीवन है। जीवन नित्य है अविनाशी है, नित्य आनन्द है अनुपम सौन्दर्य, माधुर्य है परन्तु मनुष्य अनुभव शून्य है। हम क्षुद्र में लघु में उलझ रहे हैं इसीलिये विराट को महान् को नहीं समझ पाते हैं। जब तक देहादिक वस्तुओं में अटके हैं तब तक हम मूढ़ ही हैं। ज्ञान चक्षु के खुलते ही सम्यक् दर्शन होने लगता है। जो मुक्त हो जाते हैं वही जीने मरने की कला जानते हैं क्योंकि वे नित्य जीवन से तथा मृत्यु से परिचित होते हैं।**

अपना दुःख प्रभु किसे सुनाऊँ ।।
तुमही केवल देख रहे हो जो कुछ रोऊँ गाऊँ ।।

इस जग में जब रहना ही है, सुख के संग दुःख सहना ही है ।
यही बता दो हे जीवन धन, किस विधि से अब दिवस बिताऊँ ।।

जब तक यह मोहान्धकार है, दीख न पड़ता कहीं पार है ।
वह प्रकाश दो जिससे अपनी, गति मति सुन्दर शुद्ध बनाऊँ ।।

विघ्न रोकते राह हमारी, दुर्बल हैं कुछ चाह हमारी ।
ऐसी शक्ति मुझे दो भगवन, जिससे अपने दोष मिटाऊँ ।।

तुमसे ही अनुराग करूँ मैं, सकल कामना त्याग करूँ मैं ।
'पथिक' तुम्हारा होकर अब तो, जैसे भी हो तुमको पाऊँ ।।

**सन्त-वचन—अपने प्रियतम प्रभु की अपने में ही स्थापना कर लो और मन को उन्हीं के निकट रखते हुये निरन्तर उपासना करते रहो ।**

अपने अन्तर में कब हे प्रभु, सत्स्वरूप का अवलोकन हो ।
कब होगी यह बुद्धि निष्कलुष, कब निर्मल यह मेरा मन हो ।।

माया के प्रपंच विप्लब में, कर्म भोग के भीषण रव में ।
भटक रहा हूँ दुःखप्रद भव, में कब स्वामी संकट-मोचन हो ।।

मिलती शान्ति न भगवन तुम बिन, आयु विगत होती है छिन-छिन ।
चिन्तित रहता हूँ मैं निशिदिन, कब मेरा विरक्त जीवन हो ।।

किस साधन से पायें तुमको, कैसे नाथ रिझायें तुमको ।
प्रियतम भूल न जायें तुमको, चाहे घर हो चाहे बन हो ।।

अब न देव हमको भटकाओ, जन्म मरण का त्रास मिटाओ ।
सत चित आनन्द रूप लखाओ, 'पथिक' पतित के जीवन धन हो ।।

---

**सन्त-वचन—सुखोपभोग के त्याग से ही योग सिद्ध होता है भोक्तृत्व की भावना का अन्त होने पर तत्व ज्ञान होता है। तीनों शरीरों से असंग होने पर स्वरूप का ज्ञान होता है। वस्तुओं तथा व्यक्तियों से मोह मिटने पर प्रेम होता है।**

---

अभिलाष यही निशिदिन, प्रियतम तुम्हें पाऊँ मैं ।
जिस भाँति बने तन मन, सेवा में लगाऊँ मैं ।।

अपने हृदय मन्दिर में, आसन बिछा श्रद्धा का ।
तुमको बुला-बुला कर, प्राणेश बिठाऊँ मैं ।।

तप त्यागमयी शुचिता से, विमल हृदय होकर ।
कर्तव्य की सुविधि से, श्रृंगार सजाऊँ मैं ।।

अति तरस दीनता से, तल्लीन हुये मन से ।
निस्वार्थ प्रणय भावों की, भेंट चढाऊँ मैं ।।

निज भाग्यवश कहीं भी, जीवन दिवस बिताऊँ ।
पर नाथ तुम्हें दुःख सुख में, भूल न जाऊँ मैं ।।

हूँ 'पथिक' तुम्हारा ही, तुम बिना न कुछ अब चाहूँ ।
निष्काम होके तुममें, आनन्द मनाऊँ मैं ।।

---

**सन्त-वचन—प्रेमी, प्रेमपात्र में प्रेमपात्र प्रेमी में निरन्तर निवास करते हैं परन्तु सीमित प्रेम से असीम प्रेमास्पद नहीं मिलते।**

---

अधम उधारन मेरे श्याम सुध लेते रहना ।।
भूल न जाना लीलाधाम सुध लेते रहना ।।

नाथ तुम्हारी यदि दाया है, भुला न सकती फिर माया है ।।
हो जाऊँ निर्भय सब ठाम, सुध लेते रहना ।।
परम प्रेममय अन्तर्यामी, अकथ अनोखे सब के स्वामी ।।
मेरे जीवनधन अभिराम, सुध लेते रहना ।।
जब अपना मन निश्छल होगा, जहाँ प्रेम का कुछ बल होगा ।।
मिलते तभी हो तुम बिन दाम, सुध लेते रहना ।।
'पथिक' आ चुका शरण तुम्हारी यही विनय है भवभय हारी ।।
देकर भक्ति इसे निष्काम, सुध लेते रहना ।।

---

**सन्त-वचन—परम प्रभु दीनता और अपनत्व के भाव से रीझते हैं और अपना प्रेम प्रदान करते हैं।**

---

अधम उद्धारने दीन दुख टारने, प्रेम के वश सदा प्रभो आते तुम्हीं ।
परम मंगल करन सर्व संकट हरन, रूप अनुपम अनेकों बनाते तुम्हीं ।
कोई कितना ही पापी अधम क्यों न हो, छाया अज्ञान का घोर तम क्यों न हो ।
मोह निद्रा मैं सोये हुये जीव को, युक्ति से हे दयामय जगाते तुम्हीं ।।
याद कर प्रेम से या कि भय से तुम्हें, जब किसी ने पुकारा हृदय से तुम्हें ।
तुमने सबकी सुनी जिस तरह हो सका, पार भवसिंधु से हो लगाते तुम्हीं ।।
भूलता है तुम्हें जीव अभिमान में, लीन रहता सदा असत के ध्यान में ।
अपने हित के वचन मानता जब न मन, पतित होने पै उसको उठाते तुम्हीं ।।
आपका योग तो नित्य ही प्राप्त है, आपकी शक्ति ही सब कहीं व्याप्त है ।
जो 'पथिक' प्रेम से चाहता है तुम्हें, उसे मिलने का साधन दिखाते तुम्हीं ।।

---

**सन्त-वचन परम प्रभु के नाते स्वकर्म करते रहना ही भजन है अथवा समर्पण ही सच्चा भजन है। हृदय प्रभु-प्रेम से पूर्ण हो, मन निर्विकल्प हो बुद्धि समस्थित हो, यही वास्तविक भजन है।**

---

अनोखी देखो प्रभु की शान ।
प्रभु का है दरबार निराला, सब को आश्रय देने वाला ।
राजा रंक समान ।। अनोखी०।।

जितने धर्मी, दानी, मानी, जो कि धुरन्धर ध्यानी ज्ञानी ।
गाते महिमा गान ।। अनोखी०।।

जो धनपति जनपति कहलाते, यहीं शान्ति सब आकर पाते ।
जब होते हैरान ।। अनोखी०।।

जिनकी सुनकर अमृत बानी, पत्थर दिल बन जाते पानी ।
खो कर के अभिमान ।। अनोखी०।।

जहाँ न रहती ममता माया, परम तृप्तिकर जिनकी छाया ।
खुला दया का दान ।। अनोखी०।।

जगा रहे सोने वालों को हँसा रहे रोने वालों को ।
देकर पावन ज्ञान ।। अनोखी०।।

बड़े-बड़े पापी व्यभिचारी, हो जाते त्यागी व्रतधारी ।
करके सुमिरन ध्यान ।। अनोखी०।।

जो कोई भी शरणागत है, श्रीचरणों में जो अवनत हैं ।
'पथिक' वही मतिमान ।। अनोखी०।।

---

**सन्त-वचन—संसार से विमुख होकर प्रियतम प्रभु की ओर जाना ही सच्चा भजन है। स्मरण मात्र से ही परमात्मा सुलम है उससे निकट कुछ है ही नहीं। परमात्मा है, आत्मा है तभी तुम हो।**

---

अरे मन परमेश्वर का सुमिरन बारम्बार कर लो ।
कभी कुछ बिगड़ा है तो उसका अभी सुधार कर लो ।।

जिसे तुम अपना कहते उसके साथ सदा न रहोगे ।
जहाँ सुख मान रहे हो वहीं अन्त में दुःख सहोगे ।
अभी अवसर है यदि सत्संगति से गुरु ज्ञान गहोगे ।
मुक्ति मिल जायेगी जब इस जग से कुछ न चहोगे ।
मृत्यु आने के पहले जीवन का उद्धार कर लो ।।

बचाओगे जो कुछ तुम वह तुमसे छुट जायेगा ही ।
अहंता ममतावश यदि होगा पाप रुलायेगा ही ।

भाग्य में जो कुछ निश्चित है वह सन्मुख आयेगा ही।
शरण सद्गुरु की ले लो सन्मार्ग दिखायेगा ही।
सदा कुछ भी न रहेगा कितना ही विस्तार कर लो॥

अनेकों पछिताते हैं जीवन के अच्छे दिन खोकर।
अनेकों भोग रहे है दुष्कर्मों का फल रो रो कर।
अनेकों पशुवत जीते हैं औरों का बोझा ढोकर।
कहीं विरले ही मानव जो रहते स्वाधीन होकर।
तुम्हें जो कुछ भी होना है वह अभी विचार कर लो॥

प्रेममय प्रभु को ही अब अपना सरबस मान लेना।
मोह ममता तजकर बस नित्य प्राप्त का ध्यान लेना।
दु:ख जिनसे होता उन दोषों को पहिचान लेना।
असत् से असंग होकर सत्स्वरूप को जान लेना।
'पथिक' अपने में ही निज प्रियतम को स्वीकार कर लो॥

---

**सन्त-वचन—मन द्वारा संसार के सम्बन्ध माने हुये हैं, सुख-दु:ख माना हुआ है और परमात्मा से दूरी मानी हुई है। बुद्धि द्वारा जान लेने पर मानी हुई दूरी, माना हुआ सम्बन्ध तथा माने हुये सुख-दु:ख का प्रभाव नहीं रहता।**

---

अरे मित्र तुमने अभी तक किया क्या।
किया कुछ तो बदले में उसके लिया क्या॥१॥

लिया जो भी कुछ वह रहेगा कहाँ तक।
विनाशी को लेकर जिया तो जिया क्या॥२॥

नहीं हो सकी जिससे तृप्ति किसी की।
ये इन्द्रिय विषय रस पिया तो पिया क्या॥३॥

तनिक ध्यान देकर के यह देख लेना।
जो परलोक में मिल सके वह दिया तो दिया क्या॥४॥

'पथिक' दीन दुखियों का दु:ख देखकर के।
दया से द्रवित जो न हो वह हिया क्या॥५॥

**सन्त-वचन—यदि शक्ति के रहते दूसरों की सेवा न बनी तो जो कुछ किया व्यर्थ है। यदि मन से सर्वस्व के दाता प्रभु को अपना न माना तो अन्य किसी को अपना मानना अनर्थ है। यदि बुद्धि विवेक द्वारा अपने स्वयं को जान लिया तब यही ज्ञान परमार्थ है।**

असफल का प्रभु सफल बनाते, तुमको अब मैंने पहिचाना ॥
भूले को तुम राह दिखाते, भूल भूल कर तुमको जाना ॥

देख न पाऊँ तुम्हें भले ही, पर मैं तुमसे दूर नहीं हूँ।
तुम सागर मैं हूँ तरंगवत, तुममें ही हूँ जहाँ कहीं हूँ।
तुम ही मेरा चित्त चुराते, अब मायिक सुख में न भुलाना ॥ १ ॥

कैसे मैं उन्मुक्त हो सकूँ रोक रहे हैं स्वरचित बन्धन।
नाथ बता दो ऐसा साधन जीत सकूँ अपना चंचल मन।
तुम ही मेरे दुःख मिटाते और कहीं मेरा न ठिकाना ॥ २ ॥

सभी रूप में तुमको देखूँ, जो कुछ करूँ वही हो पूजा।
जो कुछ बोलूँ वही स्तुति हो, मन को भाये और न दूजा।
तुम प्रियतम हमसे न भुलाते, हमको तो तुम को ही पाना ॥ ३ ॥

यही चाह अब शेष रही है, सब चाहों का त्याग करूँ मैं।
हे चिद्घन आनन्दरूप, तुमसे ही दृढ़ अनुराग करूँ मैं।
'पथिक' तुम्हारे ही गुण गाते, जैसे भी हो पार लगाना ॥ ४ ॥

**सन्त-वचन—जब तक दुसरे को अपना मानते हो, स्वरूप को भूले हुये हो, तब तक यथार्थ विवेक नहीं है।**

आज आनन्द मनायें हम, प्रेम से प्रभुगुण गायें हम ॥

मोह निद्रा में जो सोते, दुःखद स्वप्नों में जो रोते।
मान धन भोगों के पीछे, व्यर्थ जीवन हैं जो खोते।
ज्ञान में उन्हें जगायें हम, आज आनन्द मनायें हम ॥

ज्ञान से मिटती है ममता, ज्ञान से ही आती समता।
ज्ञान से सन्मतिगति मिलती, त्याग की तप की भी क्षमता।
ज्ञान में दर्शन पायें हम, आज आनन्द मनायें हम ॥

प्रेम ही है इस जग में सार, प्रेम वश प्रभु लेते अवतार।
प्रेम बिन पूर्ण नहीं होते, प्यार सम्मान दान उपकार।
प्रेममय ही हो जायें हम, आज आनन्द मनायें हम ।।

ध्यान से देखें सब तन को, विचारों को चंचल मन को।
नहीं दिखता है कुछ अपना, हटाते ही अपने पन को।
'पथिक' क्या बनें बनायें हम आज आनन्द मनायें हम ।।

---

**सन्त-वचन—विनाशी पदार्थों से प्रीति को लौटा कर आत्मा की ओर अपने भीतर मोड़ देना ही परमात्मा के योगानन्द की साधना है।**

---

आनन्दमयं आनन्दमयं परमात्मन परमानन्दमयं।
मेरे प्रभु परमाधार तुम्हीं, परमात्मन परमानन्द स्वयं ।।

हो करुणामय करतार तुम्हीं अक्षय सुख के भण्डार तुम्हीं।
अज नित्य शुद्ध ओंकार तुम्हीं, परमात्मन परमानन्द स्वयं ।।

अद्वैत अनन्त अपार तुम्हीं, हो निराकार साकार तुम्हीं।
प्रभु गुप्त प्रकट सतसार तुम्हीं, परमात्मन परमानन्द स्वयं ।।

हो सुन्दर प्रेमागार तुम्हीं, जग के हो मूलाधार तुम्हीं।
हो पालक परम उदार तुम्हीं, परमात्मन परमानन्द स्वयं ।।

भवनिधि से खेवनहार तुम्हीं, करते सब विधि उद्धार तुम्हीं।
हो 'पथिक' जीवनधार तुम्हीं, परमात्मन परमानन्द स्वयं ।।

---

**सन्त-वचन—नित्य आनन्द में रहना सच्ची आस्तिकता है। परमाधार सत्ता का जिसे ज्ञान है वही आनन्द में रह सकता है जो व्यक्ति परमात्मा का आश्रय लेकर परिवर्तनशील जगत् के पदार्थों से विरक्त रहता है वही आनन्द में हैं।**

---

आनन्दरूप परमेश्वर को, ऐ मन तुम बारम्बार भजो।
सुख में दु:ख में हर रंग ढंग में, छल छोड़ पुकार-पुकार भजो ।।

चाहे तुम सीताराम कहो, या मोहन राधेश्याम कहो।
अपनी श्रद्धा रुचि भक्ति से, साकार या निराकार भजो ।।

चाहे तुम नमः शिवाय कहो, या नमो वासुदेवाय कहो।
प्रभु परमपिता जगदीश कहो, या सत्य नाम ओंकार भजो ।।

वाणी से शुभ गुण गान करो, मन से तुम सुमिरन ध्यान करो ।
सब काम धाम में लगे हुये, तुम शक्तिमान करतार भजो ।।

अखिलेश कहो परमेश कहो, देवेश रमेश महेश कहो ।
व्यापक अव्यय अविचल महान तुम 'पथिक' जीवनाधार भजो ।।

---

**सन्त-वचन—प्रपंच कथन का अभ्यास मिटाने के लिये परमार्थ विचार करना ही होगा। देहभाव धारण किया है तो आत्मभाव धारण करना ही होगा। किसी का अनहित किया है तो तप करना ही होगा। भगवान का भजन ही सार है। बाकी सब असार है। जिससे भगवदाकार वृति हो जाये वही भजन है।**

---

आनन्द सिन्धु परमेश्वर को, मन भजले बारम्बार ।
जो अखिल विश्व का जीवन है, प्रभु अनुपम सर्वाधार ।।

जिसके कारण नाना तन घर, यूँ भटक रहे हो इधर उधर ।
वह निधि तो है तेरे अंदर, तुम खोज फिरे संसार ।।

इस तन का कौन ठिकाना है, कुछ दिन में ही तो जाना है ।
क्यों माया में दीवाना है, कर ले अपना उद्धार ।।

धन है तो कुछ नेकी कर ले, बल विद्या से भक्ति भर ले ।
सद्‌गुरु का आश्रय धर ले, हो जाये भव से पार ।।

जो खुद को यहाँ फँसायेगा, वह उतना ही दुःख पायेगा ।
यह कुछ भी काम न आयेगा, जायेगा हाथ पसार ।।

जब जाग गया तो सोना क्या, यदि समझ गया तो रोना क्या ।
पा करके अब फिर खोना क्या, यह 'पथिक' मुक्ति का द्वार ।।

---

**सन्त-वचन—जितना वैराग्य प्रबल होगा उतना ही शीघ्र योग होगा। शव बने बिना शिव की प्राप्ति नहीं होती। विचार करो जो कुछ भी दीख रहा है सब मिट रहा है। जो पहले था वह अब नहीं रहा, जो कुछ है यह भी न रहेगा।**

---

इस जग में कितना ही तुम स्वच्छन्द विचर कर देख लो ।
तृप्ति न होगी फिर भी कौतुक इधर-उधर के देख लो ।।

जिस सुख को प्राणी अपनाता, वही ईश से विमुख बनाता।
सुख ही है सर्वत्र नचाता, सुखासक्त प्राणी दुःख पाता।
नहीं समझ में आये तो तुम भी जी भरकर देख लो ॥१॥

सीखो जग में सेवा करना, सीखो दुःखियों के दुःख हरना।
सीखो भव से पार उतरना, सत्पथ में अब कहीं न डरना।
जो आया है जायेगा वह, धीरज धर कर देख लो ॥ २॥

जग में जो कुछ बोया जाता, कई गुना बढ़ कर वह आता।
जो सुख देता वह सुख पाता, मानव अपना भाग्य विधाता।
यदि तुमको विश्वास न हो तो कुछ भी कर के देख लो ॥ ३॥

जिसको तुमने अपना माना, यहाँ किसी का नहीं ठिकाना।
निश्चित है जिसका छुट जाना, व्यर्थ न उससे मोह बढ़ाना।
तन में रहते हुये 'पथिक' तुम मन से मर के देख लो ॥ ४॥

---

**सन्त-वचन—मृत्यु के मूल्य पर अमृत मिलता है। सत्य को पाने के लिये ''मैं'' को मिटाना होता है। दर्शन ही वाह्य जगत् में लाया है दर्शन ही अन्तर सत्ता में ले जायेगा। मन से इन्द्रियों के सहारे जो कुछ पकड़ा जाता है उसको और उसके परिणाम को विवेक में देखा जाता है। चित्त शान्त हो, शून्य हो, निर्विकार हो तब दर्शन होता है।**

---

इस जग में जो कुछ करना है, तुम बुद्धि पूर्वक जान लो।
नश्वर तन में रहने वाले, अविनाशी को पहचान लो॥

कोई दूसरा करे न करे पर तुम नेकी करते जाओ।
देखो न किसी के दोष कहीं, सब के गुण ही गुण छान लो॥

जो कुछ दोगे वह कई गुना बढ़कर तुमको मिल जायेगा।
दुःख दो न किसी को सुख ही दो परहित का ही व्रत ठान लो॥

जो कुछ भी तुमको मिला हुआ उसका ही सदुपयोग कर लो।
बिन माँगे मिलता जायेगा लघुता छोड़ो गुरु ज्ञान लो॥

जो वस्तु तुम्हें दिखती अपनी वह साथ नहीं रह पायेगी।
तुम 'पथिक' प्रेममय परमेश्वर को सब विधि अपना मान लो॥

**सन्त-वचन—देह छूटने के प्रथम ही शक्ति समय का दुरुपयोग नहीं करते हुये तृष्णा का त्याग कर दो। विनाशी से प्रीति हटा कर अविनाशी आत्मा में लगा दो आत्मा में ही शान्त तृप्त सन्तुष्ट रहो।**

इस जगत में सत्स्वरूप की खोज लगाने वालों से पूछो, जीवन क्या है ?
सेवा को त्याग प्रेम को पूर्ण बनाने वालों से पूछो, साधन क्या है ?
है कृपा उसी परमेश्वर की जब संतों की संगति मिलती, मिलता विवेक।
श्रद्धा के सहित सन्त संगति में आने वालों से पूछो, प्रवचन क्या है ?
वैसे तो शास्त्रों वेदों के विद्वान अनेकों मिलते हैं, पर शान्त कौन ?
विद्या द्वारा उस अमृतत्व के पाने वालों से पूछो, यह तन क्या है ?
परउपदेशक तो कितने ही कुछ पढ़ सुन करके बन जाते, आचरण नहीं।
कथनानुसार अथवा कर्तव्य निभाने वालों से पूछो, निरसन क्या है ?
जब कभी अनकों मतवालों की अपनी-अपनी छनती है, सबकी सुन लो ।
फिर भेद भ्रान्ति से रहित विवाद मिटाने वालों से पूछो, मन्थन क्या है ?
निष्पक्ष विवेकीजन चिन्मय जीवन का अनुभव करते हैं, अविचल मति से ।
उन आत्मतृप्त, आनन्दामृत बरसाने वालों से पूछो, प्रशमन क्या है ?
हरि नाम कीर्तन के प्रेमी तब तक विश्राम न पाते हैं, यदि हैं सकाम ।
तुम निष्कामी प्रभु की सुकीर्ति के गाने वालों से पूछो, सुमिरन क्या है ?
हमसे तुमसे चाहे जिससे परदोषों की चर्चा सुन लो, गुण गर्व छिपा ।
अति विनयी होकर अपने दोष हटाने वालों से पूछो, वन्दन क्या है ?
जो वीतराग हैं जिन्हें मान धन भोग सुखों की चाह नहीं, जो नित्यमुक्त ।
वह 'पथिक' हितैषी सत परमार्थ दिखाने वालों से पूछो, दर्शन क्या है ?

**सन्त-वचन—जो नहीं करना चाहिये उसके त्याग से जो करना चाहिये उसके लिये शक्ति सञ्चित हो जाती है। न करने योग्य हैं ममता, अहंता, चिन्ता, हिंसा दुराचार, करने योग्य हैं मिले हुये बल का सदुपयोग, विवेक का आदर, दोषों का त्याग, सत्य से अर्थात् परमात्मा से प्रेम। जानने योग्य है अपना संग रहित स्वरूप, अपना सभी के प्रति कर्तव्य तथा वस्तुओं एवं सम्बन्धित अवस्था तथा जगत् का परिवर्तन और सुखोपभोग का परिणाम। मानने योग्य है केवल**

**परमेश्वर और उसकी अहेतुकी कृपा तथा शास्त्र एवं गुरु की कल्याण-कारी आज्ञा। संसार में मिली हुई देह को, सम्पत्ति को, योग्यता को, शक्ति सामर्थ्य को तथा सम्बन्धित व्यक्तियों को अपना न मानो सब कुछ को परमेश्वर के प्राकृतिक विधान से मिला हुआ मानो। जो स्वतः मिला है उसका विवेकपूर्वक दूसरों की सेवा सहायता में सदुपयोग करो उसका फल न चाहो।**

---

इस जग में सुखासक्त मानव, चिर शान्ति कहीं भी पा न सके ।
सारे विज्ञानी जन मिलकर, सुख को दुःखरहित बना न सके ।।

कुछ लोगों को तप संयम से, अनुकूल शक्ति मिल जाती है ।
पर वह भी व्यर्थ गई दिखती, यदि मन को वश में ला न सके ।।

जो तन्त्र, मन्त्र औषधियों से सबको निरोग कर सकते हैं ।
पर इससे क्या यदि काम, क्रोध मोहदिक रोग मिटा न सके ।।

हमने तुमने इस आकृति का, सुन्दर श्रृंगार किया लेकिन ।
यह वृत्ति वेश्याओं की सी, जब अन्तर प्रकृति सजा न सके ।।

जब तक अभिमान प्रबल रहता, तब तक निज दोष न दिखते हैं ।
आसुरी वृत्तियों के कारण, दैवी सम्पत्ति बढ़ा न सके ।।

ज्ञानोपदेश की धारा में, जो सबका मल धोने निकले ।
पर क्या प्रभाव इसका होगा, जब अपना मैल छुड़ा न सके ।।

सत की चर्चा चलती रहती, पर रमण असत् में होता है ।
तब 'पथिक' कहाँ सत्संग हुआ, यदि असत् से प्रीति हटा न सके ।।

---

**सन्त-वचन—सदा सुखोपभोग में ही मजा लेने वाले नहीं देख पाते कि अन्त में क्या सजा भोगनी पड़ेगी क्योंकि ऐसा कोई सुख है ही नहीं जिसका अन्त दुःख में न हो। जो सज्जन सुख को सेवा के द्वारा बाँटते रहेंगे वही दुःख से बच सकेंगे। सेवा करते हुये यह न सोचना चाहिये कि लोग हमारे विषय में क्या कहते हैं ? या क्या कहेंगे ? बल्कि यह देखना चाहिये कि हम क्या हैं ? और क्या हो सकते हैं।**

**सेवा सीखने की बात नहीं है किसी के सेवक होने पर स्वतः सेवा करना आ जाता है। सेवक को यही ध्यान रखना चाहिये कि जिसकी सेवा करना है उसकी रुचि क्या है और उसका हित किस प्रकार होगा ? सत्य परमात्मा नित्य प्राप्त है असत का मोह छोड़ कर सत का संग करो।**

---

इस जगत् से जाने वाले, मानो कहते जा रहे हैं।
ध्यान रखना तुम्हारे भी जाने के दिन आ रहे हैं।।

पुण्य निज हित के लिये, जो कुछ तुम्हें करना हो कर लो।
जो न कर पाये समय पर, पीछे वह पछता रहे हैं।।

किसी के दिन एक सम, जग में सदा रहते न देखा।
हँसने वाले रो रहे हैं, रोने वाले गा रहे हैं।।

यहाँ जो कुछ भी मिला है, तुम उसे अपना न मानो।
बन्धनों से मुक्ति का यह मार्ग सन्त बता रहे हैं।।

मान माया भोग सुख की, चाह ही सबको नचाती।
'पथिक' कोई त्याग के बिन, कहीं शान्ति न पा रहे हैं।।

---

**सन्त-वचन—त्याग के लिये जहाँ प्रयास है वहाँ अहंकार है, अज्ञान है। अज्ञानी त्याग करते हैं ज्ञानी मैं त्याग होता है। अज्ञानपूर्वक त्याग से, उपलब्धि शून्य त्याग से अहंकार पुष्ट होता है। अहंकार को ही आना जाना होता है। जीवन की कोई मृत्यु नहीं होती है और मृत का कोई जीवन नहीं होता है।**

---

इस दुनियाँ में सार यही है मिल जायें भगवान किसी दिन।।

नाम कीर्तन में या जप में, इन्द्रिय संयम, हठ व्रत तप में।
साधन का आधार यही है, मिल जायें भगवान किसी दिन।।

तीर्थ धाम में दान धर्म में, योग यज्ञ निष्काम कर्म में।
पापों से उद्धार यही है, मिल जायें भगवान किसी दिन।।

चतुर शिरोमणि पण्डित ज्ञानी, निश्चल चित अभ्यासी ध्यानी ।
भक्तों का उद्‌गार यही है मिल जायें भगवान किसी दिन ।।

अपने सर्वस जीवनधन से, कर्मों से वाणी से मन से ।
पथ में 'पथिक' पुकार यही है, मिल जायें भगवान किसी दिन ।।

---

**सन्त-वचन—परमात्मा के नित्य योग में आनन्द है सांसारिक भोग में सदा न रहने वाला सुख है। सुख पराश्रय से मिलता है। आनन्द स्व में होकर सत्याश्रय से सुलभ रहता है। सुख को बाहर खोजना पड़ता है आनन्द को भीतर खोदना होता है।**

---

उठो मानव आँख खोलो सो चुके हो अब न सोना ।
स्वर्ण घड़ियाँ कदाचित तुम खो चुके हो अब न खोना ।।

बहुत ही सुन्दर समय है जाग्रत जीवन बिताओ ।
कहीं भी कर्तव्य पालन मे न तुम आलस्य लाओ ।
सबल होकर बहुत दुर्बल हो चुके अब न होना ।।

मोह निद्रा में तुम्हें जो दीखता यह मधुर सुख है ।
अरे यह सब स्वप्न है बस इसी सुख का अन्त दु:ख है ।
तुम अनेकों बार अब तक रो चुके हो अब न रोना ।।

मिल रहा है वही तुम को जो कि पहले से दिया है ।
उसी का फल सामने है शुभाशुभ जैसा किया है ।
बीज अनुचित कर्म के यदि बो चुके हो अब न बोना ।।

एक हो कर बन रहे हो तुम अनेकों बेषधारी ।
कभी स्वामी कभी सेवक कभी राजा या भिखारी ।
'पथिक' क्या-क्या अभी तक तुम हो चुके हो अब न होना ।।

---

**सन्त-वचन—जागरण 'स्व' और 'पर' को पृथक् कर देता है। जागरण में भय समाप्त हो जाता है। जागरण में अनित्य देहादिक वस्तुओं से तादात्म्यता नहीं रह जाती है। जब विषय सुख में तथा सुखद वस्तुओं**

**में राग नहीं रह जाता तब साधक जाग्रत है। जड़ देह को अपने से असंग देखना जागृति है।**

---

उपदेश गुरुजनों के भुलाना नहीं अच्छा ।
अपने समय को व्यर्थ बिताना नहीं अच्छा ।।

जब संग के प्रभाव से तुम बच नहीं सकते ।
तब तो कुसंग में कहीं जाना नहीं अच्छा ।।

भोगों की अधिकता से भी होता है मन मलिन ।
तब उनमें अपनी शक्ति गंवाना नहीं अच्छा ।।

कुछ योग्यता है तुममें तो दुष्कर्म से बचो ।
अपने लिये किसी को सताना नहीं अच्छा ।।

तुम बुद्धिमान हो तो तुम्हें याद रहे यह ।
चोरी से छल से धन का कमाना नहीं अच्छा ।।

आराम चाहते हो तो लो राम की शरण ।
झूँठे सुखों में चित्त फँसाना नहीं अच्छा ।।

माया के लिये और कहीं मान के लिये ।
वैराग्य बिना ज्ञान दिखाना नहीं अच्छा ।।

जब तक नहीं होता है पूर्ण त्याग और प्रेम ।
तब तक किसी भी सिद्धि का आना नहीं अच्छा ।।

संसार में आनन्दमय भगवान के सिवा ।
ऐ 'पथिक' कहीं मन का लगाना नहीं अच्छा ।।

---

**सन्त-वचन—अपने बनाये दोषों को दूसरा कोई नहीं नहीं मिटा सकता, दोषों के त्याग करने में हम सदा स्वतन्त्र हैं। सुखासक्ति ही त्याग नहीं करने देती। सारे दोषों का जन्म जाने हुए को न मानने से होता है।**

**जहाँ तक शुभ सुन्दर का ज्ञान है उसे स्वीकार न करना और जिस अशुभ असुन्दर का ज्ञान है उसे त्याग न करना भारी अपराध है।**

उलझ मत दिल बहारों में बहारों का भरोसा क्या।
सहारे छूट जाते हैं सहारों का भरोसा क्या।।

तमन्नायें जो तेरी हैं, फुहारें हैं ये सावन की।
फुहारें सूख जाती हैं, फुहारों का भरोसा क्या।।

दिलासे जो जहाँ के हैं, सभी रंगी बहारें हैं।
बहारें रूठ जाती हैं, बहारों का भरोसा क्या।।

तू इन फूले गुब्बारों पर, अरे दिल क्यों फिदा होता।
गुब्बारे फूट जाते हैं गुब्बारों का भरोसा क्या।।

तू सम्बल नाम का लेकर किनारों से किनारा कर।
किनारे टूट जाते हैं किनारों का भरोसा क्या।।

परम प्रभु की शरण लेकर, विकारों से सजग रहना।
कहाँ कब मन बिगड़ जाये, विकारों का भरोसा क्या।।

'पथिक' तू अक्लमन्दी पर, विचारों पर न इतराना।
जो लहरों की तरह चंचल विचारों का भरोसा क्या।।

---

**सन्त-वचन—सदा सुख भोग में ही मजा लेने वाले नहीं देख पाते कि अन्त में क्या सजा भोगनी पड़ेगी क्यों कि ऐसा कोई सुख है ही नहीं जिसका अन्त दुख में न हो। जो सज्जन सुख को सेवा के द्वारा बाँटते रहेंगे वही दुःख से बच सकेंगे।**

---

एक अनन्त अपार हो परमात्मन मेरे, अनुपम सर्वाधार हो परमात्मन मेरे।।
तुम अविनाशी घट-घट वासी, सबमें सबके पार हो परमात्मन मेरे।।
तुम लीलाधर अद्भुत सुन्दर, निराकार साकार हो परमात्मन मेरे।।
परमप्रेममय अविचल अव्यय, जगदीश्वर करतार हो परमात्मन मेरे।।
तुमहीं दाता सब विधि त्राता, गुप्त प्रगट सतसार हो परमात्मन मेरे।।
तुम जीवनधन सदानन्दघन, परम शक्ति भण्डार हो परमात्मन मेरे।।
तुम सर्वेश्वर हे परमेश्वर, 'पथिक' जीवनाधार हो परमात्मन मेरे।।

**सन्त-वचन—विवेकयुक्त जीवन ही मानव जीवन है। त्याग, ज्ञान और प्रेम की पूर्णता ही जीवन की पूर्णता है। आसुरी गुणों से जीवन अशुद्ध होता है। दैवी गुणों से जीवन शुद्ध होता है। सेवा और तप के द्वारा जीवन की अशुद्धि दूर होती है।**

एक ईश्वर के गुणगान गाते चलो, अपने मन को उन्हीं में लगाते चलो ।।

जो समय है उसे व्यर्थ खोना नहीं, मोह निद्रा में जग बीच सोना नहीं ।
भाग्यवश कष्ट आयें तो रोना नहीं, भूल से अब सुखासक्त होना नहीं ।
अपने कर्तव्य सारे निभाते चलो ।। एक०।।

कभी कुविचार अन्तर में लाओ नहीं, भूलकर भी कुसंगति में जाओ नहीं ।।
किसी की वस्तु में मन लुभाओ नहीं, किसी के चित्त को तुम दुखाओ नहीं ।
मान माया के बन्धन छुड़ाते चलो ।। एक०।।

पुण्य के लिये तुम पूर्ण दानी बनो, गुरु कृपा के लिये निरभिमानी बनो ।
भक्ति चाहो तो प्रभु के ही ध्यानी बनो, मुक्ति के लिये सत् तत्वज्ञानी बनो ।
त्याग अनुराग उर में बढ़ाते चलो ।। एक०।।

व्यर्थ चिन्तन से निज चित्त को मोड़कर, लोभ को भी सदा के लिये छोड़कर ।
कामना की कठिन बेड़ियाँ तोड़कर, परम प्रभु से अहंकार को जोड़ कर ।
'पथिक' अपने को प्रभुमय बनाते चलो ।। एक०।।

**सन्त-वचन—मुक्त होना चाहते हो तो देह के स्वामी को जान लो और भक्त होना चाहते हो तो संसार के स्वामी को जान लो।**

ऐ पथिक तू क्या न पाता।।
किस लिये कितने युगों से यहाँ बारम्बार आता ।। ऐ०।।

स्वर्ग में जा खोज डाल नर्क का भी पड़ा पाला ।
आज इतना देख सुनकर भी न कुछ सन्तोष लाता ।। ऐ०।।

कभी विस्तृत राज्य पाकर विपुल धन जन बल बढ़ाकर ।
यहाँ से चलते समय बस सदा खाली हाथ जाता ।। ऐ०।।

वही मन की वासनायें उन्हीं पैरों में घुमायें।
जहाँ से जाता वहीं पर पुनः क्यों चक्कर लगाता ।। ऐ०।।

बार-बार विचार कर तू मोह दल-दल पार कर तू।
सत्य चिन्तन भूल करके क्यों असत के गीत गाता ।। ऐ०।।

सत् नियम पहिचान ले तू शुद्ध विधि को जान ले तू।
'पथिक' पतनोत्थानमय निज भाग्य का तू ही विधाता ।। ऐ०।।

---

**सन्त-वचन—जो संसार में किसी को मिलता है वह सदा नहीं रहता है, इसलिये मिले हुए को अपना मानकर मोह लोभ अभिमान न बढ़ाओ।**

---

ऐ मन तुम गाओ गान यही, श्री हरिशरणम् श्री हरिशरणम्।
दिखता है भाव महान यही, श्री हरिशरणम् श्री हरिशरणम् ।।

चाहे जितना दुख सुख होवे, तू कभी न सत्य विमुख होवे।
निकले अन्तर से तान यही, श्री हरिशरणम्, श्री हरिशरणम् ।।

रहना घर में हो या बन में, चिन्ता न रहे कोई मन में।
है सहज सुलभ शुभ ज्ञान यही, श्री हरिशरणम् श्री हरिशरणम् ।।

सुख साम्राज्य पाये तो क्या, या सर्वस खो जाये तो क्या।
भक्तों को तो अभिमान यही, श्री हरिशरणम् श्री हरिशरणम् ।।

फल ये ही मानव जीवन का सम्बन्ध छोड़ वैभव धन का।
पा जाये परम स्थान यही, श्री हरिशरणम् श्री हरिशरणम् ।।

मिलती इससे शुचि सदगति है, यह कितनी सुन्दर सन्मति है।
बस रहे 'पथिक' का ध्यान यही, श्री हरिशरणम् श्री हरिशरणम् ।।

---

**सन्त-वचन—मन से सर्वसमर्थ दाता की शरण लो, बुद्धि दृष्टि से अनुभव करो कि जिसका आश्रय कभी छुटता ही नहीं वही परमात्मा है वह निरन्तर मिला ही रहता है। श्रीमद्भागवत में श्री हरिशरणम् अथवा**

**हरयेनमः अथवा श्री हरये परमात्मने नमः इन नामों के जाप की महान महिमा वर्णित है।**

---

ए मन तुम चलते फिरते बैठे गाओ प्रभु के नाम ।।
गोविन्द ओम नारायण या सच्चिनदानन्द श्री राम ।।

नामोच्चारण में सर्वदा शुभाशुभ अर्थ छिपा रहता ।
साधक पावन नामों द्वारा ही परम सिद्धि गहता ।
नाम के सहारे दुःख सिन्धु पापी तर गये तमाम ।।

द्रौपदी दुखी हो कृष्ण नाम जिस समय पुकारा था ।
दुःशासन चीर खींचते हुए सभा में हारा था ।
चीर के रूप में उतर रहे थे स्वयं श्री घनश्याम ।।

गज लड़ता रहा जहाँ तक तन जन बल की आशा थी ।
उस समय शरण ली प्रभु की जब सब ओर निराशा थी ।
वह पूरा नाम न ले पाया कर गया सुदर्शन काम ।।

नाम के सहारे कभी अटल पद ध्रुव ने पाया था ।
प्रहलाद भक्त ने नामी को खम्भ में बुलाया था ।
नरसिंह रूप से हिरण्यकश्यप को भेजा निज धाम ।।

पापी अभिमानी प्रभु के पावन नाम न ले पाते ।
वे कर्म जाल में बंधे हुए जग में आते-जाते ।
तुम 'पथिक' प्रेम से प्रभु को ध्याओ निश दिन प्रातः शाम ।।

---

**सन्त-वचन—सांसारिक विनाशी नामों के सहारे विनाशी रूपों से सम्बन्ध जुड़ जाता है। इसलिये अविनाशी प्रभु के नामों द्वारा अविनाशी प्रभु से सम्बन्ध दृढ़ होता है। पवित्र नामों के स्मरण से**

**पवित्रता आती है। नामी से योग स्थापित करने का साधन नाम स्मरण है।**

---

ऐ मन हरि के नाम न भूलो परमेश्वर सुख धाम न भूलो ।।

अरे जागो यहाँ सुख ही दुख है किस मोह के स्वप्न में सो रहे हो ।
किस सुख के लिये ऐसे चाव से परपंच के भार को ढो रहे हो ।
छुट जायेंगे ये तो यहीं तुमसे जिनमें अति आसक्त हो रहे हो ।
यहाँ आत्मोद्धार का जो समय था पथिक यों ही उसे क्यों खो रहे हो ।
ऐ मन हरि के नाम न भूलो परमेश्वर सुखधाम न भूलो ।।

इस थोड़े दिवस के जीवन में ऐ 'पथिक' किसी को सताओ नहीं ।
उपकार नहीं कर सकते तो निज स्वार्थ से पाप कमाओ नहीं ।
धन, जन बल और विद्या बल पै अभिमान में आ इतराओ नहीं ।
निज दैव से सुख-दुख हो सो हो मन से भगवान भुलाओ नहीं ।
ऐ मन हरि के नाम न भूलो परमेश्वर सुखधाम न भूलो ।।

भगवान से प्रेम जो करते नहीं वह मायिक मोह में भूलते हैं ।
विषयानन्द मुग्ध उसी हिय में नाना विधि दुख शूल हूलते हैं ।
वे अश्रु और मुस्कान के बीच सदा मध्यस्थ की भाँति ही झूलते हैं ।
आश्चर्य पथिक हो सत्य विमुख फिर भी अभिमान में फूलते हैं ।
ऐ मन हरि के नाम न भूलो परमेश्वर सुख धाम न भूलो ।।

कभी भूलो नहीं अपने प्रभु को उनके गुणगान ही गाते रहो ।
हर काम धाम में बैठे हुए चलते हुए नाम को ध्याते रहो ।
आना है तुम्हें हरि प्रेमियों में, तो प्रपंच का संग हटाते रहो ।
जो चाहते हो सुख शान्ति पथिक सत्संग से प्रेम बढ़ाते रहो ।
ऐ मन हरि के नाम न भूलो परमेश्वर सुखधाम न भूलो ।।

**सन्त-वचन—शरण ही सफलता की कुञ्जी है तुम उस महान की शरण लो जो शरणागत को महान बनाने में समर्थ हो। आस्तिक एक की, नास्तिक अनेक की शरण लेता है।**

ऐ मेरे मन भावन श्याम, अकथनीय प्रिय पावन श्याम ।।

परम सुहृद सुखकारी तुम हो, प्रियतम हृदयबिहारी तुम हो ।
सबके हृदय लुभावन श्याम ।। ए मेरे०।।

अति कोमलचित शान्तिधाम तुम, भक्तिद मुक्तिद पूर्णकाम तुम ।
संशय शोक नशावन श्याम ।। ए मेरे०।।

सर्वगुणाश्रय गुणातीत तुम, पतित उधारन अति पुनीत तुम ।
अन्तर तिमिर मिटावन श्याम ।। ए मेरे०।।

जीवन के प्रभु जीवन तुम हो, 'पथिक' प्राण धन सर्वस तुम हो ।
चंचल चित्त चुरावन श्याम ।। ए मेरे०।।

**सन्त-वचन—तुम्हारे पास वही आता है जिसके तुम भागीदार हो। तुम्हारे पास से वही जाता है जो अब तुम्हारे भाग का नहीं है। आगे तुम्हें वही मिलेगा जो कुछ तुम दोगे। इसलिये अब शुभ सुन्दर का दान करो और अशुभ असुन्दर का त्याग करो।**

ओ आने वालो इतना समझ लो, इस जग से तुम को जाना ही होगा ।
यदि रह गई हैं कुछ वासनायें, उनके लिये फिर आना ही होगा ।।

जब तक किसी पर अधिकार रख कर, जितना अधिक तुम सुख भोगते हो ।
मानो न मानो जीवन में अपने, पुण्यों की पूँजी गँवाना ही होगा ।

दानाधिकारी बन कर किसी से, श्रद्धा के बाहर यदि धन लिया है ।
तुम ले के देना भूलो भले ही, जो ऋण लिया वह चुकाना ही होगा ।

जिससे किसी को दुख हो रहा हो, ऐसा असत् कर्म होने न पाये ।
सुख के लिये जो दुख दे किसी को, उसको कभी दुख उठाना ही होगा ।

तुम दूसरों को वह देते रहना, जो दूसरों से स्वयं चाहते हो।
जैसा भी दोगे वैसा प्रकृति से, कई गुणा तुमको पाना ही होगा।।

कुछ जानना है तो अपने को जानो, मानना है तो प्रभु को ही मानो।
करना है तो सबकी सेवा करो तुम, जीवन किसी विधि बिताना ही होगा।।

छोड़ो अहंता ममता जगत की, परमात्मा से ही प्रीति जोड़ो।
देखो पथिक तुम जिनकी शरण हो, उन पर ही विश्वास लाना ही होगा।।

---

**सन्त-वचन—जो अपने को जान लेता है वह मुक्त होता है। जो अपने परमाश्रय प्रभु को अपना मान लेता है वह भक्त होता है जो स्वार्थ छोड़कर सेवा करता रहता है वही शान्त स्वस्थ होता है। दृश्य से दृष्टा की ओर चलो, जड़ता से उठकर नित्य चिद्घन में आ जाओ सत्य की विस्मृति में ही संसार का प्रभाव है।**

---

ओ देखने वाले तू अपने, ज्ञान को भी देख ले।
उस निज स्वरूप ज्ञान के, अज्ञान को भी देख ले।।

अपने पतन को देख ले उत्थान को भी देख ले।
तू ऐसी दृष्टि प्राप्त कर भगवान को भी देख ले।।

सुनते हुए कहते हुए, कुछ जानते हुए भी।
तू अपने अहंकार के अभिमान को भी देख ले।।

परमात्मा के ध्यान में जब मन नहीं लगता हो।
वह लगा हुआ है कहीं उस ध्यान को भी देख ले।।

जिसमें सभी आरम्भ है और अन्त है जिसमें ही।
उस सर्वमय अनन्त शक्तिमान को भी देख ले।।

नश्वर को सत्य मानना, यह तो है अविद्या ही।
विद्वान है तो नित्य विद्यमान को भी देख ले।।

जो कुछ तुझे मिला है, उसका कोई दाता है।
उसकी दया को और, उसके दान को भी देख लो ।।

इस द्वन्द्वमय जगत् में अब सावधान रहकर।
तू 'पथिक' उस महान के सुविधान को भी देख ले ।।

---

**सन्त-वचन—बाह्य नेत्रों से केवल विनाशी रूप पकड़ा जाता है। रूप नेत्रों का विषय है। बुद्धिदृष्टि से विषय के परिणाम का ज्ञान होता है। स्वयं में सत्य के दर्शन के लिये प्रज्ञा की जागृति परमावश्यक है, प्रज्ञा की जागृति समाधि से ही सम्भव है। समाधि के लिये ध्यान साधो।**

---

ओ प्रेमी प्रभु के गुण गा करके देखो।
प्रभु को स्वयं में ही आकर के देखो ।।

तुम जिस पर मोहित हो, अरे यह नश्वर तन है।
किसी समय छुट सकता जो दिखता धन है ।।
अपने को पहिचानो यह सद्गुरु प्रवचन है।
अपने में नित्य सुलभ सत् चित आनन्द घन है ।।
अन्तर में आसन जमा करके देखो।
ओ प्रेमी प्रभु के गुन गाकर के देखो ।।

जग में जो मिलता है साथ नहीं रहता है।
जिससे सुख मिलता है उसको ही चहता है ।।
तन-मन से तन्मय हो 'मैं' मेरा कहता है।
यही ग्रन्थि माया की जिससे दुख सहता है ।।
ममता अहंता मिटा करके देखो।
ओ प्रेमी प्रभु के गुन गा करके देखो ।।

यह सुख-दुःख है सपने जागो आँखें खोलो।
आत्म ज्ञान प्राप्त करो इधर-उधर मत डोलो ।।
जड़ चेतन भिन्न-भिन्न एक भाव मत तोलो।
परम शान्ति चाहो तो निज में स्थिर हो लो ।।
आश्रय में विश्राम पा करके देखो।
ओ प्रेमी प्रभु के गुन गा करके देखो ।।

जो कुछ भी मिला तुझे साथ नहीं जायेगा।
वासना रहेगी तो लौट-लौट आयेगा।।
मन के इन भोगों में तृप्ति नहीं पायेगा।
शक्ति समय खोयेगा धोखा ही खायेगा।।
योग से प्रज्ञा जगा करके देखो।
ओ प्रेमी प्रभु के गुन गा करके देखो।।

अभिमानी को दीन होना पड़ेगा यहाँ।
कामी को बल बुद्धि खोना पड़ेगा यहाँ।।
लोभी को किसी दिन रोना पड़ेगा यहाँ।
कर्मों का कठिन बोझ ढोना पड़ेगा यहाँ।।
उचित नहीं तुम भी यही जाकर के देखो।
ओ प्रेमी, प्रभु के गुन गा करके देखो।।

मैं प्रभु का प्रभु मेरे ऐसा अभिमान रहे।
मिला हुआ अपना नहीं है—यह ज्ञान रहे।।
प्रभु सब में सब प्रभु में-ऐसा दृढ़ ध्यान रहे।
कण-कण में प्रभु की ही सत्ता का भान रहे।।
'पथिक' यही सुरति मति बना करके देखो।
ओ प्रेमी प्रभु के गुन गा करके देखो।।

---

**सन्त-वचन—सुन-सुन कर अज्ञान में मन द्वारा जो कुछ पकड़ा जाता है उसी को ज्ञान रूपी प्रकाश में बुद्धि दृष्टि से देखा जाता है। भक्त होने के लिये प्रभु से मानी हुई दूरी को देखो। मुक्त होने के लिये माने हुए सांसारिक सम्बन्ध को देखो। शान्त होने के लिये अशान्त बनाने वाली वासना तृष्णा को देखो।**

---

ओम आनन्दम् ओम आनन्दम् ओम आनन्दम् गान करो तुम ।।
जो सत चिन्मय सर्व साक्षी ज्ञान रूप में ध्यान धरो तुम ।।

निर्मम अनासक्त हो जाओ सब कुछ छुट जाने से पहले ।
अभी नित्य जीवन को जानो, कभी मृत्यु आने के पहले ।
प्राप्त शक्ति सम्पत्ति योग्यता का न कहीं अभिमान करो तुम ।।

पाँच तत्व के नश्वर ढाँचे को तुम अपना रूप न मानो ।
इसमें क्षण-क्षण परिवर्तन है अपने स्त्स्वरूप को जानो ।
जो उत्पत्ति विनाश रहित है उसकी ही पहिचान करो तुम ।।

जो खोया ही नहीं उसे क्यों खोज रहे हो निज को खोकर।
खोजो नहीं स्वयं में खोदो दृश्य जगत् से असंग होकर ।
तैरो नहीं शून्य में डूबो परमाश्रय का ज्ञान करो तुम ।।

मन जब तन्मय जड़ तन में है, तब भी तुम नित चेतन में हो ।
मन जब सन्तापित शोकित है, तब भी तुम आनन्द घन में हो ।
बाहर नहीं स्वयं में सत्यामृत का अनुसन्धान करो तुम ।।

मन जब भूत भविष्यत् में है निज को वर्तमान में देखो ।
मन जब लघु में अटक रहा हो अपने को महान में देखो ।
पथिक रुको बस जहाँ हो वहीं आनन्दामृत पान करो तुम ।।

---

**सन्त-वचन—ज्ञान अज्ञान दोनों से मुक्त होने में आनन्द है। मन से मुक्त होते ही साधक स्वयं में आ जाता है। आनन्द को जानना और स्वयं आनन्द न होना-यही दु:ख है। ऊपर जिनकी दृष्टि है भीतर दर्शन से वही वञ्चित हैं। स्वयं के आन्तरिक सत्य को जिसने नहीं जाना वह दरिद्र ही बना रहता है।**

---

कब पाऊँ तुमको जीवन धन ।।
रहते हैं तुम बिन बिकल प्रान, भाये न किसी का ज्ञान ध्यान ।
आ चुका तुम्हारी शरणागत सर्वस्व तुम्हीं में है अरपन ।।

हो रहा आज यह हृदय दीन, तुम अति पावन मैं अति मलीन ।
हे प्रभु किस विधि सन्मुख आऊँ, लेकर अपना कलुषित तन-मन ।।

अब इतनी कर दो कृपा नाथ, दे दो अपना वह पुण्य हाथ ।
जिसका बल पाकर धन्य बनूँ, है अपने मन की यही लगन ।।

हे सुन्दर हे प्रेमावतार, हे करुणामय सुन लो पुकार ।
मैं भिक्षु 'पथिक' हूँ तेरा ही मिलनाशा में नित रहूँ मगन ।।
कब पाऊँ तुम को जीवन धन ।।

**सन्त-वचन—जिसके योगानुभव से भय, चिन्ता, दुःख मिट जाते हैं वही महान है। जगत् दृश्य से दृष्टि हटा लेने पर उस महान प्रभु का अनुभव होगा।**

कल्याण दुःखी जीवन का बस भगवान कृपा से ही होता ।
जिससे भव भ्रान्ति मिटा करती वह ज्ञान कृपा से ही होता ।।

जिससे निज दोष दिखा करते, पापों अपराधों से डरते ।
उस सद्विवेक का प्रेम सहित सम्मान कृपा से ही होता ।।

अच्छे दिन बीते जाते हैं गुरुजन सब विधि समझाते हैं ।
भोगस्थल से योगस्थल में प्रस्थान कृपा से ही होता ।।

शीतलता जिससे आती है सारी अतृप्ति मिट जाती है ।
वह नित्य प्राप्त है प्रेम सुधा पर पान कृपा से ही होता ।।

यद्यपि है सुलभ सभी साधन, सब साध न पाते साधक जन ।
जो जड़मय है वह चिन्मय हो, वह ध्यान कृपा से ही होता ।।

वह कृपा निरन्तर रहती है कुछ भी न किसी से चहती है ।
हम 'पथिक' उसे देखें ऐसा उत्थान कृपा से ही होता ।।

**सन्त-वचन—प्रश्न करो और अन्तस में ही उत्तर की प्रतीक्षा करो। मौन रहकर शून्य प्रतीक्षा ही समाधान का साधन है। सत्य के सम्बन्ध में बुद्धि से जाना जाता है परन्तु सत्य की अनुभूति के लिये चेतना में शान्त होना आवश्यक है। बुद्धि चुप होती है तो अनुभूति बोलती है। विचार मौन हों तो विवेक जाग्रत होता है।**

कहाँ कब मिलोगे ऐ स्वामी हमारे ।
यहाँ हम तरसते दरश को तुम्हारे ।।

भुलाओ न भगवन पतित जान करके ।
शरण आ चुका हूँ सहारे तुम्हारे ।।

हमारी तरह आपके हैं अनेकों ।
यहाँ तो तुम्हीं एक नैनों के तारे ।।

यही आश विश्वास मन में समाया।
तुम्हारी कृपा से मिटें क्लेश सारे॥

बुरा या भला यह 'पथिक' है तुम्हारा।
दरश को हृदय धाम में प्राण प्यारे॥

---

**सन्त-वचन—संसार से विमुख होकर प्रियतम प्रभु की ओर जाना ही सच्चा भजन है। सुख से विरक्त बनो, व्यर्थ चेष्टाओं का निरोध करो, व्याकुलता की शरण लो, गुरु आज्ञा को पूर्ण करो।**

---

कहीं भी चैन जो लेने न दे वह चाह सच्ची है।
रहे उनकी फिकर हर दम यही परवाह सच्ची है॥

इसी को हम असर समझें कसर बिल्कुल न रहे जाये।
विरह का दर्द भड़काती रहे वह आह सच्ची है॥

बहुत कुछ पाठ पूजा और तप व्रत करके यह समझे।
विकल होकर के रोना ही मिलन की राह सच्ची है॥

यहाँ जीते हुए ही मुक्ति मिलती मौत मरती है।
ये पहुँचे प्रेमियों की ही कही अफवाह सच्ची है॥

कहीं बाहर न भटको अब तो खोजो उनको अपने में।
'पथिक' यह देह मन्दिर और दिल दरगाह सच्ची है॥

---

**सन्त-वचन—सच्ची चाह ही मिलन की राह बना देती है तथा चित्त को स्थिर करती है। जो प्रियतम के लिये त्याग तप तथा शुभ सुन्दर का दान नहीं कर पाता उसमें सच्ची चाह नहीं है।**

---

क्या अनोखी शान है गुरुदेव के दरबार में।
खुले हाथों ही दया का दान है इस द्वार में॥

तर रहे कितने पतित शठ, ज्ञान-शून्य सुधर रहे।
भर रहे शुचि शान्ति से गुरु ज्ञान के आधार में॥

जिसने देखा है वही बस जानता इस बात को।
कह नहीं सकते कि क्या जादू है इनके प्यार में।।

कीर्ति मति गति बुद्धि वैभव, जिसको जो कुछ है मिला।
गुरु कृपा से ही सुलभ सब कुछ हुआ संसार में।।

प्रेममय भगवान प्रियतम हृदय के अतिशय सरल।
रीझ जाते हैं 'पथिक' के तनिक से उद्गार में।।

---

**सन्त-वचन—परम प्रभु की शरण लेकर जब अनुकूल सुख मिले तब उनकी दया को देखो और जब प्रतिकूलता आती जाये दुख मिले तब कृपा का अनुभव करो।**

---

क्या करें भगवन बता दो ।।
तिमिर घोर दिखा रहा है प्रभु मिटा दो।।

दोष अन्तर में भरे हैं, हार कर इनसे डरे हैं।
दुर्दशा हैं कर रहे, इनको हटा दो।।

उम्र बीती जा रही है, मृत्यु सन्मुख आ रही है।
कुछ न कर पाया, तुम्हीं बिगड़ी बना दो।।

और अब में कहाँ जाऊँ, निज व्यथा किसको बताऊँ।
दया निधि करके दया, दर्शन दिखा दो।।

सुनी है महिमा तुम्हारी, तुम्हें कहते दुखहारी।
शरण हूँ मैं 'पथिक' मेरा भय भगा दो।।

---

**सन्त-वचन—जिस प्रकार सुख उदार होने के लिये मिला है उसी प्रकार दुख सुखोपभोग से मुक्त होने के लिये मिला है। विचार से उत्पन्न दुख उन्नति का कारण होता है। दु:ख दोषों को मिटा कर स्वयं मिट जाता है।**

---

किस तरह मन को मनाऊँ ।।
मलिनता अति छा रही कैसे मिटाऊँ।

पूर्व सञ्चित वासनायें, नित्य नूतन आयें जायें।
बंधा मायापाश में अति दु:ख उठाऊँ।। किस०।।

विजयदायिनि शक्ति के बिन, प्रभुचरण में भक्ति के बिन।
मोहवश उलझनों में जीवन बिताऊँ।। किस०।।

व्यर्थ बीते जा रहे दिन, बताओ हे नाथ तुम बिन।
शून्यवत संसार में किसको बुलाऊँ।। किस०।।

तुम्हीं हे प्रभु खबर लेना, सुखद शान्ति सुज्ञान देना।
मैं 'पथिक' कैसे तुम्हारे पास आऊँ।। किस०।।

---

**सन्त-वचन—आस्तिक के जीवन में चिन्ता, विलाप भय का स्थान नहीं रहता। जो हर काल में है उसे जानना आस्तिकता है। जो हर काल में नहीं है उसे अपना मानना नास्तिकता है।**

---

किस विधि ज्ञान चक्षु को खोलें।
हे प्रभु हमको यही बता दो, अन्तस में आलोक दिखा दो।
कब तक अन्धकार में रहकर, सत परमार्थ टटोलें।।

जो कुछ इन आँखों से देखा, वह सब विद्युत की सी रेखा।
है प्रतीति पर प्राप्ति कुछ नहीं किस से किस को तोलें।।

सावधान रहकर अनर्थ से, शक्ति बचायें सदा व्यर्थ से।
मोह लोभ से सने हुए निज, अन्तस्तल को धो लें।।

दान त्याग तप से न डरें हम, जग प्रपञ्च से अब न मरें हम।
बचें पाप से पुण्य करें नित, सत्य मधुर प्रिय बोलें।।

जग में बन्धन दु:ख न सहें हम, निज में ही सम शान्त रहें हम।
'पथिक' विनाशी का संग तजकर अविनाशी संग हो लें।।

---

**सन्त-वचन—आँख कान मुख ढाँपि के नाम निरञ्जन लेय।**
**अन्तर के पट तब खुलें जब बाहर के पट देय।।**
**मन पवना बस कीजिये ज्ञान युक्ति से रोक।**
**सुरति बाँध सुस्थिर करो सूझे काया लोक।।**

**हृदय में ध्यान रखकर प्रेम सहित नाम जप से अथवा आज्ञा चक्र में सुरति योग द्वारा ध्यान से अन्तर में ज्ञान चक्षु खुल जाते हैं।**

---

कौन जतन प्रभु तुमको पाऊँ ।

प्रेम ज्ञान नहिं, योग ध्यान नहीं ।
पुण्यवान नहिं किहि बल जाऊँ ।।

चरित विमल नहिं, मन निश्छल नहिं ।
विद्या बल नहिं कसत रिझाऊँ ।।

शील सुमति नहिं, शान्ति सुकृति नहिं ।
त्याग विरति नहिं, काह दिखाऊँ ।।

पथिक विरह दुख विकसत ना मुख ।
कतहुँ न कछु सुख दिवस बिताऊँ ।।

---

**सन्त-वचन—निराशा दासता से मुक्त करती है। निराशा के बिना निर्मोहिता नहीं आती। संसार से निराशा होने पर ही कोई भगवद्भजन कर सकता है।**

---

कृपा ऐसी हो अंहकार भूल जायें हम ।
घृणा विद्वेषमय विचार भूल जायें हम ।।

कुछ बुराई न करें किसी को बुरा न कहें ।
सदा बुराई का प्रचार भूल जायें हम ।।

बुरे के साथ भी अब रह सकें भले होकर ।
किसी प्रतिकूल का प्रतिकार भूल जायें हम ।।

हमारे द्वार पै यदि शत्रु भी मिलने आये ।
दें उसे प्यार, तिरस्कार भूल जायें हम ।।

सदा कुछ भी न रहेगा सहारा किस का लें ।
छूट जायेंगे जो आधार भूल जायें हम ।।

अपना कर्तव्य न भूलें कहीं प्रमादी बन।
किसी पर अपना जो अधिकार भूल जायें हम ।।

बिना प्रयास के जो ध्यान में आते रहते।
पंचभूतों के वे आकार भूल जायें हम ।।

त्याग हो जाये मोह ममता का शांति मिले।
मन से माना हुआ संसार भूल जायें हम ।।

ध्येय है ज्ञेय है अविनाशी देहातीत स्वरूप।
वस्तु के प्रति ममत्व प्यार भूल जायें हम ।।

भूलते आये हैं परमार्थ की बातें अब तक।
जगत् में स्वार्थ का व्यवहार भूल जायें हम ।।

याद रखें सदा उस सत्य को जिसमें रहते।
'पथिक' असत् को वार पार भूल जायें हम ।।

---

**सन्त-वचन—नित्य ज्ञान में अंहकार को देखो। अंहकार में ही सारी दरिद्रता भरी है यह सदा भिखारी ही बना रहता है। अंहकार का ज्ञान अति कठिन है परन्तु ज्ञान का अहंकार अति सरल है।**

---

कृपा है तभी ऐसा अवसर मिलेगा।
जो अब कर न पाये तो कब कर मिलेगा ।।

गुरुजन जगाते हैं उठो जीव जागो।
भोगभूमि महा दुखद चलो शीघ्र भागो ।।
राग द्वेष लोभ मोह सभी दोष त्यागो।
देते रहो जो भी बने किसी से न मांगो।
समय निकल जाने पर फिर न घर मिलेगा ।।

जगत् में सभी को काल खा रहा है।
कुछ गोद कुछ मुख मध्य जा रहा है।
कौन है जो काल से बच पा रहा है।
ध्यान रहे तुम्हारा भी समय आ रहा है।
शरणागत भक्त को अभय वर मिलेगा ।।

जहाँ तक शक्ति पर उपकार करना।
दया प्रेम भाव से सबको प्यार करना।
असत् से विमुख हो सद्विचार करना।
महापुरुषार्थ पञ्चकोष पार करना।
तभी तुम्हें क्षर के परे अक्षर मिलेगा।।

तुम बुद्धियोगी बनो नित्य गुरु ज्ञान लो।
अपना नहीं है कुछ जग में ये जान लो।
एक परमात्मा को सर्वस्व मान लो।
गुरु ज्ञान द्वारा निज रूप पहिचान लो।
'पथिक' भव सिन्धु से तभी तर मिलेगा।।

---

**सन्त-वचन—सत्य के लिए, धर्म के लिए, पुण्य दान के लिए, त्याग एवं प्रेम के लिए अवसर पर सावधान रहो। आलसी, प्रमादी, सुखासक्त, अहंकार से विमूढ़ बुद्धि वाले अवसर का सदुपयोग नहीं कर पाते। शक्ति के रहते ही ज्ञान, ध्यान, त्याग, प्रेम को पूर्ण करो।**

---

खोजन हारा खोज लगाये, तुम मुझ में हो मैं तुममें हूँ।
जो जाने सोई यह गाये तुम मुझ में हो मैं तुममें हूँ।।

कहाँ-कहाँ पर भूले भटके, बंद रहे पर अंतर घट के।
अब तक हम यह समझ न पाये तुम मुझ में हो मैं तुम में हूँ।।

खोज फिरे मंदिर मूरत में मुग्ध हुए अपनी ही कृति में।
दृष्टि खुली तो यही दिखाये तुम मुझमें हो में तुममें हूँ।।

कोई तुमको निर्गुण माने कोई तुम को सगुण बखाने।
अकथ विश्वमय रूप बनाये तुम मुझमें हो मैं तुममें हूँ।।

तुम ऐसे हो या वैसे हो, जो कुछ भी हो या जैसे हो।
'पथिक' यही आनन्द मनाये तुम मुझमें हो मैं तुममें हूँ।।

**सन्त-वचन—अपने में ही अपने प्रियतम को देखना दूरी मिटाना है। जिसके बिना तुम रह न सको उसे ही अपना प्रेमपात्र समझो।**

गुरु कृपा से ही यह सद्विचार आया।
अब हमें और कुछ भी नहीं चाहिये।
मैं न कर पाया जो वह सुधार आया।
अब हमें और कुछ भी नहीं चाहिये ॥१॥

कामनाओं के पीछे बहुत दुख मिला।
कामना पूर्ति का कुछ क्षणिक सुख मिला।
कामना छोड़ सुख दुख के पार आया।
अब हमें और कुछ भी नहीं चाहिये ॥ २॥

यहाँ कितना ही ऐश्वर्य धन क्यों न हो।
सुयश सम्मान सुन्दर तन क्यों न हो।
समझ में यह सभी कुछ निस्सार आया।
अब हमें और कुछ भी नहीं चाहिये ॥ ३॥

खोज में जिसकी अब तक भटकता रहा।
वह वहीं था जहाँ मैं अटकता रहा।
बाद मुद्दत के आखिरी द्वार आया।
अब हमें और कुछ भी नहीं चाहिये ॥ ४॥

जहाँ आकर कोई रंक रहता नहीं।
तृप्त हो जाता फिर कुछ भी चहता नहीं।
मेरे सन्मुख वही दरबार आया।
अब हमें और कुछ भी नहीं चाहिये ॥ ५॥

अपने में अपने प्रभु का पता मिल गया।
प्राप्त की प्राप्ति से अब हृदय खिल गया।
तब पथिक में यही उद्गार आया।
अब हमें और कुछ भी नहीं चाहिये ॥ ६॥

**सन्त-वचन—संसार में कुछ चाहने का परिणाम बंधन है चाहों के त्याग का फल मुक्ति है। जिसने चाह का त्याग किया उसे सभी चाहते हैं, अचाह में ही शान्ति है।**

गुरुजन जो कुछ कह जाते हैं तुम उसे भुलाओगे कब तक ।।
देखना यही है इस जग में तुम चैन मनाओगे कब तक ।।

अगणित अभिमानी चले गये माया ममता से छले गये ।
वे ले न गये कौड़ी संग में तुम लोभ बढ़ाओगे कब तक ।।

जो गया न अब वह आयेगा जो है वह निश्चय जायेगा ।
जब कोई सदा न रह सकता तब तुम रह पाओगे कब तक ।।

जिसको गाकर रोना होता जिसको पाकर खोना होता ।
उस नश्वर वैभव सुख के तुम यह गीत सुनाओगे कब तक ।।

मिलती है परम शांति जिससे मिटती है दुखद भ्रांति जिससे ।
ऐ 'पथिक' उसी परमेश्वर की तुम शरण न आओगे कब तक ।।

**सन्त-वचन—तुम भले ही ध्यान न दो परन्तु दुख संसार में इसीलिये है कि तुम विनाशी सुख से विरक्त होकर आनन्द को प्राप्त करो।**

गुरुदेव अब तो दया करो ।।

कितने दिन से भटक रहे हैं, दुख के कांटे खटक रहे हैं ।
कहाँ कहाँ हम अटक रहे हैं, करुणाकर मम हाथ धरो ।। गुरु।।

मैं आचार विचार हीन हूँ, निर्बल हूँ अतिशय मलीन हूँ ।
यही विनय सब भाँति दीन हूँ, मोहि न परखो खोट खरौ ।। गुरु।।

शील धर्म की बात न जानी, अपने स्वारथ की ही ठानी ।
करते रहे यही मन मानी, सदा कुसंगति में बिगरौ ।। गुरु।।

यह बिगड़ी किस भांति बनाऊँ, स्वामी तव ढिंग कैसे आऊँ ।
लज्जित हूँ क्या मुँह दिखलाऊँ, महा पतित मैं पाप भरो ।। गुरु।।

तुमही मेरे सद्गति दाता, तुमही पिता तुम्ही हो माता।
तुम ही सरबस सब विधि त्राता, आज हमारे क्लेश हरो ।। गुरु।।

हे प्रभु पावन प्रेम दान दो, जीवन मुक्तिद शान्ति ज्ञान दो।
परमानन्द स्वरूप ध्यान दो, 'पथिक' तुम्हारी शरण परो ।। गुरु।।

---

**सन्त-वचन—निर्बल वही है जिसके पास अपना कुछ नहीं है। अभिमान रहित वही है जो अपना कुछ नहीं मानता है। बड़ी से बड़ी अच्छाई अभिमान आने पर बुराई में बदल जाती है। अभिमानी व्यक्ति, वस्तु और व्यक्ति की दासता से मुक्त नहीं हो पाता।**

---

गुरुवर की मेहर है जो हम सब इस दर पर आये जाते हैं।
जो कहीं न मिटते यहाँ हमारे दुःख मिटाये जाते है ।।

उसका गरुर गलने लगता जो झुकता इस दर पर आकर।
जो नासमझी से कायल हैं वे जन समझाये जाते हैं ।।

श्रद्धा विश्वास प्रेम के बिन सबका आना आसान नहीं।
यूँ तो इनसान की शक्लों में कुछ पशु भी पाये जाते हैं ।।

कुछ देर अबेर भले ही हो पूरी होती सबके मन की।
बालक फुसलाये जाते हैं लालची रिझाये जाते हैं ।।

बल विद्या धन पद के मद में जो नहीं किसी की सुनते है।
जब गिरता उनका अहंकार तब यहीं उठाये जाते हैं ।।

जो हिम्मत वाले हैं वह नकली दौलत के दानी होते।
ये दानी असली दौलत के फिर धनी बनाये जाते हैं ।।

दरबार अनेकों दुनियाँ में पर यह दरबार निराला है।
कुछ खास किस्म के 'पथिक' यहाँ चुन चुन कर लाये जाते हैं ।।

---

**सन्त-वचन—जब तक सतचेतन ज्ञान स्वरूप आत्मा में ही मन को नहीं लगाओगे, आत्मा में ही बुद्धि को स्थिर नहीं करोगे आत्मा में ही अहंकार को समर्पित नहीं देखोगे तब तक सुख के अन्त में दुःख से**

**विपत्तियों से मुक्त नहीं हो सकोगे। सद्‌गुरु वैद्य ही ज्ञान दृष्टि खोलने मे सहायक होते हैं। श्रद्धा से ही सद्‌गुरु से सम्बन्ध होता है।**

---

चित में यदि चाह न रह जाये फिर कुछ दुख दाह न रह जाये ॥

हम ऐसे हो जायें ज्ञानी, फिर रहें न किञ्चित अभिमानी।
बन जायें सब कुछ के दानी, भव सिंधु अथाह न रह जाये ॥

सब भाँति सदा सन्तोष रहे, मन बुद्धि सदा निर्दोष रहे।
सोहं सत्योहं घोष रहे, कुछ भी परवाह न रह जाये ॥

जग के वैभव धन पाने का, शासन अधिकार बढ़ाने का।
फिर किसी ओर भी जाने का कुछ भी उत्साह न रह जाये ॥

अपने उर का छलमल धोकर, सब भेद भावना को खोकर।
हम 'पथिक' रहें तुममय होकर, दुर्गति की राह न रह जाये ॥

---

**सन्त-वचन—पर के सङ्ग से अभाव प्रतीत होता है तभी अभाव पूर्ति की चाह होती है, चाह की पूर्ति से दूसरी चाह की उत्पत्ति न होने तक सुख या विराम तो मिलता है, शान्ति नहीं मिलती। जब चाह नहीं रहती तब विश्राम मिलता है। चाह की पूर्ति में पराधीनता है, चाह के त्याग में स्वाधीनता है। जो हीरा पा जाता है वही काँच का त्याग कर देता है। परमानन्द का योगी ही सुख भोग की चाह को छोड़ता है।**

---

छोड़ कर प्रभु का आश्रय महान, अरे कहाँ जाओगे तुम ॥
कितना घूमो, फिरो लो उड़ान, कभी यहीं आओगे तुम ॥

अरे जागो! यहाँ सुख संग दुख है, क्यों मोह के स्वप्न में सो रहे हो।
तुम जिनके लिये इतने चाव से नित कर्म के भार को ढो रहे हो।
छूट जायेंगे ये तो यहीं तुमसे जिनमें अति आसक्त हो रहे हो।
यहाँ आत्मोद्धार का जो समय था तुम व्यर्थ अनर्थ में खो रहे हो।
होगा जब तक नहीं आत्मज्ञान, यहाँ दुख उठाओगे तुम ॥

कुछ ही दिन जग में रहना है, किसी निर्बल दुखी को सताओ नहीं।
उपकार नहीं कर सकते तो अपकार में पाप कमाओ नहीं।
बल विद्या धन वैभव मद में, गर्वित होकर इतराओ नहीं।

जिससे तुमने सब कुछ पाया, उस परमेश्वर को भुलाओ नहीं ।
नित्य करते रहो पुण्यदान, सदा सुख पाओगे तुम ।।

जो मानते नहीं परमेश्वर को वह मायिक मोह में भूलते हैं ।
विषय सुख से विमोहित उसी मन में, फिर अनेकों दुख शूल हूलते हैं ।
कभी पाते हुए कभी खोते हुए, हर्ष शोक के द्वन्द्व में झूलते हैं ।
सदा वस्तु की दासता में जकड़े, फिर भी अभिमान से फूलते हैं ।
उन्हें देखो, रहो सावधान वीर कहाओगे तुम ।।

अपने प्रभु से मिलने के लिए अपने में ही गोता लगाते रहो ।
जिसमें होकर सब कुछ करते, उस चेतन रूप को ध्याते रहो ।
जो हो रहा है बस देखो उसे, साक्षी बनो मोह हटाते रहो ।
विश्राम करो चिद्घन में सदा, जड़ से अपनत्व भुलाते रहो ।
'पथिक' पा के परमगुरु ज्ञान, प्रेम अपनाओगे तुम ।।

---

**सन्त-वचन—सांसारिक ज्ञान से मनुष्य कर्म व्यस्त होकर भोगी बनता है आत्मा के ज्ञान से विश्राम मिलता है। कुछ क्षण शान्त हो जाओ, अभी तक जो सुना देखा या भोगा है उसे स्मृति से मिट जाने दो, शून्य में हो रहो यही एकान्त है यही अनुभव का द्वार है। यात्रा बन्द करो स्थिर शान्त होकर देखो।**

---

जब तक तू चाहे देख ले, जग में जो सुख है असार है ।
सुख से विरक्त होते ही, मिल जाता मुक्ति द्वार है ।।

त्यागी ही इस पथ में जा सके, प्रेमी ही उस प्रभु को पा सके ।
उसकी दया अनन्त है, सबकी वो सुनता पुकार है ।।

माया में अब ने भूल तू, अभिमान में न फूल तू ।
जो राग रंग दीखते, कुछ ही दिनों की बहार है ।।

तू मोह नींद में न सो, जीवन अपना न व्यर्थ खो ।
अब तो शरण उसी की ले, जिसका असीम प्यार है ।।

जो कुछ मिला है अपना न मान सब कुछ के सच्चे स्वामी को जान ।
उससे 'पथिक' विमुख न हो, जो सबका सिरजन हार है ।।

**सन्त-वचन—मन के द्वारा जो कुछ सुखद प्रतीत होता है उसी को बुद्धियोग द्वारा देखने पर परिणाम दुखद दिखाई देता है। इन्द्रिय दृष्टि का प्रभाव मिटते ही बुद्धि दृष्टि सम होती है। समता में सत्य दर्शन का द्वार खुल जाता है।**

जब तुम्हीं ध्यान में आ जाते सारे दुख द्वन्द्व मिटा जाते ।।

मेरे जीवन की गति मति में, तन या मन वाणी की कृति में ।
जैसा कुछ जहाँ उचित होता वैसा आदेश सुना जाते ।।

हम अपना व्यर्थ समय खोकर फिरते जब कभी भ्रमित होकर ।
तब तुम्हीं नाथ करुणा करके, हमको सन्मार्ग बता जाते ।।

जब व्याकुल हो कोई तुम बिन, सबका है यह अनुभव उस दिन ।
प्रत्यक्ष नहीं मिलते तब भी, सपने में दरश दिखा जाते ।।

विरले ही तुमको जाने सके, जो प्रेमी वह पहिचान सके ।
माया ममता से रहित 'पथिक' जो तुम्हें खोजते पा जाते ।।

**सन्त-वचन—प्रियतम प्रभु की दया और कृपा कब किस रूप में होती रहती है उसे समझने के लिये सावधान रहो। विश्वास रखो वे चाहे कुछ करें पर अपनी ही ओर हमें लिये जा रहे हैं।**

जब निज दोष मिटाना सुगम है, परम शान्ति तब पाना सुगम है ।।

प्रीति कामना मुक्त जहाँ है, कर्म भाव संयुक्त जहाँ है ।
बन्धन ग्रन्थि छुड़ाना सुगम है, परम शान्ति तब पाना सुगम है ।।

जब भोगों की चाह न रहती, प्रलोभनों की राह न रहती ।
सेवा नियम निभाना सुगम है, परम शान्ति तब पाना सुगम है ।।

जब गुण का अभिमान न रहता, परअवगुण में ध्यान न रहता ।
प्रेम गीत तब गाना सुगम है, परम शान्ति तब पाना सुगम है ।

जहाँ किसी से द्रोह नहीं है, कहीं जगत में मोह नहीं है ।
सत्य में सुरति टिकाना सुगम है, परम शान्ति पाना सुगम है ।।

जो न फिसलते हैं माया में, जो न मुग्ध होते काया में।
प्रभु से प्रीति लगाना सुगम है, परम शान्ति तब पाना सुगम है।

जो न किसी को दुख देते हैं, जो न किसी का सुख लेते हैं।
मन को अमल बनाना सुगम है, परम शान्ति तब पाना सुगम है॥

सभी ओर से चित्त हटा कर निज प्रियतम के गुन गा गा कर।
'पथिक' त्याग अपनाना सुगम है, परम शान्ति तब पाना सुगम है॥

---

**सन्त-वचन—शास्त्र ज्ञान से शान्ति का सम्बन्ध नहीं है। न भोग में शान्ति है न वाह्य त्याग में शान्ति है, चित्त की अनुपस्थिति में शान्ति है।**

---

जग में कर्तव्यनिष्ठ मानव विरले ही देखे जाते हैं।
विद्वान बहुत है पर अपने दोषों को छोड़ न पाते हैं॥

पूंजीपति धन के लोभी हैं निर्धन दानी बनना चाहें।
निर्बल सेवा को तरस रहे बलवान पड़े अलसाते हैं॥

जो सुखी बाँट सकते सुख को वे बने विलासी भोगी हैं।
जो दुखी न कुछ कर सकते सुख देने को ललचाते हैं॥

जिनकी प्रवृत्ति से गति होगी वह उदासीन बन रुके हुए।
जिनकी उन्नति निवृति से है वह प्रवृति को अपनाते हैं॥

कर्तव्य विमुखता के कारण सब उल्टी मति गति हो जाती।
भीतर की प्रकृति छिपा करके जब आकृति मात्र सजाते हैं॥

जब वेश्या वृद्ध हो चुकी हो तब तप करने निकले घर से।
डाकू भी शक्ति हीन होने पर साधु वृत्ति दिखलाते हैं॥

जब रोगी हैं तब देव भक्त जब कुछ न रहा मुनि बन बैंठे।
जब रही भोग की शक्ति नहीं निज को निष्काम बताते हैं॥

चींटी से लेकर ब्रह्मा तक को जो कुछ जग में करना है।
सबके कर्तव्यों की चर्चा, अपना कर्तव्य भुलाते हैं॥

हम जो कुछ हैं जैसे भी हैं हम गृहस्थ हैं या संन्यासी।
हम तभी सफल हो सकते, जब अपना कर्तव्य निभाते हैं॥

जो कुछ भी शुभ हम कर सकते जिसके साधन उपलब्ध हमें।
जो कर्म सर्व हितकारी हों कर्तव्य वही कहलाते हैं।।

अधिकार मान धन की तृष्णा मानव को पतित बनाती है।
जो पथिक जीत पाते इसको वह मुक्तिमार्ग में आते हैं।।

---

**सन्त-वचन—अधिकार भोग की लालसा, कुछ पाने की इच्छा, महत्वाकांक्षा, सुखोपभोग की तृष्णा कर्तव्य परायणता में बाधक है। महत्वाकांक्षा सर्वेपरि रोग है, यह मादक है, इससे आत्मविस्मृति रहती है। आत्म ज्ञान के अभाव में ही समस्त दोष पुष्ट रहते हैं। जहाँ तक मेरा कुछ प्रतीत होता है वहाँ तक मैं पुष्ट रहता है। मैं को पूर्ण रूप से जान लेना ही मुक्ति पाना है।**

---

जग में सत्संग बिना मानव सन्मति गति पाना क्या जानें।
आसुरी प्रकृति के जो प्राणी सत्संग में आना क्या जानें।।

जीवन में जितने दुख दिखते वह निज दोषों के कारण ही।
पर जिसमें इतना ज्ञान न हो वह दोष मिटाना क्या जानें।।

उन्नति का साधन सेवा है, इससे ही आत्म शुद्धि होती।
पर लोभी अभिमानी कामी सेवा को निभाना क्या जानें।।

गांजा, अफीम या भंग, चरस सिगरेट शराब पीने वाले।
व्यसनों को जो नहीं छोड़ पाते, मन वश में लाना क्या जानें।।

जो स्वयं ईर्ष्या काम क्रोध की अग्नि लिये फिरते उर में।
जब अपनी लगी बुझा न सके वह पर की बुझाना क्या जानें।।

आलसी विलासी धर्म विमुख, इन्द्रिय सुख लोलुप अज्ञानी।
जब बिगड़े आप ही दूसरों की बिगड़ी को बनाना क्या जानें।।

जो तन को मल मल धोते हैं, भीतर मन जिन का काला है।
वह मोही गोरेपन के मन का मैल छुड़ाना क्या जानें।।

वह साधक भी धोखे में है करते प्रपंच का जो चिंतन।
यदि प्रेम नहीं तब प्रियतम प्रभु में ध्यान लगाना क्या जानें।।

जो पहुँचे हुए सन्त जन हैं, उनसे पूछे पथ की बातें ।
जो बारह बाट भटकते हैं वह मार्ग दिखाना क्या जानें ।।

दुख में जो त्यागी हो न सके, बन सके न सुख में जो उदार ।
वह पथिक प्रेममय प्रियतम से तन्मय हो जाना क्या जानें ।।

---

**सन्त-वचन—जो प्रेम शून्य हैं वही ईश्वर विमुख है। प्रेम विहीन ज्ञान से जड़ता आती है। ज्ञानहीन प्रेम से मोह तथा कामुकता बढ़ती है कामना युक्त प्राणियों में प्रेम नहीं प्रकट होता है।**

---

जगत् के स्वामी सिरजनहार, नमः परमेश्वर परमाधार ।

जिसकी कहीं न इति है अथ है, ऐसी लीला अगम अकथ है ।
तुम्हीं से व्यक्त हुआ संसार नमः परमेश्वर परमाधार ।।

तुमको कभी न भूलूं मन से, वाणी से कर्मों से तन से ।
तुम्हीं को ध्याऊँ बारंबार, नमः परमेश्वर परमाधार ।।

तुम सबके परमाश्रयदाता, तुमसे जीव अभय वर पाता ।
तुम्हीं अनुपम सुख के भण्डार, नमः परमेश्वर परमाधार ।।

मैं भी शरण तुम्हारी आया, हे जीवनधन हर लो माया ।
पथिक अब तुमको रहा पुकार, नमः परमेश्वर परमाधार ।।

---

**सन्त-वचन—या तो जिसे चाहते हो उसके बिना कहीं चैन न लो या फिर चाह का ही त्याग करो। इस सत्य को समझ लो ! जिसका तुम त्याग नहीं कर पा रहे हो उसे ही चाहते हो, उसी से तुम्हारी प्रगाढ़ प्रीति है।**

---

जय परमानन्दरूप स्वामी सद्‌गुरुजी ।।

ऐसे तुम दयानाथ, सुमिरत ही गहत हाथ ।
बार-बार नाऊँ माथ, स्वामी सद्‌गुरुजी ।।

मेरे आधार तुम्हीं, वार तुम्हीं पार तुम्हीं ।
हरते दुख भार तुम्हीं, स्वामी सद्‌गुरुजी ।।

कोमल चित अति उदार, हमको भी लो उबार ।
कर दो भवसिन्धु पार, स्वामी सद्‌गुरुजी ।।

'पथिक' प्राण जीवनधन, स्वीकृत हो यह तन मन ।
सर्वस तुम में अरपन, स्वामी सद्‌गुरुजी ।।

---

**सन्त-वचन—जो लघु को अपने समान गुरु बना लेता है वही ज्ञान स्वरूप गुरु है। गुरु को जानो, देह को गुरु न मानो।**

---

जागरण का समय है पर मोह निशि में सो रहे तुम ।
सुखद स्वप्नों में कभी हँसते, दुखद में रो रहे तुम ।।

सोते सोते स्वयं खोये, खोजते परमात्मा को ।
देहमय ही मानते हो नित्य चिन्मय आत्मा को ।।
मृत्यु से रहकर अपरिचित व्यर्थ जीवन खो रहे तुम ।। जागरण० ।।

तुम विषय विष से सने हो, वहीं अमृत युक्त चेतन ।
जहाँ तुम दुख से भयातुर वहीं है भय मुक्त चेतन ।।
क्यों न उसके संग से, कामज कलुषता धो रहे तुम ।। जागरण० ।।

शान्ति तो नित प्राप्त ही है, देख लो कि अशान्ति क्यों हैं ।
सत्य से दूरी नहीं है, किन्तु रहती भ्रान्ति क्यों है ।
आश्रय में बैठ कर भी भार सर पर ढो रहे तुम ।। जागरण० ।।

देह की ममता अहंता त्यागते हो नहीं जब तक ।
निरन्तर निज ज्ञान में अब जागते हो नहीं जब तक ।।
'पथिक' नित्यानन्द में होकर भिखारी हो रहे तुम ।। जागरण० ।।

---

**सन्त-वचन—मोहासक्ति वश अतिव्यस्त रहने वाले प्राणी जीवन को ही भूल गये हैं। तुम जब सो जाते हो तब जो नित्य निरन्तर जाग्रत रहता है उस चेतन स्वरूप को जानो। अपने से जो कुछ भिन्न है वही पर है, पर का आश्रय लेने वाला अपने से भिन्न में सुख मानने वाला परतन्त्र है। स्व में ही सत्य का अनुभव करने वाला स्वतंत्र है वही**

**जागृत है। तुम्हारा सारा भार परमात्मा में है तब सर में बोझ क्यों लादे हो।**

---

जिसका तुम्हें अभिमान है यह भी न रहेगा ।
जिस बल पै तुम्हें शान है यह भी न रहेगा ।।

तुम गा रहे हो गर्व से अपना विभव प्रताप ।
झूंठा सभी समान है यह भी न रहेगा ।।

सोचो तो कैसे कैसे जमाने गुजर गये ।
जिनसे कि तू हैरान है यह भी न रहेगा ।।

आये हैं चले जायेंगे कुछ देर के मेहमान ।
क्या देखता नादान है यह भी न रहेगा ।।

ऐ 'पथिक' परम भक्त और भगवान के सिवा ।
जो कुछ है नाशवान है यह भी न रहेगा ।।

---

**सन्त-वचन—परमप्रभु जिसे अपनाना चाहते हैं उसके सभी विश्वास तोड़ देते हैं। अपना सब कुछ देते ही प्रियतम मिल जाते हैं। मन को खाली कर लेना ही प्रियतम को पाने का साधन है।**

---

जिसे खोजते थे वह है साथ मेरे, यह चिद् आत्मा ही परम देवता है ।।
हर एक देह मन्दिर में यह प्रभु प्रतिष्ठित, इसी का बताया हुआ यह पता है ।।

यही तो सभी प्राणियों का है जीवन, इसी से प्रकाशित ये अन्त:करण मन ।
इसी में सकल विश्व जलथल अनिल है, अनल से गगन से यही झाँकता है ।।

यही नाथ है जिसका अथ ही नहीं है, यही नेति जिसकी न इति ही कहीं है ।
वह अव्यक्त ही व्यक्ति में व्यक्त होता, इसी की ही सत्ता से जग भासता है ।।

मनुज मोह निद्रा में सोये हुए जो, किसी खोज में ही हैं खोये हुए जो ।
हैं घेरे हुए सब को सुख दुख के सपने, जिसे गुरु जगाये वही जागता है ।।

वहीं यह प्रकट प्रभु जहाँ मैं नहीं है, यह मैपन के रहते न मिलता कहीं है ।
कृपा की किरण से जब अज्ञान मिटता, तभी यह चिदानन्दघन दीखता है ।।

जगत् में जो आता सदा रह न पाता, जो रहता सदा वह है आता न जाता।
यही एक अपना है अपने में ही है ये, हमको कभी भी नहीं भूलता है ।।

हमारा दुखी होना ही प्रार्थना है, सुखों में सदा स्तुति वंदना है।
दिखाना सुनाना पथिक कुछ नहीं है, परम प्रभु से सबको सुलभ पूर्णता है ।।

---

**सन्त-वचन—ज्यों ज्यों असत से छुटकारा होता जाता है त्यों त्यों सत् से अभिन्नता होती जाती है।**

---

जिसे जाना है दु:ख से पार सुख की चाह तजो ।।
ज्ञानियों का यही है विचार सुख की चाह तजो ।।

देख लो चाह ने किसको नहीं नचाया है।
चाह की पूर्ति में कुछ हाथ नहीं आया है।
जिसे सुख मानते हो वह तो सुख की छाया है।
प्रतीत होती है मिलती नहीं ये माया है।
मिट जायेंगे सारे विकार सुख की चाह तजो ।।

धन की ये चाह ही निर्धन हमें बनाती है।
मान की चाह ही अपमान का दु:ख लाती है।
भोग की चाह ही तो रोग में फँसाती है।
चाह के रहते कहीं चैन नहीं आती है।
दुखियों से यही है पुकार सुख की चाह तजो ।।

चाह मिट जाये तो सब दु:ख मिटें जीवन में।
चाह मिट जाये तो चिन्ता न रहे कुछ मन में।
चाह मिटते ही चित्त लय हो सत्य चिद्घन में।
चाह के रहते शान्ति मिलती नहीं घर बन में।
यदि करना है प्रभु से प्यार सुख की चाह तजो ।।

चाह के पीछे जीव सदा भार ढोता है।
चाह पूरी नहीं होती है तभी रोता है।
चाह रहते भला निश्चिंत कौन सोता है।
चाह को छोड़ दे बस वही मुक्त होता है।
खुला सबके लिये यह द्वार सुख की चाह तजो ।।

अचाह पद में कहीं दर्द नहीं दाह नहीं।
आह उठने के लिये रहती है फिर राह नहीं।
चाह मिटते ही किसी हानि की परवाह नहीं।
वो शाहन्शाह है जिसमें रही कुछ चाह नहीं।
'पथिक' चाहो जो अपना सुधार सुख की चाह तजो ।।

---

**सन्त-वचन—स्वरूप के अज्ञान-वश अपने से भिन्न जो कुछ है उसमें सुख मानने के कारण उसकी चाह होती है जब तक सुख के अन्त में पूर्ण दु:ख नहीं होता तब तक सुख की चाह का त्याग नहीं होता। जिसे आनन्दानुभव होता है वही सुख की चाह का त्याग कर पाता है। जो पा जाता है वही संसार से मिलने वाले सुख की चाह को छोड़ देता है।**

---

जिसे जाना है भव से पार, प्रेम से प्रभु को भजो ।
जो है सब जग का परमाधार, प्रेम से प्रभु को भजो ।।

प्रेमियों के प्रभु सदा भूखे प्रेम भाव के हैं।
इसके ही बस किन-किन से मिताई की।
भोजन जनकपुर के भी न सराहे कभी।
भीलनी के बेरों की है कितनी बड़ाई की।
फल छिलके औ शाक कौन-सा थे स्वाद लिये।
जेहि हेतु विदुर के घर पहुनाई की।
विप्र सुदामा घर सम्पत्ति अतुल कर।
चावलों की भर-भर मुट्ठियाँ सफाई की।
छोड़ कर मन के सारे विकार प्रेम से प्रभु का भजो ।। जिसे० ।।

यूं तो दीनबन्धु को पुकारते हैं सभी भक्त।
किन्तु गजराज की पुकार कुछ और थी।
विपद समय में दु:खी रोते हैं प्रभु से पर।
दीन द्रौपदी की अश्रुधार कुछ और थी।
ध्रुव प्रहलाद और शबरी विदुर आदि।
इनकी लीलाओं की बहार कुछ और थी।
सूरदास तुलसी जी मीरा आदि भक्तन के।
विरही हृदय की यादगार कुछ और थी।
सबसे मन को हटा बार-बार, प्रेम से प्रभु को भजो ।। जिसे० ।।

उस भक्त व्याध में था आचरण कौन वह।
जिस पुण्य बल द्वारा पावन सुजान था।
विदुर शबरी की जाति पांति कौन सी थी।
प्रभु के बुलाने का अनोखा अभिमान था।
कौन सी थी आयु भला ध्रुव ऐसे बालक की।
पथिक अटल पद पाया वरदान था।
गज अरु गीध अन्त क्षण अजामिल देखो।
सबके हृदय में प्रेमभाव ही प्रधान था।
चाहे आयें विपत्ति हजार, प्रेम से प्रभु को भजो ।। जिसे० ।।

कामना यही हो और कामना न रह जाये।
सदा होके निष्काम जीवन बिताओ तुम।
प्रेम सिन्धु में उन्हीं के यह मन मीन सा हो।
उन्हें छोड़ अन्य कहीं जीवन न पाओ तुम।
उनको ही देखो और उनकी ही सुनो बात।
सभी भाँति उनमें ही आनन्द मनाओ तुम।
मोह ममता को छोड़ भोगों से मन को मोड़।
प्रभु को ही ध्याओ प्रभुमय बन जाओ तुम।
पथिक जीवन में यही है सार प्रेम से प्रभु को भजो ।। जिसे० ।।

---

**सन्त-वचन—भक्त होता वही है जो निर्बल है। निर्बल वही है जिसके पास अपना कुछ नहीं है। अभिमान रहित वही जो अपना कुछ नहीं मानता है बड़ी से बड़ी अच्छाई अभिमान आने पर बुराई में बदल जाती है। अभिमानी व्यक्ति वस्तु और व्यक्ति की दासता से मुक्त नहीं हो पाता।**

---

जिससे कोई भूल न हो, भगवान वही है ।।
भूल हो, भूल का भान न हो हैवान वही है ।।
भूलों के रहते चित में जिसके चैन नहीं आये।
अपना सुधार करता जाये, इन्सान वही है ।।

आसुरी प्रकृति वह, जहाँ भूल का दु:ख नहीं होता ।
जो भूल देखने दे न कहीं, अभिमान वही है ।।

जो हानि देखनी पड़ती, वह सब भेंट भूल की है ।
जो भूल करे वह भोगे, प्रकृति विधान वही है ।।

यह सारी भूल भोग सुख की तृष्णावश ही होती ।
वह पथिक जो कि तृष्णा तज दे मतिमान वही है ।।

---

**सन्त-वचन—जो स्वयं को नहीं जानते, अपने प्रभु को नहीं जानते, जो कर्तव्य से विमुख हैं वही भूल में हैं। प्रभु स्मरण से स्व को भुलाना भूल है। स्व विस्मरण दु:ख विस्मरण का उपाय है। स्व स्मरण, दु:ख विनाश का उपाय है। भूल का परिणाम दु:ख है।**

---

जिसे तुम कहते हमारा यहाँ कुछ अपना नहीं है ।
जो मिला प्रभु का ही सारा यहाँ कुछ अपना नहीं है ।।

आज जिनके प्यार में तुम मोह बस इतरा रहे हो ।
कभी खीचेंगे किनारा यहाँ कुछ अपना नहीं है ।।

भले ही वह कर रहे हों ह्रदय तन धन सब समर्पण ।
बना जो आँखों का तारा यहाँ कुछ अपना नहीं है ।।

अभी जो प्रियतम बने थे भूलते देखा उन्हीं को ।
तभी विस्मित हो पुकारा यहाँ कुछ अपना नहीं है ।।

जो मिलेगा छुटेगा ही रह न पायेगा सदा कुछ ।
'पथिक' निज प्रभु बिन तुम्हारा यहाँ कुछ अपना नहीं है ।।

---

**सन्त-वचन—अपना वही जो अपने से कभी न छूटे जो कभी न छोड़े। अपना वही है जो अपने को नित्य प्राप्त हो। नित्य प्राप्त परमात्मा ही अपना है। जिस पर अपना अधिकार नहीं हो उसे अपना न मानो।**

---

जिस प्रभु का यह संसार वह प्रभु मुझमें ही हैं ।।

यहाँ कुछ भी मैं करूँ काम उन्हीं में रहकर ।
नित्य मिलता मुझे विश्राम उन्हीं में रहकर ।
बीतें दिन-रात सुबह-शाम उन्हीं में रहकर ।

जिधर देखूँ करूँ प्रणाम उन्हीं में रहकर।
सत्य चिन्मय अखण्ड अपार वह प्रभु मुझ में ही हैं ।।

हर एक रूप में हर नाम में हो ध्यान यही।
सर्व में उन्हीं की सत्ता है, रहे ज्ञान यही।
यही पूजा स्वधर्म और व्रत विधान यही।
मन से वाणी से सदा होता रहे गान यही।
इस जीवन का जिस पर भार वह प्रभु मुझ में ही हैं ।।

अनेक साधनों का धाम, यह तन प्रभु का है।
जहाँ अगणित भरे हैं काम, यह तन प्रभु का है।
मुझे जो कुछ मिला है वह सभी धन प्रभु का है।
सर्व का आश्रय मैं हूँ यह वचन प्रभु का है।
जिसका सब पर अखण्डित प्यार वह प्रभु मुझ में ही हैं ।।

यही मेरा परम आधार, इसी में आनन्द है।
यहीं मिटता असत् व्यवहार इसी में आनन्द है।
स्वरूप नित्य निर्विकार, इसी में आनन्द है।
यहीं होता हूँ निर्विचार, इसी में आनन्द है।
'पथिक' गाऊँ यही बार-बार वह प्रभु मुझमें ही हैं ।।

---

**सन्त-वचन—जो स्वयं को नहीं जानता उसके लिये ईश्वर की खोज असंगत है। ज्ञान मनुष्य के भीतर उसका स्वरूप है। सब खोज छोड़ो और स्वयं में देखो वह सदा से ही स्वयं में विद्यमान है। मन से मुक्त होते ही स्वयं में आ सकोगे। जो सर्वत्र प्रेम का अनुभव करता है। वह प्रभु में होता है।**

---

जीवन के आधार हमारे राधेश्याम ।
भज लो बारम्बार हमारे राधेश्याम ।।

चलते फिरते रोके गाके, दुख सुख में मन को समझा के।
कहो पुकार पुकार हमारे राधेश्याम ।।

जय योगेश्वर कृष्ण मुरारी, भक्त भावमय लीलाधारी।
करते भव से पार हमारे राधेश्याम ।।

हृदयरमण करुणा के सागर, अनुपम अति सुन्दर नटनागर ।
स्वयं प्रेम साकार हमारे राधेश्याम ।।

कुछ ही दिन का यह जीवन है प्रभूध्यान ही सुखमय धन है ।
पथिक मुक्तिदातार हमारे राधेश्याम ।।

---

**सन्त-वचन—जिसके सभी द्वार बन्द हो जाते हैं तब प्रभु कृपा का द्वार अवश्य खुलता है। जो प्राप्त का अनादर और अप्राप्त का चिन्तन करते हैं वे प्रार्थना के अधिकारी नहीं है। प्रार्थना अस्तिक का जीवन व निर्बल का बल है।**

---

जीवन सफल है जग में उन्हीं का परमार्थ पथ में जो आरहे हैं।
वे धन्य हैं जो मन को विरागी हृदय अनुरागी बना रहें हैं ।।१।।

वह मुक्त होंगे बन्धन दुखों से जो त्याग पायेंगे दोष अपने।
वे हैं अभागी जो तन में धन में आसक्ति ममता बढ़ा रहे हैं।। २।।

कुछ भी न पायेंगे वे जगत् में जगत के पीछे जो दौड़ते हैं।
ये जग न उन को पकड़ सकेगा जो जग से आशा हटा रहे हैं।। ३।।

उन्हीं के सब काम पूरे होंगे जो काम आते हैं दूसरों के।
उन्हीं को सर्वोपरि पद मिलेगा जो चाह सारी मिटा रहे हैं।। ४।।

बड़ा आदमी उसी को कहिये किसी से जो कुछ न चाहता हो।
वही है दाता जो लेने वालों को नित्य ही देते जा रहे हैं।। ५।।

वही है स्वाधीन और नित्य निर्भय, हैं जिनके वश में मन और इन्द्रिय।
पथिक परम तृप्त अपने ही मैं, जो अपने प्रियतम को पा रहे हैं।। ६।।

---

**सन्त-वचन—यदि परमात्मा को जानना चाहते हो तो विरक्त ज्ञानी की आज्ञा पर चलो। संसार में लाखों मनुष्य 'स्व' को न जानकर 'पर' की अर्थात अन्य की ओर देखते हुए, पर कथा कहते हुए और सुनते हुए समय नष्ट करके विनाश को प्राप्त हो रहे हैं।**

---

जीवन यूँ ही बीत न जाये ।
जग में पशु भी खाते-सोते, स्वार्थपूर्ति में सकुशल होते ।
वह मानव क्या ? भोग सुखों में ही जो शक्ति गंवाये ।।

मित्रो ! सावधान अब रहना, जो कुछ दु:ख आये वह सहना ।
धैर्य-पूर्वक सह लेना ही मन का तप कहलाये ।।

कभी किसी को कष्ट न देकर, हितप्रद सेवा का व्रत लेकर ।
निज कर्तव्य निभाते चलना, पर अभिमान न आये ।।

कभी न अपना लक्ष्य भुलाना, अपने को निष्काम बनाना ।
जो कि कामना युक्त हृदय है, प्रेम नहीं कर पाये ।।

तन से श्रम मन से संयम हो, बुद्धि विवेकी उर उपशम हो ।
'पथिक' यही सुन्दर जीवन है, जो प्रभु के मन भाये ।।

---

**सन्त-वचन—शक्ति संकल्प श्रम और साधना से जीवन का सत्य सुलभ होता है। स्मरण ध्यान, स्वाध्याय, सहनशीलता, क्षमा, उदारता, सेवा, प्रीति आदि गुणों से—वासना, ममता तृष्णा के त्याग से उन्नति होती है। कुचिन्ता, कुप्रवृति, कुसङ्ग से जीवन व्यर्थ जाता है।**

---

जीवनेश प्रभु जीवन के दिन यूँ ही बीते जाते हैं ।।
हम तुममें तुम हम में ही हो फिर भी देख न पाते हैं ।।

शान्ति सुलभ पर त्याग नहीं है शक्ति सुलभ पर तप से हीन ।
कैसे सद्गति प्राप्त करें हम सभी भांति से दुर्बल दीन ।
तृष्णा तल पर भटक रहा मन होकर चंचल महा मलीन ।
मेरा उठना तो अब केवल एक तुम्हारे ही आधीन ।
कृपा दृष्टि से वंचित रहने तक ही पाप सताते हैं ।।

चढ़ा हुआ है जब तक उर में राग द्वेष का कलुषित रंग ।
जब तक दुर्गुण दोषों से यह शुद्ध न होते दूषित अंग ।
तब तक तुमको पा न सकेंगे कितनी ही हो प्रबल उमंग ।
अब कुछ ऐसी शक्ति हमें दो जिसके बल हो सकें असंग ।
वही देखते जाते हम जो कुछ भी आप दिखाते हैं ।।

जो चाहा वह मिला अभी तक केवल शेष यही अभिलाष ।
सब कुछ तज कर भजूँ तुम्हीं को कर दो यह भी पूरी आश ।
मिट जायें सब दुख हमारे कट जायें सारे भव पाश ।
हर लो मेरी दुर्मति सारी कर दो पावन ज्ञान प्रकाश ।
यही प्रतीक्षा है अब कब तक मेरा मोह मिटाते हैं ।।

यह सच है हो चुका अभी तक अगणित पतितों का उद्धार।
मिल न सकेगा ऐसा कोई जिस पर हो न तुम्हारा प्यार।
सर्व समर्थ परम संरक्षक प्राणि मात्र के परमाधार।
हम भी एक पतित प्राणी है अब हमको भी कर दो पार।
भूले भटके हुए 'पथिक' हम शरण तुम्हारी आते हैं।।

---

**सन्त-वचन—जिसकी आवश्यकता केवल भगवान ही रह जाते हैं वही भक्त बनता है। विषयी अनेक का और विरागी एक का भजन करता है।**

---

जै जै परमेश्वरं नमामि नारायणं।
जै जै अखिलेश्वरं नमामि नारायणं।।

जै जै जगदीश्वरं जयति महेश्वरं।
सत्यं सुन्दरं शिवं नमामि नारायणं।।

व्यापकं अजं विभुं नित्यं केवलं शुभं।
हे अनन्त अव्ययं नमामि नारायणं।।

निर्गुणं गुणाश्रयं निष्क्रियं क्रियालयं।
निर्मलं दयामयं नमामि नारायणं।।

नित्य शुद्ध शक्तिदं भक्तिपाल भक्तिदं।
हे महान मुक्तिदं नमामि नारायणं।।

जै सुरेश श्रीपतिं जै उमेश शंकरं।
निश्चलं निरंजन नमामि नारायणं।।

आप्तकाम शान्तिदं सौम्य ज्ञानध्यानदं।
हे कृपालु कोमलं नमामि नारायणं।।

जै श्रीराम राघवं जै गोविन्द माधवं।
'पथिक' प्राणेश्वरं नमामि नारायणं।।

---

**सन्त-वचन—जिस मन से कामना निकल जाती है उस मन में भगवान निवास करते हैं। अखण्ड सम्बन्ध होने पर ही परमप्रभु के नित नव**

**प्यार का निरन्तर स्मरण सम्भव है। जो अहंकार से रिक्त हैं वही भगवान से भरे हैं।**

---

जो खोजते हैं पायेंगे वह ध्यान किसी दिन।
सद्भाव से मिल जायेंगे भगवान किसी दिन ।।

गज गीध अजमिल को गणिकादि को देखो।
इनका भी किया प्रभु ने कल्याण किसी दिन ।।

मुनि यती व्रती तपसी सब पीछे रह गये।
शबरी के घर में हो गये मेहमान किसी दिन ।।

सुनते हैं वे हृदय की सच्ची पुकार को।
दिखलायेंगे फल अपना विनयगान किसी दिन ।।

सुमिरन करो हरिनाम का हर काम धाम में।
होगा सभी दुखों का अवसान किसी दिन ।।

मिल जाते 'पथिक' प्राणनाथ प्रेम भाव में।
अपने ही को कर देते हैं वे दान किसी दिन ।।

---

**सन्त-वचन—सभी प्रकार की चाह शरीरभाव धारण करने से ही उत्पन्न होती है, चाह से कर्म का जन्म होता है। चाह मिटते ही ईश्वर से मानी हुई दूरी का तथा संसार से माने हुए सम्बन्ध का अन्त हो जाता है।**

---

जो जन चलते रह विरह की।

किसहू विधि कहुँ चैन न पावत, रह रह निकसत आह विरह की।
मन झुलसे तन तपै निरन्तर, उठत हिये में दाह विरह की।
भूख मरै नींदहु हरि जावै, उपजत विथा अथाह विरह की।
सुध बुध तजि गावत हूँ रोवै, अति दुख भरी कराह विरह की।
जीवत मारै मारि जियावै, इक आशा इक चाह विरह की।
'पथिक' विरह गति विरही जानत, उनको ही परवाह विरह की।

**सन्त-वचन—त्याग से शान्ति, तप से शक्ति, अपनत्व से प्रीति, सेवा से पवित्रता स्वतः आ जाती है। उन सभी प्रवृत्तियों का अन्त करना होगा जो दीन और अभिमानी बनाती हैं।**

जो बुद्धिमान मानव है, वह अपना कर्तव्य भुलाते क्यों ।।
जीवन में जो दुख देते, उन दोषों को छोड़ न पाते क्यों ।।
सेवक में मनमुखता कैसी, स्वामी का क्यों अनुदार हृदय ।
जो पुण्य प्राप्ति का अवसर है उसको ही व्यर्थ गँवाते क्यों ।।

अपने ही पुण्यों के द्वारा अनुकूल परिस्थिति मिलती है ।
कुछ व्यक्ति दूसरे के वैभव को देख देख ललचाते क्यों ।।

जो स्वार्थ पूर्ति में रस लेते, परमार्थ सिद्धि कैसे होगी ।
जब राग द्वेष को तज न सके त्यागी प्रेमी कहलाते क्यों ।।

कर्तव्य उसे ही कहते हैं जो, कर्म सर्व हितकारी हो ।
कोई जो कुछ भी कर सकते, करने में देर लगाते क्यों ।।

अधिकार मान धन की तृष्णा से, चित्त अशान्त रहा करता ।
उत्थान चाहने वाले इस तृष्णा को ही न मिटाते क्यों ।।

भोगों से पूर्ण विरक्ति बिना भगवदानुरक्ति न हो सकती ।
जो 'पथिक' भक्ति के अभिलाषी, वे प्रपंच को अपनाते क्यों ।।

**सन्त-वचन—बुद्धिमान विद्वान होने के साथ ही विवेकी होना परमावश्यक है। विवेक का आदर न करने वाले अथवा अविवेकी मनुष्य ही कर्तव्य विमुख लोभी मोही ईर्ष्यालु द्वेषी कामी अभिमानी क्रोधी हिन्सक बने रहते हैं। आत्म अज्ञान में ही सारी भूल तथा समस्त दोष पाप अपराध बनते हैं अतः आत्म ज्ञान में जाग्रत होकर ही दोषों दुखों से मुक्ति मिल सकती हैं।**

'जो हैं' वह भुलाने के काबिल नहीं है ।
'नहीं है' वह पाने के काबिल नहीं है ।।

'जो है' वह अभी है, यहीं 'है' हम उसमें ।
किसी को दिखाने के काबिल नहीं है ।।

हम उसके ही द्वारा यह सब देखते हैं।
'वह है' बस बताने के काबिल नहीं है ।।

न होते हुए 'है' सा जो भासता है।
वह विश्वास लाने के काबिल नहीं है ।।

जो 'है' वही सत् है, वह परमात्मा है।
असत् से छिपाने के काबिल नहीं है ।।

'पथिक' तुम जहाँ हो वही पर तो वह है'।
वह खोज लगाने के काबिल नहीं है ।।

---

**सन्त-वचन—नित्य सत्-चेतन आत्मा को न जानना और अज्ञान में जो स्वयं तुम नहीं हो और जो तुम्हारा नहीं है उसे ही मैं मानते रहना सर्वोपरि पाप है और यह पाप अहंकार में ही रहता है, अहंकार के पार नहीं रहता।**

---

तुम सम कौन उदार परम प्रभु ।।
तुम्हें भूल कर हम इस जगमें, बनते अपराधी पग पग में।
तुम करते उद्धार परम प्रभु ।।
जो कुछ पाते व्यर्थ गँवाते, फिर भी तुम देते ही जाते।
ऐसा अनुपम प्यार परम प्रभु ।।
तुमसे ही तुममें सबकी गति, तुमसे ही सद्गुण शुभ सन्मति।
तुमसे ही निस्तार परम प्रभु ।।
कितने अध:पतित होकर हम, जब आते सन्मुख रोकर हम।
तुम करते स्वीकार परम प्रभु ।।
तुमने ही मुझको अपनाया, तुमको ही इक अपना पाया।
तुमही परमाधार परम प्रभु ।।
तुम बिन कुछ भी लगे न प्यारा, तुमसे माँगू प्रेम तुम्हारा।
सुन लो 'पथिक' पुकार परम प्रभु ।।

---

**सन्त-वचन—संसार से आशा और सम्बन्ध ही परमात्मा के योग सिद्ध में बाधक है। आशा और सम्बन्ध को छोड़ दो।**

---

तुम सर्वोपरि महान, हे प्रियतम परमात्मन ।।
अखिलेश्वर शक्तिमान, हे प्रियतम परमात्मन ।।

तुम अनुपम अकथनीय, अगम अगोचर अव्यय ।
तुम अनादि विश्वम्भर, हे परमेश्वर जय जय ।
तुम जीवन ज्योति प्रान, हे प्रियतम परमात्मन ।।

तुम निरीह निर्गुण हो, अमल अचल निर्विकार ।
तुम अरूप सर्वरूपमय, अभेद प्रकृति पार ।
तुम सुन्दर गुणनिधान, हे प्रियतम परमात्मन ।।

तुम सतचित आनन्दघन, अगणित हैं रूप नाम ।
विविध भाँति तुम्हीं, एक सबके नयनाभिराम ।
जानत विरले सुजान, हे प्रियतम परमात्मन ।।

तुम कितने अद्‌भुत हो समुझत ही बने नाथ ।
सभी ओर तुम समर्थ, हो अभिन्न सदा साथ ।
'पथिक' करत विनय गान, हे प्रियतम परमात्मन ।।

---

**सन्त-वचन—अपने में ही अपने प्रियतम को देखना, दूरी मिटाना है। जिनके बिना तुम रह न सको उसे ही अपना प्रेम पात्र समझो।**

---

तुम शरण न आओगे कब तक ।
गुरुजन जो कुछ कह जाते हैं, तुम उसे भुलाओगे कब तक ।
देखना यही है इस जग में, तुम चैन मनाओगे कब तक ।।

अगणित अभिमानी चले गये, माया-ममता से छले गये ।
वे ले न गये कौड़ी संग में, तुम लोभ बढ़ाओगे कब तक ।।

जो गया न अब वह आयेगा, जो है वह निश्चय जायेगा ।
जब कोई सदा न रह सकता, तब तुम रह पाओगे कब तक ।।

जिसको पाकर खोना होता, जिसको गाकर रोना होता ।
उस नश्वर वैभव सुख के तुम, यह गीत सुनाओगे कब तक ।।

मिलती है परम शान्ति जिससे, मिटती है दुखद भाँति जिससे ।
ऐ 'पथिक' उसी परमेश्वर की तुम शरण न आओगे कब तक ।।

---

**सन्त-वचन—जीव की जन्मपत्री में हर एक सुख के अन्त में इसीलिए दुख लिखा है कि सुखास्वाद से विरक्त होकर परमात्मा की शरण**

**ले। शरण वही लेता है जो अहंकार अभिमान से रहित होता है। शरणागति में आस्था, श्रद्धा विश्वास की कमी महान बाधक है।**

---

तुम हो पथिक साधना पथ में सम्भल सम्भल कर पैर बढ़ाना ।।
अविनाशी के सम्मुख होकर नश्वर में मत प्रीत लगाना ।।

दृढ़ संकल्प और साहस के साथ प्रेम को पूर्ण बनाकर ।
आकृति नहीं किन्तु तुम अपनी, परम विरागी प्रकृति सजाकर ।
शान्त स्वस्थ समता में रहना, कभी न अपना लक्ष्य भुलाकर ।
पूर्ण तृप्ति सन्तुष्टि मिलेगी अपने में ही प्रभु को पाकर ।
आकर योग भूमिका में अब, भोग भूमि में लौट न जाना ।।

यदि तुम अपना मान किसी को, मन में ममता प्यार लिये हो ।
और साथ ही शान मान के, पद उपाधि अधिकार लिये हो ।
भौतिक जीवन रक्षा के हित, धन वैभव का भार लिये हो ।
भय लालचवश किसी व्यक्ति का अब भी यदि आधार लिये हो ।
तब तो तुम बोझिल हो देखो, बहुत कठिन है पैर उठाना ।।

कितने साधक चले रुक गये कुछ आगे भी रुक जायेंगे ।
रुकने वाले बढ़े हुए को देख देख कर पछतायेंगे ।
इस पथ में चञ्चल चित वाले जहाँ तहाँ ठोकर खायेंगे ।
जो कि तपस्वी त्यागी हैं वह सद्गति परम शान्ति पायेंगे ।
प्रेमी का कर्तव्य यही हैं सभी भाँति प्रभु को अपनाना ।।

देखो कितने अविवेकी जन मोह निशा में ही सोते हैं ।
दु:खद स्वप्न में गुरु वाक्यों से कोई जाग्रत भी होते हैं ।
ज्ञानवान भी सुखाशक्ति वश जग में मूढ़ बने होते हैं ।
आत्मज्ञान से वंचित रह कर यहाँ व्यर्थ जीवन खोते हैं ।
साथ न देगा सदा जगत् में जिसे मोहवश अपना माना ।।

साधन पथ में लक्ष्य न भूलो यही तुम्हारा मुख्य काम है ।
वहीं तुम्हें विश्राम मिलेगा जहाँ तुम्हारा परम धाम है ।
पर में नहीं स्वयं में रुकने से मिलता सबको विराम है ।
जिसका आना जाना रहता यहाँ उसी का 'पथिक' नाम है ।
बाहर नहीं स्वयं में ही है सबका निश्चित सत्य ठिकाना ।।

**सन्त-वचन—जब तक तुम्हें मिली हुई वस्तु अपनी प्रतीत होती है तब तक भय के रहते समर्पण पूर्ण नहीं हो सकता। मेरापने से 'मैं' पुष्ट होता है। वासना के रहते त्याग प्रेम पूर्ण नहीं होता।**

तुमको छलिया हम क्यों न कहें जब नहीं समझ में आते हो ।
निज छांह न छूने देते हो इक क्षण भी दूर न जाते हो ।।

तुम साधे हुए अगाध मौन, हो सबके अन्तर में बैठे ।
कोई तुमको बाहर खोजे, कोई जग के भीतर पैठे ।
तुम सबको नहीं दीखते हो, पर सबको राह बताते हो ।।

तुममें ही प्रलय सृजन होता तुममें प्राणी जगते सोते ।
तुमसे कर्मों का फल पाकर कोई हँसते कोई रोते ।
तुमही तो अपनी माया में सारा संसार नचाते हो ।।

कितने ही असुरों के समान, यूं कहकर के ललकार रहे ।
ईश्वर है तो सन्मुख आकर, अपने होने की बात कहे ।
तुम सुन लेते हो सबकी, पर सबको अपनी न सुनाते हो ।।

कोई तुमको पाना चाहे जप तप व्रतादि साधन बल से ।
पर आगे आता अहंकार तुम सब देखा करते छल से ।
फिर जिसे चाहते उसी पथिक को अपना भेद लखाते हो ।।

**सन्त-वचन—परमेश्वर जो दूर प्रतीत होते हैं वह केवल न जानने के कारण और संसार जो निकट प्रतीत होता है वह भी न जानने के कारण। परमेश्वर का ज्ञान होने पर दूरी मिट जायेगी। संसार का ज्ञान होने पर सम्बन्ध मिथ्या प्रतीत होगा।**

तुमको हो निशि दिन ध्याऊँ हे परमात्मन ।
अपने में तुमको पाऊँ हे परमात्मन ।।

प्रभु हम समान हैं शरण अनेक दुखारी ।
पर तुम हो एक मात्र सबके हितकारी ।
अब कभी न तुम्हें भुलाऊँ हे परमात्मन् ।।

तुम हो महान अगणित ब्रह्माण्ड समाते ।
हो सूक्ष्म इस तरह, नहीं दृष्टि में आते ।
कितनी ही खोज लगाऊँ हे परमात्मन ।।

ज्ञानी अति तृप्त स्वयं में तुमको पाकर ।
प्रेमी सन्तुष्ट तुम्हारे गुण गा गाकर ।
मैं सुन कर के ललचाऊँ हे परमात्मन ।।

तुम दीन बन्धु हम अतिशय दीन भिखारी ।
प्रभु कृपा करो यह हरो अविद्या सारी ।
मैं 'पथिक' कहाँ अब जाऊँ हे परमात्मन ।।

---

**सन्त-वचन—मानव वही है जो कुछ जानता भी है और मानता भी है। सभी दुर्बलताओं की निवृत्ति मानव जीवन की मांग है।**

---

तुमने मुझको कभी न छोड़ा, मैंने ही तुमसे मुख मोड़ा ।।

भोग सुखों में मुग्ध हुआ मन, तुम्हें भूलकर हे जीवनधन ।
परम तृप्ति की आशा लेकर नश्वर जग से नाता जोड़ा ।।

मिले हुये शुभ अवसर खोकर मैं अक्षम्य अपराधी होकर ।
देखूँ एक तुम्हीं को ऐसा, कभी कृपा का तार न तोड़ा ।।

क्या मुख लेकर मैं कुछ मागूँ, दोष बहुत है किस विधि त्यागूँ ।
तुम तक आने में मेरे ही, पाप बन रहे मग के रोड़ा ।।

जहाँ कहीं आता जाता हूँ, अपने को तुममें पाता हूँ ।
इतना अतुलित प्यार 'पथिक' पर, जितना भी समझें वह थोड़ा ।।

---

**सन्त-वचन—दूरदर्शी पुरुष ही असत्य की सीमा को पार कर सत्य तक देखते है, वे सत्य से मिलकर अमर जीवन प्राप्त करते हैं। संसार के सभी महापुरुष दूरदर्शी होने के कारण नित्य जीवन प्राप्त कर चुके हैं।**

---

तुम्हारी शान यही वीर बनो बढ़े चलो ।
शूरों का गान यही वीर बनो बढ़े चलो ।।

रुकने का नाम न लो असमय विश्राम न लो ।
सच्चे निष्काम बनो पुण्यों का दाम न लो ।
कहते भगवान यही वीर बनो बढ़े चलो ।।

दु:ख ले लो दो न कभी, सुख दो पर लो न कभी ।
गिरो उठो फिर सम्हलो, पर निराश हो न कभी ।
गति की पहचान यही वीर बनो बढ़े चलो ।।

जो जाये जाने दो जो आये आने दो।
मन को अपने स्वर में रोने दो गाने दो।
गुरु-प्रदत्त ज्ञान यही वीर बनो बढ़े चलो।।

सच्चे त्यागी होकर तुम बड़भागी होकर।
जग से कुछ चाहो मत, सत अनुरागी होकर।
'पथिक' स्वाभिमान यही वीर बनो बढ़े चलो।।

---

**सन्त-वचन—अपने कार्यों की उसी तरह परीक्षा करो जैसे वे दूसरे के हों। सभी के साथ शान्तियुक्त व्यवहार सभी जीवों के प्रति सहानुभूति, प्रत्येक परिस्थिति में अबोध शान्ति यह लक्षण वीर महापुरुष के हैं।**

---

तुम्हीं को हे आनन्दधन चाहता हूँ।
जगत् का मैं कोई न धन चाहता हूँ।।

न रह जाये मुझमें कहीं मोह माया।
प्रभो तुममें तल्लीन मन चाहता हूँ।।

वही अब करूँ जो कि तुम चाहते हो।
मैं चाहों का अपनी दमन चाहता हूँ।।

जहाँ चित हो चंचल जगत् के सुखों में।
वहीं पर मैं इसका शमन चाहता हूँ।।

मिटें जिस तरह से यह भव दुःख बन्धन।
मैं ऐसा ही साधन भजन चाहता हूँ।।

नहीं दिख रहा और कोई सहारा।
'पथिक' मैं तुम्हारी शरण चाहता हूँ।।

---

**सन्त-वचन—भगवान को वही चाहता है जो भगवान से कुछ नहीं चाहता। जो भगवान से धन, मान, भोग कुछ चाहता है वह परमात्मा से विमुख हो जाता है। निष्कामता पूर्ण परितृप्ति प्रदान करती है और योगी बना देती है। कामना सत्यानन्द से विमुख रखती है।**

---

तुम्हीं में यह जीवन जिये जा रहा हूँ।
जो कुछ दे रहे हो लिये जा रहा हूँ।।

तुम्हीं से चला करती प्राणों की धड़कन।
तुम्हीं से सचेतन अहंकार तन मन।
तुम्हीं में यह दर्शन किये जा रहा हूँ।। जो कुछ०।।

असत् के सदा आश्रय हो तुम्हीं सत्।
तुम्हीं में विषय विष तुम्हीं में है अमृत।
पिलाते हो जो कुछ पिये जा रहा हूँ।। जो कुछ०।।

जहाँ भी रहूँ ध्यान में तुमको देखूँ।
तुम्हीं में हूँ मैं ज्ञान में तुमको देखूँ।
'पथिक' मैं यह अरजी दिये जा रहा हूँ।। जो कुछ०।।

---

**सन्त-वचन—अपना कुछ न मानो, सब कुछ भगवान का जानो, मिले हुए का सदुपयोग करो, अपने दोषों के अतिरिक्त किसी अन्य को दुःखदाता न समझो। समर्पण वही सत्य है जहाँ सब कुछ स्वीकार है। दुःख भी स्वीकार है, सुख भी स्वीकार है। मान-अपमान जय-पराजय, हानि-लाभ सब स्वीकार है प्रतिकार नहीं है।**

---

तुमहीं सबके जीवन प्रान हे अन्तर्यामी भगवान ।।

कोई तुमको क्या पहिचाने जिसे जना दो सोई जाने।
मेरे परमाराध्य महान् हे अन्तर्यामी भगवान।।

तुमसे ही अणु-अणु में गति है, तुमसे रचती सृष्टि प्रकृति है।
अखिल विश्व के परमस्थान, हे अन्तर्यामी भगवान।।

तुम्हें न भूलूँ यही विनय है, फिर कुछ भी हो कहीं न भय है।
सब विधि रहे निरन्तर ध्यान हे अन्तर्यामी भगवान।।

हे सर्वेश्वर विभु अविनाशी, सर्वाधार परमसुख राशी।
'पथिक' सदा गाये गुणगान, हे अन्तर्यामी भगवान।।

---

**सन्त-वचन—जो किसी का नहीं तथा जिसका कोई नहीं उसके भगवान अपने आप सब कुछ हो जाते हैं। जो जिसका भक्त होता है उसके बिना उसे चैन नहीं पड़ती। संसार से कुछ नहीं चाहने वाला भगवान को पाता है।**

---

तुम्हें अपने प्रभु को पाना है ।।
अब तो सबकी ममता तज कर उनको ही अपनाना है।।१।।

तुम हो जहाँ वहीं रुकना है कहीं न आना जाना है।
कुछ न देख कर सूनेपन से कभी न कुछ भय लाना है।। २।।

आते कठिन विघ्न कितने हों उनसे प्राण बचाना है।
सेवा पथ में जब चलना हो कहीं न ठोकर खाना है।। ३।।

इधर-उधर कुछ भी न देखना, सुनना कुछ न सुनाना है।
केवल अपने जीवन धन में मन की सुरति जमाना है।। ४।।

काम, क्रोध, लोभादि प्रबल खल इनके वेग मिटाना है।
तृष्णा पापिन साथ लगी है जिससे पिण्ड छुड़ाना है।। ५।।

साथ न देगा यह जो कुछ है, क्यों इसमें सुख माना है।
तजि आलस्य 'पथिक' अब चेतो, व्यर्थ न समय गवाँना है।। ६।।

---

**सन्त-वचन—जो निज की देह में अटका है वही दूसरे में अटक जाता है। जो अटका है वही मूढ़ है। साधना सत्य को पाने की है असत्य को छोड़ने की नहीं। प्रकाश पाया जाता है अन्धकार छोड़ा नहीं जाता। ज्ञानी प्राप्ति को देखता है अज्ञानी त्याग को देखता है। अन्तर में जब सत्य उपलब्ध होता है तब बाहर त्याग हो जाता है।**

---

दु:खों से अगर चोट खाई न होती।
तुम्हारी प्रभो याद आई न होती।।

जगाते न यदि तुम निज ज्ञान द्वारा।
कभी हमसे कोई भलाई न होती।।

कहीं भी हमें चैन मिलती न जग में।
तुम्हीं ने जो चिन्ता मिटाई न होती।।

कभी जिन्दगी में ये आँखें न खुलतीं।
अगर रोशनी तुमसे पाई न होती।।

बनी तुमसे लाखों की हम मानते क्यों।
हमारी जो बिगड़ी बनाई न होती।।

किसी का कहीं भी नहीं था ठिकाना।
शरण यदि परम शान्तिदायी न होती।।

'पथिक' से पतित की भला कौन सुनता।
तुम्हारे यहाँ जो सुनाई न होती।।

**सन्त-वचन—सुख के भोगी सौभाग्यवान नहीं हैं क्योंकि उनके सुखभोग का अन्त अवश्य होगा। दुःखी सौभाग्यशाली होता है क्योंकि वह सुख से विरक्त होकर परमेश्वर की शरण लेता है। जो दुःख से डरता है वह कुछ नहीं कर सकता। दुःख दोषों को मिटाने आता है।**

दुनियाँ में कुछ भी पाकर के, कब तक सुख भोग सकोगे ।
अपना सत लक्ष्य भुला करके, कब तक सुख भोग सकोगे ।।

जीवन की घड़ियाँ बीत रहीं, इन्द्रियाँ तुम्हें हैं जीत रहीं ।
विषयों में चित्त फँसा करके, कब तक सुख भोग सकोगे ।।

जितना भी भोगों का सुख है, उसके पीछे निश्चित दुःख है ।
उसमें ही समय बिता करके, कब तक सुख भोग सकोगे ।।

क्षण-क्षण जिसमें है परिवर्तन, पाता है शान्ति न जिसमें मन ।
उससे ही प्रीति लगाकर के, कब तक सुख भोग सकोगे ।।

सब अन्त समय छुट जायेगा, जो कुछ है काम न आयेगा ।
जन बल धनवान कहा करके, कब तक सुख भोग सकोगे ।।

तपसी भोगी राजा रानी, मर गये करोड़ों अभिमानी ।
अपना वैभव यश गा करके, कब तक सुख भोग सकोगे ।।

जो शक्ति मिली परहित करलो, सच्चे प्रभु का आश्रय धर लो ।
वैभव अधिकार बढ़ा कर के कब तक सुख भोग सकोगे ।।

यदि सत्, स्वरूप का ध्यान नहीं, निष्काम प्रेम सदज्ञान नहीं ।
ऐ 'पथिक' कहीं आ जा करके, कब तक सुख भोग सकोगे ।।

**सन्त-वचन—जहाँ तक भोग है वहाँ तक अज्ञान है। ज्ञान में ही त्याग सुगम होता है। ज्ञान का सहज परिणाम त्याग है। अज्ञान में ही अहंकार है अहंकार ही भोगी है। ज्ञान में ही अहंकार का परिचय मिलता है।**

दुर्लभ है मानव जीवन में जड़ता का अवसान करना ।
दुर्लभ है मन वचन कर्म से सत्पथ में प्रस्थान करना ।।

दुर्लभ नहीं शक्ति का पाना बहुत शक्तिशली हैं जग में ।
जो कि भोग के लिये शक्ति का दुरुपयोग करते पग-पग में ।
दुर्लभ है दु:खियों की सेवा, प्रीति सहित सम्मान करना ।।

दुर्लभ नहीं अधिक धन पाना बहुत घनी देखे जाते हैं ।
कुछ तप के बल से धन पाकर क्षुद्र नदी सम इतराते हैं ।
दुर्लभ है अधिकार देखकर विनयपूर्वक दान करना ।।

दुर्लभ नहीं ज्ञान का होना, ज्ञानी बहुत मिला करते हैं ।
ब्रह्म तत्व की चर्चा करते माया में जीते मरते हैं ।
दुर्लभ जीवन मुक्ति के लिये, परम तत्व का ज्ञान करना ।।

दुर्लभ नहीं ध्यान का लगना, बगुला ध्यान लगा लेते हैं ।
अभ्यासी जन प्राण रोककर शून्य समाधि दिखा देते हैं ।
दुर्लभ है शाश्वत विशुद्ध चैतन्यरूप का ध्यान करना ।।

दुर्लभ है संतों की संगति दुर्लभ श्रद्धा का टिक जाना ।
दुर्लभ है निष्काम प्रेम औ दुर्लभ तप व्रत नियम निभाना ।
दुर्लभ है दैवी गुण द्वारा जीवन का उत्थान करना ।।

दुर्लभ वे नर जो कि अहंता ममता सकल दोष के त्यागी ।
दुर्लभ हैं सत असत् विवेकी दुर्लभ जग में परम विरागी ।
दुर्लभ 'पथिक' परम पद पाना आनन्दामृत पान करना ।।

---

**सन्त-वचन—सत्य परमात्मा नित्य प्राप्त है परन्तु अज्ञानवश दुर्लभ प्रतीत होता है। ज्ञान में, नित्य अनित्य को 'पर' को 'स्व' को 'जड़' को 'चेतन' को देखने से नित्य प्राप्त से प्रेम, और अनित्य के प्रति राग का त्याग, दुर्लभ नहीं दीखता।**

---

देख रहा हूँ ध्यान लगाये, तुम मुझ में हो मैं तुम में हूँ ।
जो जाने सोई यह गाये, तुम मुझ में हो मैं तुम में हूँ ।।

कहाँ-कहाँ पर भूले भटके, बन्द रहे पट अन्तर घट के ।
जब तक हम यह समझ न पाये, तुम मुझमें हो मैं तुम हूँ ।।

कोई तुम को निर्गुण माने, कोई तुमको सगुण बखाने ।
अकथ विश्वमय रूप बनाये, तुम मुझ में हो मैं तुम में हूँ ।।

तुम ऐसे हो या वैसे हो, जो कुछ भी हो या जैसे हो ।
'पथिक' यही आनन्द मनाये, तुम मुझ में हो मैं तुम में हूँ ।।

**सन्त-वचन—अपने में ही अपने प्रियतम को देखना दूरी मिटाना है। जिसके बिना तुम रह न सको उसे ही अपना प्रेमपात्र समझो।**

देखो किसने क्या पाया, मानव क्यों जग में आया ।।

आने वालों को देखो क्या लेकर वे आते हैं।
जाने वालों को देखो, क्या संग लेकर जाते हैं।
कुछ पुण्य किये या यूँ ही, यह नर तन व्यर्थ गँवाया ।। देखो०।।

उस लोभी को भी देखो सञ्चय का जिसे व्यसन है।
कितनी ही सम्पत्ति जोड़ी पर तृप्त न होता मन है।
कौड़ी न साथ जायेगी, फिर किसके लिये कमाया ।। देखो०।।

उस कामी को भी देखो, मन भरा या कि रीता है।
इच्छाएँ पूरी करते, कितना जीवन बीता है।
यह वही काम है जिसने, किसको-किसको न नचाया ।। देखो०।।

उस मोही को भी देखो, सबकी ममता में फूला।
निज देह गेह में फँस कर उस परमेश्वर को भूला।
यह मोह दु:खों की जड़ है, इसने किसको न रुलाया ।। देखो०।।

उस अभिमानी को देखो, यह विभव रहेगा कब तक।
उससे भी बढ़ कर जग में, हो गये करोड़ों अब तक।
मिट्टी में मिल गई उनकी जो दर्शनीय थी काया ।। देखो०।।

उस दानी को भी देखो, जितना बोता जाता है।
वह कई गुना बढ़कर ही, उसके सन्मुख आता है।
जिसने जितना दे डाला, उतना ही लाभ उठाया ।। देखो०।।

उस त्यागी को भी देखो, जो दु:खद दोष को तजकर।
निर्द्वन्द्व शान्ति पाता है, सत परमेश्वर को भज कर।
भोगी ने राग बढ़ाया, त्यागी ने प्रेम अपनाया ।। देखो०।।

उस ज्ञानयुक्त को देखो, जिसको न कहीं कुछ भय है।
दिख रहा ज्ञान में उसको, यह विश्व आत्मामय है।
जो कोई सन्मुख आया, उसका अज्ञान मिटाया ।। देखो०।।

उस प्रेमयुक्त को देखो, जिसका मन प्रभुमय होकर।
निजमय ही प्रभु को पाता, सब आशा चिन्ता खोकर।
वह 'पथिक' धन्य है जिसकी, प्रज्ञा में प्रेम समाया ।। देखो०।।

---

**सन्त-वचन—हम लघु में, क्षुद्र में अटक कर महान से, विराट से वञ्चित हैं। हमें छोड़ना खोना कुछ नहीं है, केवल आँखें खोल कर देखना है। चिन्मात्र सत्ता से अपने मैं को पृथक् देखना अज्ञान है। जो बाह्य रूप में अटक जाता है वह अरूप तक नहीं पहुँच पाता। जिसके द्वारा आँख से देखा जाता है वह आँख के पीछे ही है उसे जानने के लिये ज्ञान प्रकाश में अन्तरदृष्टि खोलने की साधना करो। क्षुद्र को देखने वाला क्षुद्र से, विराट को देखने वाला विराट से भर जाता है।**

---

देखो जो कोई देख सको है जीवनदाता कौन।।
शरणागत दीनों दु:खियों के है दु:ख मिटाता कौन।।

यह किसकी सत्ता है जिसके बिन तृण भी हिल न सके।
यह शक्ति कौन देता जिसके बिन कण भी मिल न सके।
सत नियम धर्म से पूर्ण व्यवस्थित विश्व बनाता कौन।।

वह कौन जागता रहता है जब हम सो जाते हैं।
है कौन याद रखता हमको जब हम खो जाते हैं।
उस विस्मृत अपने सत्स्वरूप की याद दिलाता कौन।।

होता भीषण संहार कहीं नव सृजन दीखता है।
यह मिटा मिटा कर रूप बनाना कौन सीखता है।
इस अशुभ असुन्दर से सुन्दर शुभ का निर्माता कौन।।

हँसते हैं खिल-खिल सुमन मुदित मन भ्रमर उछलते हैं।
सम्भ्रान्त 'पथिक' को भक्ति मुक्ति का मार्ग दिखाता कौन।।

---

**सन्त-वचन—देखने की दर्शन की क्षमता प्रज्ञा में होती है प्रज्ञा द्वारा ही ज्ञान में उसका दर्शन होता है जो दर्शन के योग्य है। दर्शन के योग्य सर्वोपरि महान सर्वाश्रय परमात्मा है, भगवान है।**

---

देखो जो कोई देख सको गुरुजन तो दिखाये जाते हैं।
इस अहंकार के द्वारा कितने दोष बढ़ाये जाते हैं।।

मतिमान चतुर अति कुटिल बने, जनता सेवक पदलोलुप हैं।
धनवान प्रशासन करते हैं गुणवान हटाये जाते हैं।।

स्वारथी समाज सुधारक हैं, उद्धारक शक्तिहीन दिखते।
कुछ धर्म प्रचारक धन लेकर जीविका कमाये जाते हैं।।

जो प्राप्त भोग का भाग न दे, भोगते अकेले ही सब कुछ।
तब वही भोग भोजन ही, उस भोगी को खाये जाते हैं।।

पण्डित कहते गोदान करो, पर लोभ में दिया नहीं जाता।
लोभी से बीस आने के ही गोदान कराये जाते हैं।।

जो स्वर्ग चाहते पुण्य बिना, पापों के होते नर्क नहीं।
वह व्यक्ति लोभ या भय वश ही तीरथ में नहाये जाते हैं।।

ईश्वर की प्रकृति में सर्वोपरि इस अहंकार की लीला है।
इसके मनमाने कितने ही भगवान बनाये जाते हैं।।

भक्तों के प्रेम में नाचे थे भगवान कभी आनन्दित हो।
अब अहंकार की तृप्ति हेतु भगवान नचाये जाते हैं।।

जिसका अस्तित्व सत्य ही है, जो दिखता आत्मज्ञान द्वारा।
उस अहंकार के पार 'पथिक' निज प्रभुमय पाये जाते हैं।।

---

**सन्त-वचन—देह में दोष होने पर भी दोष नहीं दीखते क्यों कि देह से प्रीति है। गुरुजनों में दोष न होने पर भी दोष दीखने लगते हैं क्योंकि प्रीति की कमी है।**

---

देखो मिलता क्या है संसार में सुख लेते लेते।
भ्रमित हो माया के विस्तार में सुख लेते लेते।।

शक्ति जो मिलती है वह धीरे-धीरे घटती जाती।
प्रीति जिससे होती वह वस्तु नित्य ही हटती जाती।
तृप्ति होती न कहीं भी प्यार में सुख लेते लेते।।

मिला जो कुछ भी तुमको उसके ही मोही बन बैठे।
अधिक वैभव पद पाकर भोगी हरि द्रोही बन बैठे।
स्वयं को भूल गये अधिकार में सुख लेते लेते।।

दोषों का त्याग करके हो सकते सब कुछ के दानी ।
देह के अभिमानी तुम हो सकते आत्म ज्ञानी ।
समय निकल जाता व्यवहार में सुख लेते लेते ।।

बड़ा पुरुषार्थ यही है जीवन का उद्धार करना ।
योग को लक्ष्य बना भोगों की सीमा पार करना ।
'पथिक' अब मत रुकना अविचार में सुख लेते लेते ।।

---

**सन्त-वचन—सुखसक्ति ही सेवा को त्याग को तप को प्रेम को पूर्ण नहीं होने देती। सुख का लालच दुःख का भय अनेकों अनर्थों को पुष्ट करता है। सुख-दुःख के बन्धन से तभी मुक्त हो सकते हैं जब स्वयं आनन्द से अभिन्न हो जायें। मृत्यु का भय तभी छूट सकता है जब नित्य जीवन से अभिन्न हो जायें।**

---

देव ! दीन अनाथ के तुम एक प्राणाधार हो ।।
शक्तिमान महान योगीराज सुषमासार हो ।।

आप परित्राता सुजन के दीन के बलहीन के ।
पतित जन को करते पावन आप ही करतार हो ।।

हे प्रभो ! तुम परम हितकारी, भिखारी हम खड़े ।
ज्ञान सद्विज्ञान भिक्षा, आप डालन हार हो ।।

आप ही के कृपा बल का अब सहारा है हमें ।
दिव्य जीवन दिव्य बलयुत शान्ति के अवतार हो ।।

आश अभिलाषा तुम्हीं से शरण लो सद्‌बुद्धि दो ।
'पथिक' निर्बल के परम प्रभुवर तुम्हीं आधार हो ।।

---

**सन्त-वचन—शरण ही सफलता की कुञ्जी है तुम उस महान की शरण लो जो शरणागत को महान् बनाने में सक्षम हो। आस्तिक एक की और नास्तिक अनेक की शरण लेता है।**

---

धन के लोभी धन मद छोड़ो, दाता प्रभु से नाता जोड़ो ।

धन से कल्पित सुख मिलता है शान्ति नहीं मिलती है धन से ।
धन तो छिन जाता छुट जाता लोभ नहीं जाता है मन से ।
धन से मन्दिर बन जाते हैं मूर्ति प्रतिष्ठित हो जाती है ।

धन से प्रेम नहीं मिलता है धन से भक्ति नहीं आती है।
धन से गीता वेद मिलेंगे धन से ज्ञान नहीं मिलता है।
धन से भोग सुलभ होते हैं पर भगवान नहीं मिलता है।
चेतो लोभ पाश को तोड़ो धन के लोभी धन मद छोड़ो ।।

धन से उपदेशक मिल जाते पर अविवेक नहीं मिट पाता।
धन के बल से सुखासक्त मानव का मोह नहीं है जाता।
धन देकर शिक्षक रख सकते पर मेधावी बुद्धि न मिलती।
धन है वस्तु प्राप्ति का साधन, धन से आत्म विशुद्धि न मिलती।
धन से सुन्दर चित्र सजा लो सद्‌चरित्र धन से न मिलेगा।
दैवी सम्पद हीन धनी का हृदय कमल धन से न खिलेगा।
धन के लोभ पात्र को फोड़ो धन के लोभी धन मद छोड़ो ।।

धन से विटामिन्स मिलते हैं धन से शक्ति नहीं मिलती है।
धन से ऑक्सीजन मिल जाता धन से साँस नहीं हिलती है।
धन के बल पर सर्जन मिलते दिल दिमाग जोड़ देते हैं।
पर धन से अमरत्व न मिलता तन को प्राण छोड़ देते हैं।
धन के बल पर कूलर लगा कर शीतल कर लो भव्य भवन को।
पर धन द्वारा शान्त नहीं कर सकते हो सन्तापित मन को।
धन की तृष्णा से मुख मोड़ो धन के लोभी धन मद छोड़ो ।।

धन के बल पर तीर्थ धाम में मन्दिर में प्रवेश पा सकते।
पर धन की रिश्वत देकर के कोई स्वर्ग नहीं जा सकते।
धन छुटने के पहले ही तुम पात्र देख दानी बन जाओ।
प्रभु की कृपा समझ कर भीतर सरल निरभिमानी बन जाओ।
धन की रक्षा करते-करते धन के लोभी मर जाते हैं।
किन्तु परम-प्रभु के प्रेमी उदार दानी बन तर जाते है।
'पथिक' कथन को सार निचोड़ो धन के लोभी धन मद छोड़ो ।।

---

**सन्त-वचन—जो धन से भोग-सुखों से विरक्त नहीं हो पाता अवश्य ही उसका धर्ममय जीवन नहीं है। धर्म से विरक्ति होती है। दूसरों के हित का ध्यान रख कर अहिंसात्मक कर्म करने से धर्मपूर्ण होता है।**

---

धन्य जीवन है जो कि निर्विकार होता है।
वह घड़ी धन्य है जब सद्विचार होता है ।।

अपने ही दोषों से दु:ख बार-बार होता है।
छाया अज्ञान का जब अन्धकार होता है।।

क्यों उन्हें भूले हो जिनसे तुम्हें सब कुछ मिलता।
समझो प्रभु का हृदय कितना उदार होता है।।

जगत् की प्रीति में क्या रीझे हो उधर देखो।
बिना बदले में जहाँ सबका प्यार होता है।।

कितनी उनकी है दया जो कोई चाहे देखे।
उनके गुण गान से पापी भी पार होता है।।

क्यों न तर जायें उबर जायें पतित लाखों जब।
नाम लेने से ही पापों का छार होता है।।

'पथिक' अब सावधान हो गहो उन्हीं की शरण।
जहाँ पतितों का सदा ही सुधार होता है।।

---

**सन्त-वचन—जितने भी साधन हैं सब चित्त की शुद्धि के लिये हैं। चित्त शुद्ध होने पर कुछ करना शेष नहीं रहता क्योंकि भगवान तो अपनी कृपा से ही मिल जाते हैं।**

---

न भूलो परमेश्वर का ध्यान, यही तो अपने जीवन प्रान।

यह सब सङ्गी कुछ ही दिन के, तुम चल रहे भरोसे जिन के।
समझ कर यह संभ्रम अज्ञान, न भूलो परमेश्वर का ध्यान।।

जग के वैभव बल जन धन में, रहना निरासक्त इस तन में।
छोड़ के इन सबका अभिमान, न भूलो परमेश्वर का ध्यान।।

केवल सर्वाधार यही है, सुन्दर सुखमय सार यही है।
जो कि अति सूक्ष्म अतुल महान, न भूलो परमेश्वर का ध्यान।।

ममता देह गेह की तजकर आ जाओ सतपथ में भज कर।
'पथिक' जो तुम चाहो कल्यान, न भूलो परमेश्वर का ध्यान।।

---

**सन्त-वचन—निकट सत्य से दूर रहना और दूर प्रतीत होने वाले असत्य के पीछे जन्मान्तरों से दौड़ते रहना ही प्रमाद है। इसी प्रमादवश**

**जो हमारे अति निकट है, जिसे पाने के लिये किसी देश काल की ओर नहीं देखना है उसे ही हम नहीं प्राप्त कर पाते हैं।**

---

नमो नारायण नमो नारायण नमो नारायण ही नित गाऊँ ।।

यही एक अभिलाष हृदय की किस विधि से प्रभु तुम को पाऊँ ।
तुममें ही अपने को खोकर, हे प्रियतम तुममय हो जाऊँ ।।

तुम्हीं बताओ कौन जतन से पूरी हो यह मेरी आशा ।
किस प्रकार के प्रिय शब्दों में, अपने प्रेमोद्गार सुनाऊँ ।।

निज अन्तर की अकथ वेदना, मूक भावनाओं के द्वारा ।
कब तक चुपके-चुपके रहकर, कैसे उर की प्यास बुझाऊँ ।।

मैं अति दीन मलीन अकिंचन, आज क्या करूँ क्या न करूँ मैं ।
बोलो किस विधि प्रिय मनमोहन, तुम संग मिलनान्द मनाऊँ ।।

किस विधि मुक्त हो सकूँ अब मैं जग प्रपंच के बंधन दुख से ।
मुझे वही साधन बतला दो कैसे मन का राग मिटाऊँ ।।

नाथ तुम्हारी कृपा-किरण से चमक उठे यह मेरा जीवन ।
योग्य तुम्हारे बनूँ 'पथिक' मैं तुमको निज सर्वस्व बनाऊँ ।।

---

**सन्त-वचन—बीते हुये का मनन न करो, आगे की चिन्ता न करो, वर्तमान में किसी संयोग में रस न लो, परम प्रभु के लिये व्याकुल रहो—यही भजन है।**

---

नाथ हम भी शरण में है आये हुये ।
आप ही मैं हैं मन को मनाये हुये ।।

मुझ पतित को प्रभो अब तो पावन करो ।
अपने पापों से हम हैं लजाये हुये ।।

दब रहे हैं दु:खों की कठिन भीड़ में ।
मुक्त होने की आशा लगाये हुये ।।

अब सुनो हे दयामय हमारी विनय ।
दीन-दु:खिया बहुत हम सताये हुये ।।

जब कि मायेश हम पर दयादृष्टि हो ।
तब बचेंगे तुम्हारे बचाये हुये ।।

और किससे कहूँ मैं व्यथा की कथा ।
देख लो आप जो हम छिपाये हुये ।।

अब उबारो हमें मोह के भार से ।
बहुत दिन हो चुके हैं भुलाये हुये ।।

रम रहे हो तुम्हीं मेरे मन प्रान में ।
फिर भी रहते स्वयं को चुराये हुये ।।

'पथिक' के बीच से दो मिटा आवरण ।
देखें सब में तुम्हीं को समाये हुये ।।

---

**सन्त-वचन—सच्ची व्याकुलता ही भगवान तक पहुँचाने में समर्थ है। उसके बिना कहीं चैन न लो । रह-रह कर हृदय से उन्हें पुकारते रहो ।**

---

नाम प्रभु का सदा ही लिये जाइये।
बस लिये जाइये, बस लिये जाइये।।

प्रभु को पाने का सुगम सुन्दर सहारा नाम है ।
दु:खद माया जाल से छुटने का चारा नाम है ।
डूबते को यह दिखा देता किनारा नाम है ।
कितने प्रिय होंगे जब उनका इतना प्यारा नाम है ।
नाम में मन निछावर किये जाइये ।। नाम०।। १।।

भक्त ध्रुव प्रहलाद ने महिमा दिखाई नाम की ।
सन्त नानक सूर तुलसी कीर्ति गाई नाम की ।
समझ लो मीरा ने कैसी लौ लगाई नाम की ।
स्वयं नामी भी न कर पाये बड़ाई नाम की ।
नाम के नाते सब कुछ दिये जाइये ।। नाम०।। २।।

सोचिये अगणित अधम जन, नाम से ही तर गये ।
मेरु सद्दश महान् दु:ख भी नाम से ही हर गये ।
कठिन पाप समूह तत्क्षण नाम लेते बिखर गये ।
असम्भव को भक्त सम्भव नाम लेकर कर गये ।
नाम ध्वनि को सुधावत पिये जाइये ।। नाम०।। ३।।

ब्रह्मज्ञानी दिव्य रस को खोज पाते नाम में ।
स्वयं ही हरि प्रगट होते चले आते नाम में ।
सृष्टि के सब रूप रंग भी हैं समाते नाम में ।
'पथिक' थककर नित्य ही विश्राम पाते नाम में ।
नाम का आश्रय ले बस जिये जाइये ।। नाम०।। ४।।

---

**सन्त-वचन—अवलम्बन लेना ही है तो अविनाशी के नाम का लो। विनाशी का नाम लेने से वस्तु छूट जायेगी नाम मन में रह जायेगा इसीलिये वियोग का प्रभाव पड़ेगा। अविनाशी कभी न छूटेगा उसके नित्य योग का अनुभव होगा।**

---

निज सत्स्वरूप की जिसे पहिचान नहीं है ।
वह अहंकार में है सावधान नहीं है ।।

जो अपने दुर्विकारों के रहता है वशीभूत ।
वह पाप के पथ में है पुण्यवान नहीं है ।।

दुर्भाग्य से अपने को वो है मानता विद्वान ।
जिस को निज अज्ञान का भी ज्ञान नहीं है ।।

भोगों की अधिकता से वहीं होता मन मलीन ।
दु:खियों के लिये सुख का जहाँ दान नहीं है ।।

वह धन्य है जिसको मिला संतोष परम धन ।
धन की जिसे है चाह वो धनवान नहीं है ।।

तब तक किसी को शान्ति कहीं मिल नहीं सकती ।
आनन्दमय भगवान का यदि ध्यान नहीं है ।।

सद्भक्ति मुक्ति प्राप्त वो कर पाता है 'पथिक' ।
जिसको किसी भी वस्तु का अभिमान नहीं है ।।

**सन्त-वचन—अपना अनुभव करने के लिये अपने से भिन्न मत देखो। निज स्वरूप का बोध अभ्यास से नहीं सर्वत्याग से होता है। अपने आप में सन्तुष्ट होने से माना हुआ मैं मिट जाता है।**

पतितों का संसार में उद्धार करने वाले प्रभु तुम।
जग प्रपंच विस्तार में निस्तार करने वाले प्रभु तुम।।

जब देता कोई न सहारा, छुट जाता जन धन बल सारा।
उस असहाय पुकार में उपकार करने वाले प्रभु तुम।।

तुमसे मिलती सबको शुभमति तुमसे ही जीवन में सद्गति।
पापों के प्रतिकार में उपचार करने वाले प्रभु तुम।।

महापुरुष जो तुमको भजते उनको तो तुम कहीं न तजते।
उनके भावोद्गार में शुचि प्यार करने वाले प्रभु तुम।।

तुम ही जानो सबके चित्त की तुम करते हो सब कुछ हित की।
'पथिक' भवार्णवधार में अब पार करने वाले प्रभु तुम।।

**सन्त-वचन—यदि परमात्मा को जानना चाहते हो तो विरक्त ज्ञानी की आज्ञा पर चलो। संसार में लाखों मनुष्य 'स्व' को न जान कर 'पर' की अर्थात् अन्य की ओर देखते हुये, पर कथा कहते और सुनते हुये समय नष्ट करके विनाश को प्राप्त हो रहे हैं।**

परमप्रभु की प्रिय शाश्वत आत्माओ,
तुम्हें देख कुछ गीत गाने की मन में।।
जो कुछ भी अभी तक समझा है मैंने।
वही सब तुम्हें भी सुनाने की मन में।।

परम तत्वदर्शी जगत् को ही प्रभुमय,
प्रभु को जगतमय सतत् देखते हैं।।
इसी भाव से सर्व रूपों में अपने।
सर्वस्व प्रभु को ही पाने की मन में।।

मुझे देखकर कोई धोखा न खाना,
नहीं दे सकूँगा मैं वरदान कोई।।

कदाचित तुम्हें जो भी कुछ मिल चुका है ।
वह छिन जायेगा यह बताने की मन में ।।

तुम्हारा वही है जो तुमसे न छूटे,
कभी भी कहीं भी जो तुमको न छोड़े ।।

उसे खोजना मत पहिचान लेना ।
न रखना कहीं आने जाने की मन में ।।

बहुत सुन चुके हो हमारी भी सुन लो,
कभी आयेगा जो अभी उसको देखो ।।

जो कुछ मुझ 'पथिक' को दिखाया गया है ।
वही सब तुम्हें भी दिखाने की मन में ।।

---

**सन्त-वचन—अहंकार को प्रभु में समर्पित जान कर प्रभु की मर्जी से सब कुछ होते देखो। सब स्वीकार करते जाओ। हानि-लाभ अच्छा-बुरा सब माना हुआ भाव है।**

---

परम प्रभु सभी दशा में सदा तुम्हारा प्यार पाऊँ मैं ।
मुझे जब तुम्हीं दिखाते तभी मुक्ति का द्वार पाऊँ मैं ।।

सदा तुमसे ही गति निर्बाध, पूर्ण करते सब मन को साध ।
तुम्हीं से मिलता प्रेम अगाध, शरण अधिकार पाऊँ मैं ।।

नित्य चिन्मय तुम सर्वाकार, तुम्हीं में चलता यह संसार ।
तुम्हीं देते सद्भाव विचार, मोह का पार पाऊँ मैं ।।

तुम्हीं से मिलता है सद्ज्ञान तुच्छ को करते तुम्हीं महान् ।
जहाँ हर लेते हो अभिमान, तुम्हीं को सार पाऊँ मैं ।।

तुम्हारा जब लेता हूँ नाम तभी मिलता मुझको विश्राम ।
'पथिक' हूँ अब होकर निष्काम, आत्म उद्धार पाऊँ मैं ।।

---

**सन्त-वचन—जब ज्ञान का अहंकार नहीं रहता तभी अज्ञान की सरलता में परमात्मा का स्वयं में ही अनुभव होता है। सरलता में ही प्रभु की कृपा का अनुभव होता है। 'मैं' पन और मेरापन के पीछे चिन्मात्र सत्ता की अनन्तता का अनुभव करो। ज्ञान में जो परम सुन्दर देखा जाता है**

**प्रेम में उसी के नित्य योग का अनुभव होता है। ईश्वर को पाने की अभिलाषा भी प्रबल लोभ है महत्वाकांक्षा है और अहंकार में ही है।**

---

परम प्रियतम प्रभु सर्वाधार आपका का प्यार पा जाऊँ ।
अहा फिर क्या ! अनुपम आनन्द मुक्ति का द्वार पा जाऊँ ।।

सदा तुम तक हो गति निर्बाध यही है इस जीवन की साध ।
हमारे मिट जायें अपराध, शरण अधिकार पा जाऊँ ।।
तुम्हारी लीला अलख अपार, भुवन मनमोहन लीलाधार ।
तुम्हारे छद्म वेश विस्तार, मोह का पार पा जाऊँ ।।

मुझे दे दो वह पावन ज्ञान समझ पायें हम तुम्हें महान् ।
तुम्हारा दृढ़ हो जाये ध्यान, यही आधार पा जाऊँ ।।

युगों से खोज फिरे संसार, 'पथिक' पर कृपा करो इस बार ।
तुम्हारा निरावरण अधिकार, प्रभो आकार पा जाऊँ ।।

---

**सन्त-वचन—जिसमें गुण का अभिमान है उसी को अन्य के दोष दिखते हैं। सभी दोषों की दृष्टि भिन्नता से होती है। सभी गुणों की परिपुष्टि एकता से होती है। यथार्थ विवेकी और प्रेमी ही एकता को पूर्ण कर सकता है। राग और द्वेष रहते एकता पूर्ण नहीं होती।**

---

परमात्मन सुखधाम मेरे अन्तर्यामी, सब विधि तुम्हें प्रणाम मेरे अन्तर्यामी ।।

जीवनेश तुम हो परेश तुम, अनुपम ललित ललाम मेरे अन्तर्यामी ।।

हृदय बिहारी तुम दुखहारी, प्रेमरूप निष्काम मेरे अन्तर्यामी ।।

जय अखिलेश्वर जयति महेश्वर, ध्याऊँ आठोंयाम मेरे अन्तर्यामी ।।

भव भय भंजन असुर निकंदन, तुम्हीं राम तुम श्याम मेरे अन्तर्यामी ।।

तुम सुखराशी स्वयं प्रकाशी, हो व्यापक सब ठाम मेरे अन्तर्यामी ।।

अविचल निर्भय हे करुणामय, पथिक न भूले नाम मेरे अन्तर्यामी ।।

---

**सन्त-वचन—या तो अपने में मन लगाओ या फिर भगवान में मन लगाओ। आत्मा के निकट मन को रखना ही उपासना है। या तो अनुरागी बनो या निर्विकल्पता प्राप्त करो जो सब शक्तियों का मूल है।**

---

परमेश आनन्दधाम हो नारायणाय नमो नमः ।
सर्वज्ञ पूरणकाम हो नारायणाय नमो नमः ।।

ऐसे दयानिधान तुम भक्तों के जीवन प्राण तुम ।
मोहन नयनामिराम हो, नारायणाय नमो नमः ।।

अद्वैत अज अनन्त तुम अव्यय श्रीमन्त कन्त तुम ।
तुम राम हो तुम श्याम हो नारायणाय नमो नमः ।।

सर्वस्व सत्यसार तुम श्रद्धेय विभु अपार तुम ।
अनुपम सुखद ललाम हो नारायणाय नमो नमः ।।

पावन परम उदार तुम प्यारे पथिक आधार तुम ।
तुम सर्वमय सब ठाम हो नारायणाय नमो नमः ।।

---

**सन्त-वचन—परम प्रभु के नाते स्वकर्म करते रहना ही भजन है अथवा समर्पण ही सच्चा भजन है। हृदय प्रभु प्रेम से पूर्ण हो, मन निर्विकल्प हो, बुद्धि समस्थित हो यही वास्तविक भजन है।**

---

परमेश नमो विश्वेश नमो अखिलेश महान तुम्हीं हो ।
हृदयेश रमेश महेश नमो व्यापक भगवान तुम्हीं हो ।।

घनश्याम नमो श्रीराम नमो हे भक्तन हित अवतारी ।
सुखधाम नमो सब ठाम नमो अनुपम मतिमान तुम्हीं हो ।।

सद्रूप नमो चिद्रूप नमो आनन्द रूप अविकारी ।
इस ओर नमो उस ओर नमो सर्वत्र समान तुम्हीं हो ।।

हम माया में हैं भूल रहे मायापति शरण तुम्हारी ।
उद्धार करो प्रभु पार करो हे दयानिधान तुम्हीं हो ।।

तुमसे गति है तुमसे मति है तुम परम सुहृद हितकारी ।
हे नटनागर सद्गुण आगर सर्वत्र सुजान तुम्हीं हो ।।

दिन बीत रहे इस जीवन के सुध ले लो हृदय बिहारी ।
हम 'पथिक' पतित के रक्षक नित करते कल्याण तुम्हीं हो ।।

---

**सन्त-वचन—अहं मिटे बिना भगवान में भक्ति नहीं होती। सब कुछ से विमुख होने पर साधन तीव्र होता है। कामना रहित होने पर ही कोई समर्पण कर सकता है। अनुकूलता ने ही भगवान से विमुख कर रखा है।**

---

परमेश्वर का ध्यान न भूलो,
परमतत्व का ज्ञान न भूलो ।
इस दुनियाँ में सार यही है, जीवन का आधार यही है ।
तुम इसकी पहचान न भूलो ।। परमेश्वर।।

सब सुख का भण्डार यही है, पावन प्रेमागार यही है ।
निशिदिन प्रभु गुणगान न भूलो ।। परमेश्वर।।

दुःखों का उपचार यही है, भवनिधि में पतवार यही है ।
सन्तों का सन्मान न भूलो ।। परमेश्वर।।

सत्याचार विचार यही है, सर्वधर्ममय सार यही है ।
दया प्रेम का दान न भूलो ।। परमेश्वर।।

आश्रय सभी प्रकार यही है, सब विधि पथिक पुकार यही है ।
अपना लक्ष्य महान न भूलो ।। परमेश्वर।।

---

**सन्त-वचन—कामना के रहते विषयों के दासत्व से छुटकारा नहीं मिलता। कामना की उत्पत्ति से दुःखारम्भ होता है, पूर्ति से सुख प्रतीत होता है कामना की निवृत्ति से आनन्द मिलता है। कामनाओं का अन्त करना ही जीवन का मंगलमय सदुपयोग है।**

---

प्रभु अपने शरणागत को स्वीकार किया करते हैं ।
अधमोद्धारक हैं सबका उद्धार किया करते हैं ।।

कितना कोई पापी हो, द्वेषी परसन्तापी हो ।
वे सुहृद परमगुरु सबका उपचार किया करते हैं ।।

पूरी होती भक्तों की, बनती है अनुरक्तों की ।
वे विमुख जनों को भी तो शुचि प्यार किया करते हैं ।।

जिसको सब हैं ठुकराते, प्रभु उसको भी अपनाते ।
करुणनिधि ही तो सबका निस्तार किया करते हैं ।।

जो अटक रहा हो आकर, जो भटक रहा हो पाकर ।
ऐसे सम्भ्रान्त पथिक को प्रभु पार किया करते हैं ।।

---

**सन्त-वचन—प्रेम तभी पूर्ण होता है जब कुछ चाह नहीं रहती चाह कामना तभी नहीं रहती जब आत्मीयता पूर्ण होती है। ज्ञान स्वरूप से प्रीति करना मोक्ष का सुगम साधन है। प्रकृति क्षण क्षण प्रभु का सन्देश दे रही है। प्रेम में होकर ही परम प्रभु को प्राप्त अनुभव करोगे। प्रेम के लिये आसक्ति अहंकार त्याग करना होता है।**

---

प्रभु अनेक रूपों में कब क्या कर जाते हो ।
कृपा करो दयासिन्धु तुम्हें देख पायें हम ।।

सो जाते जब हम तुम्हीं तो जगाते हो।
कृपा करो दयासिन्धु तुम्हें देख पायें हम।।
भूलते हैं तुमको जब हम इस संसार में।
अपने को खो देते किसी के भी प्यार में।
असत् को सत् मानते हैं जब हम अविचार में।
दुखाघात सहते जब मोह अन्धकार में।
पथ में कहीं गिरते जब तुम्हीं तो उठाते हो।
कृपा करो दयासिन्धु तुम्हें देख पायें हम।। १।।

जहाँ बने भोगी हम शक्ति हीन होते गये।
पर में सुख मान लिया, पराधीन होते गये।
जितने अभिमानी बने उतने दीन होते गये।
जगत् के प्रपञ्च में ही अधिक लीन होते गये।
वहीं हमें मुक्ति-युक्ति साधना बताते हो।
कृपा करो दया सिन्धु तुम्हें देख पायें हम।। २।।

तुम से ही हमें सदा प्यार मिला मान मिला।
हम तो अति मूढ़ ही थे, तुम से ही ज्ञान मिला।
शुभ सुन्दर जो भी मिला, तुम से ही दान मिला।
जो न जानते थे हम वह भी सब जान मिला।
तुम समर्थ लघु को ही महत्तम बनाते हो।
कृपा करो दया सिन्धु तुम्हें देख पायें हम।। ३।।

समझते थे तन मन धन सभी कुछ हमारा है।
दृष्टि खुली तब दिखता तुम्हारा ही सारा है।
अहंकार को तो अभिमान सदा प्यारा है।
इसे मिटा दो इससे सब कोई हारा है।
साधक के तुम्हीं संताप सब मिटाते हो।
कृपा करो दयासिन्धु तुम्हें देख पायें हम।। ४।।

जानते हो सब मन की तुम्हें क्या सुनायें हम ।
छिपा नहीं सकते कुछ तुम्हें क्या दिखायें हम ।
तुम में हम तुम हम में खोज क्या लगायें हम ।
नित्य प्राप्त हो जब तुम कहाँ जायें आयें हम ।
'पथिक' के बाहर भीतर तुम्हीं तो समाये हो ।
कृपा करो दया सिन्धु तुम्हें देख पायें हम ।। ५।।

---

**सन्त-वचन—प्रभु को देखना है तो सब खोज छोड़ो और शान्त हो जाओ। प्रार्थी पर प्रभु की दया होगी तो यही बतायेंगे कि दर्शन की याचना न करो दृष्टि खोलो और देखो कि तुम प्रभु में ही हो। प्रभु प्रार्थी पर कृपा करेंगे तो दृष्टि के आगे जो अहंता ममता की दीवार है उसे तोड़ देंगे। प्रभु को पाना नहीं है दृष्टि खोल कर स्वयंमय देखना है।**

---

प्रभु कृपा महान है ।।
जहाँ सुलभ सत्य संग अहं निरभिमान है ।। प्रभु०।।

जो किसी विपत्ति में न धैर्य छोड़ता कभी ।
जो स्वधर्म कर्म से न मुख मोड़ता कभी ।
शक्ति सदुपयोग का जहाँ कि सतत ध्यान है ।। प्रभु०।।

जगत् में अप्राप्त वस्तु की न चाह हो जहाँ ।
इर्ष्या विरोध क्रोध की न राह हो जहाँ ।
मुक्ति भक्ति के लिये जिसे कि आत्म ज्ञान है ।। प्रभु०।।

जो असंग रह सके, जिसे न क्षोम हो कहीं ।
जन धन अधिकारं भोग का न लोभ हो कहीं ।
जब कि शत्रु मित्र लाभ हानि में समान है ।। प्रभु०।।

शान्ति दीखती जिसे सकल विकार त्याग में ।
रहे कर्म व्यस्त पर, फँसे न चित्त राग में ।
जो कि प्राप्त भोग में सतर्क सावधान है ।। प्रभु०।।

जब वियोग का न भय संयोग की न दासता।
दृष्टिगत जिसे सुखैश्वर्य तुच्छ भासता।
वहीं कृपापात्र श्रेष्ठ परम भाग्यवान है ।। प्रभु० ।।

पतित पावनी समर्थ कष्ट नाशिनी कृपा।
दु:ख में छिपी अनन्त सुख प्रकाशिनी कृपा।
'पथिक' कृपा का विचित्र देखता विधान है ।। प्रभु० ।।

---

**सन्त-वचन—सुखद का संयोग मिलने पर प्रभु की दया समझते रहो और जब दु:खद परिस्थिति आये तब प्रभु की कृपा का अनुभव करो। भोगी दया से सुख देखता है। योगी कृपा द्वारा आनन्दानुभव करता है। दया से जो कुछ सुखद सुन्दर मिला है उससे सेवा करो कृपा से जो कुछ छिन रहा है उसके प्रति मोह लोभ तथा सुखासक्ति का त्याग करो।**

---

प्रभु तुम कब कैसे आते हो ।।

क्या हम भी तुमको पायेंगे, अपने उद्गार सुनायेंगे।
यह जीवन पूर्ण बनायेंगे, सब बन्धन दुख मिट जायेंगे।
मेरी इस सहज लालसा को देखें कब सफल बनाते हो ।।

अपने में तुमको देखे बिन, बीते जाते है जीवन दिन।
पापों अपराधों को गिन गिन, दिखता है पाना बहुत कठिन।
फिर भी हम जैसे हैं हमको, देखें क्या राह बताते हो ।।

यह सच है हम में भक्ति नहीं प्रेमी की सी अनुरक्ति नहीं।
भोगों से हुई विरक्ति नहीं, हम हैं अधिकारी व्यक्ति नहीं।
सुनता हूँ सच्चे प्रेमी को ही इच्छित दरश दिखाते हो ।।

हम है कठोर अति कृपण हृदय, पर तुम तो हो अतिकरुणामय।
तुम पापों का कर सकते क्षय, हर सकते हो सब संकट भय।
हम 'पथिक' के लिये अब देखें कैसे क्या रूप बनाते हो ।।

---

**सन्त-वचन—प्रभु को पाने की अभिलाषा उनकी कृपा से पूर्ण होती है और सांसारिक कामनायें उनकी दया से पूरी होती है। प्रतिकूलताओं के दु:ख में कृपा का अनुभव करो। अनुकूलता का सुख सुलभ होने**

**पर उनकी दया का स्मरण रखो। प्रभु को पाने के लिये केवल स्मरण ही सुगम साधन है क्योंकि वे नित्य प्राप्त ही हैं संसार की स्मृति में उनकी विस्मृति हो गई है।**

प्रभु तुम साँचे सबके मीत ।।
किसी किसी ने तुमको जाना और तुम्हें जैसा भी माना ।
भक्तों के भावानुसार बन नित्य निवाही प्रीत ।।

तुम रहते हो सदा संग में शक्ति तुम्हारी अंग अंग में ।
किन्तु तुम्हें प्रभु पहिचाने बिन हम दुर्बल भयभीत ।।

तुममें कुछ भी चाह नहीं है यहाँ चाह की थाह नहीं है ।
तुमसे ही सब कुछ पाकर हम गाते सुख के गीत ।।

तुम ही दुखियों के दुख हरते तुम पतितों को पावन करते ।
नाथ तुम्हारे चिन्तन से ही होता चरित पुनीत ।।

तुमने हमको कभी न छोड़ा हमने ही तुमसे मुख मोड़ा ।
इसीलिये भूलते भटकते गये बहुत दिन बीत ।।

हर लो अब अज्ञान हमारा रहे सदा ही ध्यान तुम्हारा ।
देख सकें सर्वत्र 'पथिक' हम तुमको मायातीत ।।

---

**सन्त-वचन—जो हमारे जन्म के पहले और मृत्यु के पश्चात् भी हमारा संरक्षक और सहायक है वही परमेश्वर है।**

---

प्रभु तुमको न भूलें यही सौभाग्य हमारा है ।
तुमने ही तो लाखों का तारा है उबारा है ।।

जो अशुभ किया मैंने तुमने न किया कुछ भी ।
दु:ख उस किये का फल है तुमने न दिया कुछ भी ।
जो तुमसे मिल रहा है वह दान ही न्यारा है ।।

जो बिगड़ी वो हमसे ही तुमसे नहीं कहीं पर ।
तुम तो बनाने वाले हम देखते यहीं पर ।
फिर भी मुझे यह अपना अहंकार ही प्यारा है ।।

जब भूले हमीं भूले तुमको तुम्हीं में रहकर।
तुमने कभी न छोड़ा हमको अयोग्य कह कर।
बदले के बिना अनुपम यह प्यार तुम्हारा है ।।

जो कुछ न कर सके हम या जो रहा अधूरा।
वह सब तुम्हारे बल से होता ही गया पूरा।
ऐसा ही मुझ 'पथिक' को आगे भी सहारा है ।।

---

**सन्त-वचन—भगवान का प्रेमी भक्त ही प्रभु को नहीं भूलता तथा उसकी दया कृपा का प्रतिक्षण अनुभव करता रहता है। भगवान की अहेतुकी कृपा को और अपने कर्तव्य को कभी न भूलो। सत्य लक्ष्य पर सदा दृष्टि रखो।**

---

प्रभु तुम्हींमय हो रहे हम ।।

विमुख हो जड़मय बने थे, मोह दलदल में सने थे।
बुद्धि के आगे घने अज्ञान के बादल तने थे।
आज ज्ञानालोक में, निज कालिमा को धो रहे हम ।। प्रभु०।।

किस तरह हम शान्ति पाते, क्यों तुम्हारी शरण आते।
स्वयं ही यदि कृपा करके तुम नहीं हमको जगाते।
स्वप्न में अटके हुए थे, मोह निशि में सो रहे हम ।। प्रभु०।।

कुछ न पाया कहीं जाकर, साथ की पूँजी गवांकर।
जहाँ से हम चले थे ठहरे वहीं के वहीं आकर।
अभी तक नितप्राप्त की ही खोज में थे खो रहे हम ।। प्रभु०।।

इन्द्रियाँ थीं ही वहिर्मुख, मन सदा था चाहता सुख।
उसी सुख के अन्त में हम भोगते आये महा दुःख।
'पथिक' अब आनन्द में हैं जो कभी थे रो रहे हम ।। प्रभु०।।

---

**सन्त-वचन—अज्ञानी, स्वप्न में ही जागते हैं स्वप्न में ही सोते हैं। 'मैं' को पूर्णतया जान लेना ही उससे मुक्ति पाना है। अतः 'मैं' को जानो। जो अभी है यहीं है उसे भविष्य के लिये क्यों टालते हों ? प्रभु उन्हीं के लिये है जो प्रभु के प्रति उपस्थित हैं। जो किसी और जैसा बनना चाहता है। वह अपने को खो देता है। मन के हटते ही उस रिक्त**

**स्थान में जिसका अनुभव होता है वही आत्मा है। वही सत्ता है उससे एक होते ही प्रभुमय हो जाना है।**

---

प्रभु मेरा उद्धार करो ।।

कितने अभिशापों को लेकर, आया हूँ पापों को लेकर ।
बोझिल हूँ, गिर गिर पड़ता हूँ, तुम्हीं उचित उपचार करो ।।

तुमसे ही सब कुछ पाता हूँ, खोता हूँ लेता जाता हूँ ।
अब जैसे भी मेरा हित हो, इसका तुम्हीं विचार करो ।।

मैं अभिमान रहित हो जाऊँ, सत्यज्ञान जिस विधि से पाऊँ ।
उस विधि से ले चलो दयामय, अब तो शीघ्र सुधार करो ।।

जग से पूर्ण विरक्त बनूँ में नाथ तुम्हारा भक्त बनूँ मैं ।
शरणागत मैं दीन 'पथिक' हूँ, सेवा में स्वीकार करो ।।

---

**सन्त-वचन—वासना का समूह ही मन है। वासनाओं का अन्त करने से मन मिटता है। वासनाओं का अन्त यथार्थ ज्ञान से होता है।**

---

प्रभु मेरी भी सुध लो ।।

सुनता हूँ कि तुम मिलते हृदय की पुकार में ।
पूजा तुम्हारी होती है दीनों के द्वार में ।
तुम रीझते हो भक्त के भावोद्गार में ।
पा सकता है कोई तुम्हें निष्काम प्यार में ।
मैं क्या करूँ मेरे लिये कुछ साधना बल दो ।। प्रभु मेरी० ।।

कोई तुम्हें कहते हैं कि निर्गुण हो निराकार ।
कोई तुम्हें है मानते ऐश्वर्यमय साकार ।
कोई तुम्हारा ध्यान करें लेके कुछ आधार ।
करते विभूतियों में कोई तुमको नमस्कार ।
कुछ खोज लगाते हैं कि तुम कैसे हो क्या हो ।। प्रभु मेरी० ।।

कुछ मानते हैं मन्दिरों में तुमको ही भगवान् ।
कुछ मस्जिदों में खोजते हैं तुमको शक्तिमान ।
कुछ कहते यह सब झूठ है बस सत्य आत्मज्ञान ।
कोई तुम्हें भजते हैं अखिल विश्वरूप जान ।
सब कोई विविध भाँति चाहते हैं तुम्हीं को ।। प्रभु मेरी० ।।

मुझको भी दो वह शक्ति जिससे हो सकूँ अभय ।
निर्दोष होके पा सकूँ आनन्द निरतिशय ।
मैं अपने रूप में तुम्हें ही देखूँ सर्वमय ।
जैसे हो किसी रूप से मेरी सुनो विनय ।
इस 'पथिक' का पतन नहीं अब चाहते हो जो ।। प्रभु मेरी०।।

---

**सन्त-वचन—तत्व का बोध होना ही सम्यक् ज्ञान है। जब तक राग, द्वेष, मोह, लोभादि दोष हैं तब तक सम्यक् ज्ञान नहीं।**

---

प्रभु मेरा मोह मिटाओ, मिल जाओ ।।

किस साधन से तुम को पाऊँ, क्या लेकर मैं सन्मुख आऊँ ।
कैसे तुमको नाथ रिझाऊँ, किन भावों में विनय सुनाऊँ ।
देव यही बतलाओ, मिल जाओ ।।

तुमही हो जीवन के जीवन, प्राणों के अरु मन के भी मन ।
निर्बल के बल निर्धन के धन, तुममें ही है सब कुछ अरपन ।
विगड़ी दशा बनाओ, मिल जाओ ।।

वहीं दृष्टि दो हे करुणामय, अहंभाव तुममें ही हो लय ।
मैं तुम में हो जाऊँ निरभय, इतनी स्वामी सुन लो अनुनय ।
यह आवरण हटाओ, मिल जाओ ।।

यद्यपि दूर नहीं तुम स्वामी, घट घट व्यापक अन्तर्यामी ।
अज सच्चिदानन्द गुणधामी दिव्य प्रेममय देव नमामी ।
पथिक हृदयधन आओ, मिल जाओ ।।

---

**सन्त-वचन—भगवान की आवश्यकता प्रतीत होने पर और उनसे अपनत्व का भाव बढ़ने पर प्रीति बढ़ती है। प्रीति की प्रबलता में लोभ-मोहादि मिट जाते हैं।**

---

प्रभु शरण तुम्हारी आता हूँ, जब शान्ति न जग में पाता हूँ ।

मन में अनेक अभिमान लिये, वासनायुक्त कुछ ज्ञान लिये ।
नश्वर सुख दुख के गान लिये, निज स्वार्थपूर्ति का ध्यान लिये ।
मै बद्ध जीव कहलाता हूँ, प्रभु शरण तुम्हारी आता हूँ ।।

है प्रभुता विभव तमाम कहीं, सन्मान पूर्वक नाम कहीं ।
दिखता सुन्दर धन धाम कहीं, मिलता सब कुछ आराम कहीं ।
इससे मैं अब घबराता हूँ, प्रभु शरण तुम्हारी आता हूँ ।।

मेरे सन्मुख कुछ भी आये, आकर चाहे कुछ भी जाये।
मन कितना ही सुख दिखलाये, तुम बिन न मुझे कुछ भी भाये।
तुम में ही चित्त लगाता हूँ, प्रभु शरण तुम्हारी आता हूँ।।

कुछ खोज रहा हूँ इस तन पर, चिढ़ उठता हूँ अशांत मन पर।
है ग्लानि हो रही जीवन पर, विश्वास करूँ किस साधन पर।
चलता हूँ गिर गिर जाता हूँ, प्रभु शरण तुम्हारी आता हूँ।।

मुझको दुख देते पाप कहीं, बाधक बनते अभिशाप कहीं।
करता हूँ व्यर्थ प्रलाप कहीं, होता अति पश्चाताप कहीं।
तुमको ही नाथ बुलाता हूँ, प्रभु शरण तुम्हारी आता हूँ।।

तुमको तज और कहाँ जाऊँ, किससे दुख सुख रोऊँ गाऊँ।
निज मन की किससे बतलाऊँ, मैं 'पथिक' तुम्हें कैसे पाऊँ।
इस धुन में समय बिताता हूँ, प्रभु शरण तुम्हारी आता हूँ।।

---

**सन्त-वचन—जब तुम किसी अन्य पर अपनी प्रसन्नता निर्भर न करोगे तब दीन न बनोगे। जब किसी वस्तु को अपना न मानोगे तब अभिमानी न बनोगे।**

---

प्रभु हम भी शरणागत हैं, स्वीकार करो तो जानें।
अब हमें पतित से पावन, सरकार करो तो जानें।।

प्रेमी जन तुमको पाते, तुम भक्ति भाव वश आते।
हम कुटिल हृदय के कलुषित, निस्तार करो तो जानें।।

ज्ञानी तुममें तन्मय हैं, ध्यानी भी तुममें लय हैं।
हम अज्ञानी चंचल चित्, उपचार करो तो जानें।।

क्या मुख लें विनय सुनायें, हम कैसे तुमको भायें।
अगणित अपराध किये हैं, उद्धार करो तो जानें।।

जीवन नैया जर्जर है, क्षण-क्षण विनाश का डर है।
ऐसे भी एक 'पथिक' को अब पार करो तो जानें।।

---

**सन्त-वचन—परम प्रभु की शरण लेकर जब अनुकूल सुख मिले तब उनकी दया को देखो और जब प्रतिकूलता आती जाये, दुख मिले तब कृपा अनुभव करो।**

---

प्रभुजी तुम सब उर वासी हो, विनाशी में अविनाशी हो।।

जहाँ होता सब कुछ का अन्त, वहीं दिखते हो तुम्हीं अनन्त।।

सर्वमय स्वयं प्रकाशी हो ।। प्रभु जी०।।

जहाँ मिल जाता ज्ञानालोक, न रहता लोभ मोह भय शोक ।
तुम्हीं तुम आनन्द राशी हो ।। प्रभु जी०।।

प्रभु कृपा से मिटता अज्ञान, अहं में मिलते नित्य महान ।
चपल मन सहज उदासी हो ।। प्रभु जी०।।

तुम्हीं में मैं हूँ देखा शोध, तुम्हीं मुझमय हो यह है बोध ।
'पथिक' सर्वात्मविलासी हो ।। प्रभु जी०।।

---

**सन्त-वचन—न रहने वाली देह में रहने वाले को पहचान लो। न रहने वाले सुख-दुख के प्रकाशक को जान लो वही अविनाशी है। विषयों का रागी मन बाहर देखने सुनने के सुख में आसक्त होता है। प्रेम पूर्ण हृदय भीतर शान्ति में आनन्द में तृप्त रहता है।**

---

प्रभु के नाम पै मन को मनाये बैठे हैं ।
कभी होगी दया आशा लगाये बैठे हैं ।।

बहुत कुछ सोचने पर नहीं कुछ कर पाते ।
हमारे पाप ही हमको दबाये बैठे हैं ।। प्रभु०।।

देखना है वह हमें किस तरह अपनाते हैं ।
धर्म से हीन हैं दुर्गुण छिपाये बैठे हैं ।।

अब तो जैसे भी हैं हम शरण पतितपावन की ।
तमाम ठोकरें जन्मों की खाये बैठे हैं ।। प्रभु०।।

द्वार खोलेंगे कभी देख करके दीन दशा ।
'पथिक' अब उनके ही सत्पथ में आये बैठें हैं ।।

---

**सन्त-वचन—अपने दोषों के दुखपूर्वक ज्ञान से जागृति उत्पन्न होती है। कभी-कभी अपने गुणों के अभिमान से प्रमाद उत्पन्न होता है। दोषों का चिन्तन न करो। प्रार्थना और प्रायश्चित द्वारा अपने अन्त:करण को निर्दोष बनाओ।**

---

प्रभो अपने मन में बसाऊँ तुम्हीं को, हृदय में हृदय-धन विठाऊँ तुम्हीं को ।।

यही एक स्वीकार मेरी विनय हो ।

विमल हो मलिन मन सदा ध्यान लय हो ।

तुम्हीं में हमारा ये जीवन अभय हो।
स्वचित चेतना वृति मति प्रेममय हो।

हर इक स्वास से अब बुलाऊँ तुम्हीं को ।। प्रभु०।।

दिखाया है मुझको किनारा तुम्हीं ने।
दिया मुझ निबल को सहारा तुम्हीं ने।

सुपथ में कुपथ से पुकारा तुम्हीं ने।
मुझे घोर दुख से उबारा तुम्हीं ने।

जगत् में दयानाथ पाऊँ तुम्हीं को ।। प्रभो०।।

कहीं भी रहूँ पर रहे ध्यान तुम पर।
निकलते रहें यह विरह गान तुम पर।

रमो प्रान में तुम रमें प्रान तुम पर।
निरन्तर रहे ज्ञान अवधान तुम पर।

सुनूँ मैं तुम्हारी सुनाऊँ तुम्हीं को ।। प्रभो०।।

तुम्हीं एक हो जीवनधार भगवन।
तुम्हीं प्रेमियों के हो साकार भगवन।

तुम्हीं देखे जाते निराकार भगवन।

तुम्हीं जग के इस पार उस पार भगवन।

पथिक' के तुम्हीं एक ध्याऊँ तुम्हीं को, प्रभो अपने मन में बसाऊँ तुम्हीं को।

---

**सन्त-वचन—प्रीति की प्यास वही जो कभी बुझे नहीं, प्रीति का पेट वही जो कभी भरे नहीं, प्रीति का जल वही जो कभी घटे नहीं।**

---

प्रभो आनन्दघन, जय परमात्मन ।।

सत्य परमात्मन्, परम प्रेममयपूरन।
प्रेमियो का भजन सत्य परमात्मन्।
सत्य परमात्मन् सबके आश्रयदाता।
कोई भी हो सरन सत्य परमात्मन् ।।

सत्य परमात्मन् सुमिरत मुदमंगलमय।

लगी जिनकी लगन सत्य परमात्मन ।
सत्य परमात्मन् जितना ही जो ध्यावै ।
रहे जीवन मगन सत्य परमात्मन ।।

सत्य परमात्मन् तुम हो सर्व प्रकाशक ।
एक सर्वस्व घन सत्य परमात्मन् ।।

सत्य परमात्मन् हर रूप में हर रंग में ।
'पथिक' के मन हरन सत्य परमात्मन ।।

---

**सन्त-वचन—सच्ची चाह ही मिलन की राह बना देती है तथा चित्त को स्थिर करती है। जो प्रियतम के लिये त्याग, तप तथा शुभ सुन्दर का दान नहीं कर पाता उसमें सच्ची चाह नहीं है। जिसे चाहो उससे कुछ भी न चाहो प्रेम को निष्काम होने दो।**

---

प्रभो किस विधि तुम्हें पाऊँ ।।
बता दो इस हृदय का अज्ञानतम कैसे मिटाऊँ ।।

भरी मन में वासनायें, कामनाओं को जगायें ।
उन्हीं की ही पूर्ति सुख के अन्त में अति दुख उठाऊँ ।।

दिव्य सद्गुण शक्ति के बिन, सद्विवेक विरक्ति के बिन ।
अहंता ममता परिधि में भ्रमित हो जीवन बिताऊँ ।।

सरकते जा रहे निशि दिन, आत्म ज्ञान प्रकाश के बिन ।
कठिन बंधन ग्रन्थियों में बँधा मन कैसे छुड़ाऊँ ।।

दूर किञ्चित नहीं हो तुम, जहाँ मैं हूँ वहीं हो तुम ।
'पथिक' अनुभव हेतु कैसे स्वयं में गोता लगाऊँ ।।

---

**सन्त-वचन—सत्य परमात्मा के सम्बन्ध में जानना उत्तम ही है पर सत्य को जानना पूर्णोत्तम है। ईश्वर के विषय में पढ़-सुन कर जानना और बात है सत्य का अनुभव करना दूसरी बात है। ज्ञान में असत् को, जड़ को, भिन्न को, न रहने वाली देहादिक वस्तुओं को देखो।**

---

प्रभो तुमसे आनन्द पाते हैं हम ।
नित्य आमोद के दिन बिताने हैं हम ।।

आपके नाम सुमिरन से गुण ध्यान से ।
जन्मों जन्मों की बिगड़ी बनाते हैं हम ।।

जो फँसाती है हमको महा मोह में ।
उस अविद्या की ग्रन्थी छुड़ाते हैं हम ।।

आपके ज्ञान विज्ञान आलोक में ।
सारे कल्मष हृदय के मिटाते हैं हम ।।

अभी तक तो दुखों में ही रोते रहे ।
शरण आकर के सुख गीत गाते हैं हम ।।

नाथ अब भव भ्रमण से बचा लीजिये ।
'पथिक' जन आपके ही कहाते हैं हम ।।

---

**सन्त-वचन—प्रत्येक घटना में प्रभु की अनिर्वचनीय लीला का अनुभव करो उन्हीं के होकर रहने का स्वभाव बना लो। कृपा का अनुभव वही कर पाते हैं जो सब प्रकार से प्रभु के होकर कर्तव्य-कर्म पूर्ण करते हैं।**

---

प्रभो तुम्हीं को अपना पायें, सदा तुम्हारे ही गुण गायें ।।

मान रहे थे जिसको अपना, अब जाना वह है सब सपना ।
एक तुम्हीं से नेह लगायें ।।
तुम्हीं दिखाते चलो नाथ मग, अधिक नहीं बस एक एक पग ।
सकुशल हम तुम तक आजायें ।।

रोक न दें मम प्रगति प्रलोभन, लगा रहे तुममें ही यह मन ।
मिटती जायें सब बाधायें ।।

जिस प्रकार से मेरा हित हो, वही करो जो तुम्हें उचित हो ।
अब यह जीवन सफल बनायें ।।

ऐसे हम हो जायें ज्ञानी, रहें न मोह भ्रमित अभिमानी ।
हम माया में मन न फँसायें ।।

अहंकार यह तुम में खोकर, हे परमेश्वर तुममय होकर ।
'पथिक' मुक्ति आनन्द मनायें ।।

---

**सन्त-वचन—हमारा वही है जो हमें कभी त्याग नहीं करता और हम उसी के हैं जिसे कभी नहीं छोड़ सकते। जो अज्ञात रह कर भी**

**अचानक मुझे आपत्ति से बचा लेते हैं मेरा हित उन्हीं के हाथों में सुरक्षित है।**

---

प्रभो तुम्हें हम खोज रहे थे, यहाँ स्वयं की खबर नहीं है।
ये आयु कम होती जा रही है, किसी तरह से सबर नहीं है।।

कोई कहीं पै मना रहा मन, किसी को प्यारा है अपना तन धन।
बिना तुम्हारी शरण के भगवन, कहीं चैन उम्र भर नहीं है।।

अगर तुम्हें प्रेम से बुलाते, तुम अपने को यूँ छिपा न पाते।
इन आहों से खिंच के आ ही जाते, यही कसर है असर नहीं है।।

कहो किस तरह तुम्हें पुकारूँ, कहाँ प्रेममय वो छवि निहारूँ।
मैं अपना सर्वस तुम्हीं पै वारूँ और किसी विधि गुजर नहीं है।।

यही विनय है न भूल जाऊँ, सभी तरह से तुम्हीं को ध्याऊँ।
'पथिक' तुम्हारा हूँ तुमको पाऊँ, हमें और कुछ फिकर नहीं है।।

---

**सन्त-वचन—स्वयं तक वही पहुँच पाता है जो चलता ही नहीं ठहर जाता है विचारों का उठना ही विकारी होना है।**

---

प्रभो भूले हुये को राह लगाते जाना।
मोह माया से मुझे नाथ छुड़ाते जाना।।

खोजते खोजते मैं खो गया हूँ जाने कहाँ।
दयानिधे मुझे अब होश में लाते जाना।।

अपने छिपने के लिये पर्दा बनाया संसार।
कैसे पाऊँ तुम्हें ये युक्ति बताते जाना।।

ध्यान वह दो कि न भूलूँ तुम्हें निशि दिन भगवन्।
मगन रहूँ वह लगन अपनी सिखाते जाना।।

यहाँ वहाँ कहीं कुछ है तो बस तुम्हारा खेल।
छिपो न अब सदा तुम दृष्टि में आते जाना।।

चाहे कैसा भी हूँ पर अब तो आप ही का हूँ।
'पथिक' हूँ शरण में अब नाथ निभाते जाना।।

**सन्त-वचन—जो कुछ मिला है उसे अपना न मानो। अपना मानने से ही मोह, लोभ, अभिमान परिपुष्ट होते हैं। सब कुछ परमेश्वर की दया से मिला हुआ समझने पर मोह लोभादि विकार मिटते हैं।**

प्रभो माया का तुम्हारी, अकथ यह विस्तार देखा ।
दिखाया जिसको तुम्हीं ने, तुम्हें सर्वाधार देखा ।।

विमुख हो तुमसे विषमता, व्यथामय व्यापार देखा ।
जीव को रोते हुये, ढोते हुये दुखभार देखा ।।

सभी के सम्मुख स्वनिर्मित क्षुद्र इक संसार देखा ।
जहाँ निर्भय शान्ति का, मिलता न कुछ आधार देखा ।।

जब कि अपने आप पर पा विजय निज अधिकार देखा ।
तभी अपने साथ दैवी शक्ति का भण्डार देखा ।।

आपके प्रति प्रेम का जब प्रवाहित उद्गार देखा ।
तभी परमानन्द निधि को हृदय भर साकार देखा ।।

देह अभिमत छोड़ कर जब ज्ञान से सतसार देखा ।
'पथिक' दिव्यालोकमय तब मुक्तिमंदिर-द्वार देखा ।।

**सन्त-वचन—अखण्ड प्रसन्नता चाहते हो तो अपने में ही प्रियतम की स्थापना कर लो। जिसके मन से वस्तुओं का चिन्तन ध्यान निकल जाता है उसका मन परम प्रभु के ध्यान में स्वतः लग जाता है।**

प्रियतम का तब पाना कठिन है।।
जब अभिमान मिटाना कठिन है।।

जिसके जीवन में दु:खदायी दोषों का ही त्याग न होता ।
उसके उर में प्रियतम के प्रति काम शून्य अनुराग न होता ।
तब तो ध्यान लगाना कठिन है ।। प्रियतम० ।।

भोग जनित सुख की आशा से बंधे हुये हैं प्राणी जग में ।
सद्विवेक बिन देख न पाते कष्ट उठाते हैं पग-पग में ।
श्रद्धा बिना समझाना कठिन है ।। प्रियतम० ।।

जहाँ चैन आती रहती है, समझो सच्ची चाह नहीं है ।
सच्ची चाह हुये बिन मिलती सत्य प्रेम की राह नहीं है ।।
प्रीति को पूर्ण बनाना कठिन है ।। प्रियतम० ।।

जो आस्तिक प्रेमी कहला कर चिन्ता करता है तन धन की ।
जो स्वामी का सेवक होकर पूर्ति चाहता अपने मन की ।।
'पथिक' सुपथ में आना कठिन है ।। प्रियतम० ।।

---

**सन्त-वचन—जो बार-बार दुहराया जाता है—चाहे वह गुण हो या दोष हो-वही सरल हो जाता है। जिसका अभ्यास नहीं होता वही कठिन प्रतीत होता है। दैवी सम्पत्ति से प्रेम होने पर अभिमान, लोभ, ईर्ष्या द्वेषादि आसुरी सम्पत्ति का त्याग सुगम हो जाता है। सुख के लिये ही संसार की वस्तुओं व्यक्तियों का संग किया जाता है और निराश दुःखी होने पर शान्ति के लिये सब कुछ का त्याग किया जाता है।**

---

प्रियतम दयानिधान तुम्हें हम कैसे पायें ।।
भक्तों के भगवान तुम्हें हम कैसे पायें ।।

जब कि ध्रुव के समान, तप के लिये शक्ति नहीं ।
और शबरी की भाँति भाव नहीं भक्ति नहीं ।
मन में मीरा की तरह, धुन नहीं अनुरक्ति नहीं ।
त्यागियों की तरह, भोगों से है विरक्ति नहीं ।
ऐसे पतित महान्, तुम्हें हम कैसे पायें ।।

जगत् को ब्रह्ममय देखें हम में वह ज्ञान कहाँ ।
करें विचार तो हैं ऐसे बुद्धिमान कहाँ ।
जागते सोते तुम्हें ध्यायें, ऐसा है ध्यान कहाँ ।
तुम हो घट-घट में रमे, पर हमें पहिचान कहाँ ।
हैं मूरख नादान, तुम्हें हम कैसे पायें ।।

कोई दिन रात भजन में समय बिताते हैं ।
कोई तप करके मन की वासना जलाते हैं ।
कोई हठ से कुछ शक्तियाँ जगाते हैं ।
हमीं ऐसे हैं जो कुछ भी नहीं कर पाते हैं ।
हो किस विधि कल्याण तुम्हें हम कैसे पायें ।।

तीर्थों में गये तुमको वहाँ नहीं पाया।
यज्ञ व्रत दान ने तो स्वर्ग मार्ग दिखलाया।
जिधर देखा उधर ही घोर अँधेरा, छाया।
तुम कहीं भी न मिले, मिली तुम्हारी माया।
हुये देख हैरान, तुम्हें हम कैसे पायें।।

तुम्हारी खोज में लाखों यहाँ भटकते हैं।
जिधर ही जाते हैं, उस ओर ही अटकते हैं।
तरह-तरह की ख्वाहिशों में सब लटकते हैं।
घूम फिर करके फिर यहीं पै सर पटकते हैं।
खो करके अभिमान तुम्हें हम कैसे पायें।।

बहुत से तपसी व्रती सत्य मार्ग भूल गये।
वो सिद्धियों के ही अभिमान में बस फूल गये।
बहुत से जान कर भी, धर्म के प्रतिकूल गये।
कण से पर्वत बने पर्वत से फिर बन धूल गये।
अजब निराली शान तुम्हें हम कैसे पायें।।

तुम्हारी राह में कोई तो सूली चढ़ के चले।
बहुत से वेदों व शास्त्रों को ही पढ़-पढ़ के चले।
गिरे हुये भी उठे जोश में फिर बढ़ के चले।
कुछ तो मत सम्प्रदाय और धर्म गढ़ के चले।
बिरले पाये जान तुम्हें हम कैसे पायें।।

गिरे हुये के लिये तुम ही उठाने वाले।
दु:खों से रोते हैं जो उनको हँसाने वाले।
सद्‌गुरु रूप में सोते से जगाने वाले।
सुन लो भूले हुये को राह दिखाने वाले।
दीन 'पथिक' का गान तुम्हें हम कैसे पायें।।

**सन्त-वचन—स्थूल शरीर से सेवा करो, सूक्ष्म शरीर सो परमात्मा का चिन्तन करो, कारण शरीर से सत्य में ही स्थिति प्राप्त कर लो। मन को परमात्मा में लगाओ। बुद्धि को संसार में लगाओ।**

प्रियतम मन के चोर तुम्हें मैं कैसे पाऊँ ।।

घर बैठूँ या वन को जाऊँ, वस्त्र रंगूँ या खाक रमाऊँ।
होकर भाव विभोर तुम्हें मैं कैसे पाऊँ ।।

कौन जतन से बन्धन खोलूँ किस विधि मन के मल को धो लूँ।
चलता नहिं कुछ जोर तुम्हें मैं कैसे पाऊँ ।।

किस साधन से नाथ रिझाऊँ मूरख हूँ क्या रोऊँ गाऊँ।
बिना प्रेम की डोर तुम्हें मैं कैसे पाऊँ ।।

हमसे तो कुछ बनि नहिं आवे तुम चाहो तो सब बनि जावे।
लखो 'पथिक' की ओर तुम्हें मैं कैसे पाऊँ ।।

**सन्त-वचन—प्रेमी प्रेमपात्र में, प्रेमपात्र प्रेमी में निरन्तर निवास करते हैं परन्तु सीमित प्रेम से असीम प्रेमास्पद नहीं मिलते। परम प्रभु प्रलोभन और दण्ड के द्वारा प्रेम को नापते हैं। यदि प्रेमी विचलित न हुआ तो आश्चर्य से अपना योग देते हैं और संसार के साथ खेलने का संयोग देते हैं।**

प्रेम से ध्याओ बारम्बार, नमो जगदीश्वर जगदाधार ।।

दुनिया सदा आराम के सामान को चाहे।
इन्सान तो इसीलिये इन्सान को चाहे।
कोई यहाँ अपने ही यशोगान का चाहे।
सब अपने-अपने दीन और ईमान को चाहे।
कोई चहै कुरान कोई पुरान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे ।।

प्रेम से ध्याओ बारम्बार, नमो जगदीश्वर जगदाधार ।।

कोई तो यहाँ आ के ज़रोमाल में खुश है।
पण्डित व मूर्ख अपनी-अपनी चाल में खुश हैं।
होकर के कैद अपने अपने हाल में खुश हैं।
देखो तो सभी अपने ही स्वर ताल में खुश हैं।
पर भक्त तो अपने प्रभु के ध्यान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे ।।

प्रेम से ध्याओ बारम्बार, नमो जगदीश्वर जगदाधार ।।

खुशकिस्मती समझ के कोई नाम में भूले।
कोई यहाँ दिन रात अपने काम में भूले।
देखो किसी को ऐश व आराम में भूले।
आगाज़ में भूले कोई अन्जाम में भूले।
पर वे नहीं भूले कि जो सतज्ञान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।

प्रेम से ध्याओ बारम्बार, नमो जगदीश्वर जगदाधार ।।

बुलबुल को रहा करती गुलस्तान की तलाश।
उल्लू को देखिये तो है वीरान की तलाश।
हैवान को खुद जात के हैवान की तलाश।
सबको है अपने इतमीनान की तलाश।
कोई जमींन कोई आसमान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे ।।

प्रेम से ध्याओ बारम्बार, नमो परमेश्वर परमाधार ।।

कङ्गाल की नज़रों में है धनवान ही सब कुछ।
मोही हृदय के वास्ते सन्तान ही सब कुछ।
कमजोर समझता है कि बलवान ही सब कुछ।
आशिक को है माशूक की मुस्कान ही सब कुछ।
पर बुद्धिमान जीवन कल्याण को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे ।।

प्रेम से ध्याओ बारम्बार, नमो परमेश्वर परमाधार ।।

कुछ लोग प्रेमिका के भाव प्यार में अटके।
कोई सभी प्रकार से परिवार में अटके।

अपकार में अटके कोई उपकार में अटके।
कुछ आगे बढ़ के स्वर्ग के सत्कार में अटके।
भोगों के लिये कोई परिस्तान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।

प्रेम से ध्याओ बारम्बार, नमो परमेश्वर परमाधार ।।

कोई है परेशान अपनी जान के खातिर।
कोई लड़े मरते हैं अपनी शान के खातिर।
कुछ तंत्र मंत्र कर रहे वरदान के खातिर।
रोते हैं कोई हँसते हैं अरमान के खातिर।
पर 'पथिक' तो अपने दयानिधान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।

प्रेम से ध्याओ बारम्बार, नमो परमेश्वर परमाधार ।।

---

**सन्त-वचन—अपने में अपना न दीखे तभी भजन हो सकता है। भगवान वहीं मिलते हैं जहाँ कोई और नहीं होता। जो भगवान को चाहते हैं वे भगवान को पाते हैं। जो भगवान से संसार की वस्तु चाहते हैं वे संसार में आबद्ध रहते हैं।**

---

प्रेम से मेरे प्रभु नारायण कहना है।
जाही विधि राखें प्रभु ताही विधि रहना है।।

तन मन धन कुछ अपना न मान कर।
जो भी आये जाये सब प्रभु का ही जान कर।
मन की प्रतिकूलता को धैर्य से ही सहना है।।

बन्धन दु:खों की जड़ आत्म अज्ञान है।
आत्म ज्ञान होता जब स्वयं में ही ध्यान है।
ध्यानी को धन मान भोग नहीं चहना है।।

चाह के त्याग में प्रेम ही समर्थ है।
चाह की पूर्ति का लोभ ही अनर्थ है।
जीवन प्रवाह है प्रेम से ही बहना है।।

प्रेम में सेवा की त्याग की शक्ति है।
प्रेम में परम गति मिलती प्रभु भक्ति है।
प्रेम में 'पथिक' नित्य समता को गहना है।।

**सन्त-वचन—प्रभु मेरे है और मैं प्रभु का हूँ यह आस्था पूरी तरह दृढ़ हो जाने पर कर्तापन का अहंकार मिट जाता है। विधान से जो हो रहा है सब मंगलमय है। हमें प्रभु के प्रेमी होकर रहना है।**

प्रेमियो अब कदम बढ़ाओ तो, इधर भी कुछ करके दिखाओ तो ।।
बहुत दिन भोग का सुख देख चुके, इधर से दृष्टि अब घुमाओ तो ।।
देख लो, कितने शक्तिहीन हुये, अभी समय है चेत जाओ तो ।।
सुखों के अन्त में दु:ख ही मिलता, तुम भी समझोगे, इधर आओ तो ।।
इतना जीवन बिता चुके जग में, अभी तक क्या मिला, बताओ तो ।।
सबकी सुनते हो, गुरुजनों की सुनो, पर्दा अभिमान का हटाओ तो ।।
शान्ति तुमको अभी मिल सकती है, राग के त्याग को अपनाओ तो ।।
प्रभु से दूरी नहीं देरी नहीं, उन्हें अपने में देख पाओ तो ।।
कृपा प्रभु की तुम्हें न छोड़ेगी, 'पथिक' संकल्प दृढ़ बनाओ तो ।।

**सन्त-वचन—जो कुछ नेत्रों से देखते हो उसी को बुद्धि दृष्टि से देखो। इन्द्रियों की गति विषयों तक ही चलती है, विषय के परिणाम को बुद्धि योग द्वारा ही देखा जाता है। बाहर से जो कुछ नहीं दीखता वही भीतर आलोक में दीख जाता है। क्षुद्र को देखने वाला क्षुद्र से, महान को देखने वाला महान् से भर जाता है।**

प्रेमी प्रेम, भाव से गाके ध्याओ नारायण हरिओम् ।
मन की सच्ची सुरति लगा के ध्याओ नारायण हरिओम् ।।

इससे दूर रहेगी माया सार्थक हो जायेगी काया ।
सन्तों की संगति में जाके ध्याओ नारायण हरिओम् ।।

जिससे मन सुस्थिर हो जाये प्रज्ञा में विवेक बल आये ।
ऐसा साधन नियम बना के ध्याओ नारायण हरिओम् ।।

जिसका कुछ भी नहीं ठिकाना, उससे क्या फिर प्रीति बढ़ाना ।
इस दुनियाँ में हृदय बचा के ध्याओ नारायण हरिओम् ।।

अपना जीवन व्यर्थ न खोना यहाँ कहीं मत मोहित होना ।
सेवा में निज स्वार्थ मिटा के ध्याओ नारायण हरिओम् ।।

चाहे कुछ भी आये जाये लक्ष्य न कहीं भूलने पाये ।
'पथिक' शरण सद्गुरु की आके ध्याओ नारायण हरिओम् ।।

**सन्त-वचन—ममता सहित प्यार ही राग है। ममता रहित प्रीति ही निष्काम प्रीति है। प्रेम को व्यापक सीमामुक्त बना लेना ही भक्ति है। अपने आप में विश्राम करना मुक्ति है।**

प्राण तुम बिन रो रहे हैं ॥

हृदय धन तुमको न पाकर, शून्यता की शरण जाकर ।
मनो मन्दिर में तुम्हारी, मानसिक प्रतिमा बिठाकर ।
इस सुलभ सद्भाव से, निज कलुषता को धो रहे हैं ॥

आज सूनी राह मेरी कौन जाने आह मेरी ।
यह अरण्य रुदन हमारा विफल है सब चाह मेरी ।
भग्न उर अरमान मेरे व्यथा मूर्छित सो रहे हैं ॥

विभव भूति असार तुम बिन शून्य सब शृंगार तुम बिन ।
उठ रहे क्या-क्या हृदय में मूक हृदयोद्गार तुम बिन ।
तुम्हीं देखो किस तरह हम व्यर्थ जीवन खो रहे हैं ॥

तुम्हें तज हम कहाँ जायें, तुम्हीं को अपनी सुनायें ।
बता दो क्या करें जिससे, तुम्हें परमाधार पायें ।
हम 'पथिक' अब तो तुम्हारे ही भिखारी हो रहे हैं ॥

**सन्त-वचन—विरह सर्वोपरि साधन है। वियोग का बढ़ा हुआ दुःख योग हो जाता है। संसार से निराश होने पर दुःखहारी हरि दुःख हर लेते हैं।**

प्राणधन यह प्राण अब घबरा रहे हैं ।
व्यर्थ जीवन दिवस बीते जा रहे हैं ॥

इसी आशा में कमी प्रियतम मिलेंगे ।
विरह पीड़ा बीच मोद मना रहे हैं ॥

इस अनाश्रित के परम आश्रय तुम्हीं हो ।
आपका गुणगान निशिदिन गा रहे हैं ॥

स्वर्ग भी सूना मुझे है देव तुम बिन ।
ये मनोहर सुख दुःखद दिखला रहे हैं ॥

छद्म वेशी रुचिर भोग विलास सारे ।
रम्य उपवन तपन सी अब ला रहे हैं ।।

निरख पाऊँ कब तुम्हारी प्रेम छवि को ।
दरस बिन हम बहुत ही दुःख पा रहे हैं ।।

मुझ 'पथिक' को हे प्रभो पावन बनाओ ।
आप ही का नाम लेते आ रहे हैं ।।

---

**सन्त-वचन—अनेकता का अन्त जहाँ होता है वहीं एकान्त है। एकान्त ही परमप्रभु की योग-सिद्ध का स्थल है। सच्चा प्रेमी एकान्त सेवी होता है, उसके हृदय में प्रियतम तथा उसके प्रेम के अतिरिक्त किसी अन्य को स्थान नहीं मिलता।।**

---

फिर मत कहना कुछ कर न सके ।।

जब नर तन तुम्हें निरोग मिला, सत्संगति का भी योग मिला ।
फिर भी प्रभुकृपानुभव करके, यदि भवसागर तुम तर न सके ।।

तुम सत्य तत्वज्ञानी होकर, तुम सद्धर्मी दानी होकर ।
यदि सरल निरमिमानी होकर, कामना-विमुक्त विचार न सके ।।

जग में जो कुछ भी पाओगे, सब यहीं छोड़ कर जाओगे ।
पछताओगे तुम यदि अपना, पुण्यों से जीवन भर न सके ।।

जो सुख सम्पत्ति में फूल रहे, जो वैभव मद में भूल रहे ।
उनसे फिर पाप डरेंगे क्यों, जो परमेश्वर से डर न सके ।।

जब अन्त समय आ जायेगा, तब क्या तुमसे बन पायेगा ।
यदि शक्ति समय के रहते ही, आचार-विचार सुधर न सके ।।

होता तब तक न सफल जीवन, है भार रूप सब तन मन धन ।
यदि 'पथिक' प्रेम पथ में चल कर, अपना या पर दुःख हर न सके ।।

---

**सन्त-वचन—दोषों के त्याग से ही शान्ति और सद्‌गुणों के प्रति प्रीति से आनन्द प्राप्त होता है। विवेकी मानव वही जो शक्ति का सदुपयोग करता है।**

---

बता दो प्रभो तुमको पाऊँ मैं कैसे ।
विमुख होके सम्मुख अब आऊँ मैं कैसे ।।

विषय वासनायें निकलती नहीं हैं।
ये चंचल चपल मन मनाऊँ मैं कैसे ।।

कभी सोचता तुमको रोकर पुकारूँ।
पर ऐसा हृदय को बनाऊँ मैं कैसे ।।

प्रबल है अहंकार साधन न संयम।
ये अज्ञान अपना मिटाऊँ मैं कैसे ।।

कठिन मोह माया में अतिशय भ्रमित हूँ।
प्रभो बिन दया पार जाऊँ मैं कैसे ।।

दयामय तुम्हीं मुझ 'पथिक' को सम्हालो।
मैं कितना पतित हूँ दिखाऊँ ये कैसे ।।

---

**सन्त-वचन—जिसमें आनन्द की लालसा और भोगजनित सुख की कामना है, वही जीव है। जिसके योग से आनन्द की प्राप्ति और जिसकी शक्ति से कामना की पूर्ति होती रहती है, वही ईश्वर है।**

---

बताऊँ कैसे मन की बात।
हे मनमोहन प्रियतम तुम बिन और न कछू सुहात।
जग प्रपंच के कोलाहल से रहि रहि जिय अकुलात ।।

नाथ किसी विधि मोहि उबारो अवसर बीतौ जात।
कब वह दर्शन द्वार खुलेंगे मग निरखत दिन रात ।।

मेरी जो कुछ पतित दशा है मुख सों कहत लजात।
एक तुम्हारी दया दृष्टि पर हमहुँ लगाये घात ।।

तुम्हीं एक सबके परमाश्रय ज्ञात और अज्ञात।
'पथिक' तुम्हें जितनों ही समुझत सुध बुध जात भुलात ।।

दु:ख सहने पर भी इस मन को सुख ही सदा सुहात।
सुख का अन्त दु:खद देखत ही हृदय सदा अकुलात ।।

किस विधि राग द्वेष को छोड़ूँ अवसर बीतौ जात।
भोग हितु अति करत परिश्रम, भजन करत अलसात ।।

परमेश्वर को व्यापक मानत पाप करत न लजात ।
लोहा देत स्वर्ण पाने की सदा लगावत घात ।।

हे प्रभु वह विवेक दो जिससे सजग रहूँ दिन रात ।
तुम्हीं 'पथिक' के परमाश्रय हो ज्ञात और अज्ञात ।।

---

**सन्त-वचन—नम्रता ही बुद्धि को झूठे विचारों तथा अभिमान से बचाती है। विनीत नम्र एवं त्यागी ही परमार्थ सिद्धि पाता है। पथ की कठोर परीक्षा में नम्रता और धैर्य के द्वारा सफलता मिलती है।**

---

बड़ी मुश्किल से तलबगार[1] तुम्हारा हूँ मैं ।
देखते क्या हो ऐ सरकार तुम्हारा हूँ मैं ।।

जानता हूँ मेरे दिल से तुम्हें नफरत होगी ।
माफ कर देना गुनहगार[2] तुम्हारा हूँ मैं ।।

नहीं कुछ तुमसे छिपा मेरा जाहरोवातिन[3] ।
यही हर वक्त है इजहार[4] तुम्हारा हूँ मैं ।।

मेरी बरबादियों की भी तो करो कुछ परवाह ।
किस तरह हो रहा लाचार तुम्हारा हूँ मैं ।।

उठा-उठा के मुझे तुम कहाँ बिठाते हो ।
कोई कर ले न गिरफ्तार तुम्हारा हूँ मैं ।।

तुम्हारी चाह में डूबे हुये दिल को लेकर ।
हो रहा आज बेकरार तुम्हारा हूँ मैं ।।

इश्क की राह में मैं कब से भटकता देखो ।
काबिले दीद[5] हूँ बीमार तुम्हारा हूँ मैं ।।

बहुत कुछ हो चुका अब यों न भुलावो प्यारे ।
'पथिक' हूँ जैसा खाकसार[6] तुम्हारा हूँ मैं ।।

---

(1) चाहने वाला, (2) पापी, (3) अन्दर-बाहर, (4) पुकार, (5) देखने लायक, (6) सेवक।

**सन्त-वचन—जब याद आ जाये तभी यह मनन करो कि बस 'मैं' हूँ केवल 'मैं' हूँ संसार में मेरा कुछ भी नहीं है और मुझे कुछ भी नहीं चाहिये, कयोंकि मैं निरन्तर पूर्ण आनन्दमय परमात्मा में ही हूँ।**

बसो इन नयनन में ।।

हे मनभावन भगवान बसो इन नयनन में ।

हे विश्वमभर ! परमेश एक परमाश्रय ।
तुम सबके जीवन प्रान बसो इन नयनन में ।।

हे सुन्दर ! हे सर्वस्व सुखों के स्वामी ।
हे अनुपम दयानिधान बसो इन नयनन में ।।

हे दाता! हम तो आये द्वार तुम्हारे ।
दो भक्ति प्रेम का दान बसो इन नयनन में ।।

हे हरि हम दीन अकिंचन मोह भ्रमित हैं ।
हर लो सारा अज्ञान बसो इन नयनन में ।।

हे प्रेमनिधे ! परमात्मन अन्तरयामी ।
कर दो मेरा कल्यान बसो इन नयनन में ।।

हे प्रियतम प्रभु ! मैं 'पथिक' तुम्हारा ही हूँ ।
दे दो निज शरणस्थान बसो इन नयनन में ।।

**सन्त-वचन—जिसके बिना किसी प्रकार नहीं रह सकते उसका ज्ञान होने पर ध्यान स्वतः हो जाता है। ध्यान में वे इच्छाएँ बाधक हैं जो पूरी नहीं हुई और मिट नहीं सकीं।**

**श्री शंकराचार्य विरचित चर्पटमंजरी के आधार पर भावानुवाद**

भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढमते ।।

बाल बयस सब खेल गंवाई तब तो रहा नहीं कुछ ज्ञान ।
तरुणावस्था की मादकता में, केवल तरुणी का भान ।
वृद्ध भये तब रात दिवस है नाना चिन्ताओं का गान ।
दुर्लभ मानव तन पाकर के किया न परमेश्वर का ध्यान ।

भज गोविन्दं, भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते ।।

बीती रात दिवस फिर आया दिन बीता फिर आई रात ।
सदा यही क्रम चलता रहता, नित्य शाम है नित्य प्रभात ।
कभी ग्रीष्म है, कभी शिशिर है, कभी बसन्त कभी बरसात ।
इसी चक्र में बद्ध जीव को, नचा रही है आशा वात ।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्द भज मूढ़मते ।।

केश पक गये नेत्र कान भी काम न देते मति गति भङ्ग ।
धीरे-धीरे दांत गिर गये, सभी हो गये जीरण अङ्ग ।
अस्थिपिण्ड से खाल लटकती बिगड़ गया जीवन का रङ्ग ।
तब भी तृप्त न हुई वासना, श्वासा है आशा के सङ्ग ।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते ।।

जन्म मरण के इस बन्धन से हो न सकेगा यूँ उद्धार ।
जब तक तू आसक्त स्वार्थवश, करता जग से ममता प्यार ।
इस दुस्तर माया से मानव तब तेरा होगा निस्तार ।
जब मायापति परमेश्वर को, सोंप चुकेगा जीवन भार ।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते ।।

जब तक तेरे तन मन धन से पूर होते सबके काम ।
तब तक तुझसे प्रेमपूर्वक लिपटा है परिवार तमाम ।
जराग्रस्त होने पर एक दिन छूट जायेगा यह धन धाम ।
बात न पूछेंगे फिर कोई सेंत न लेंगे तेरा नाम ।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते ।।

सलिल बिना है व्यर्थ सरोवर धन से हीन व्यर्थ परिवार ।
धर्म बिना धन धान्य व्यर्थ हैं, प्रेम दया बन व्यर्थ विचार ।
सद्गुण बिन सौन्दर्य व्यर्थ है, सेवा बिना व्यर्थ श्रृंगार ।
सद्विवेक बिन कर्म व्यर्थ है, भक्ति ज्ञान बिन जीवन भार ।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते ।।

मूरख इतना मोहित होकर, है जिस सुन्दरता में लीन ।
मांस भरे स्नायुजाल से, कसे पिण्ड के ही अधीन ।

जिस विधि अपने रुधिर स्वाद में श्वान मानता सुख मतिहीन ।
यही दशा है विषयी नर की, तृष्णा से रहता अतिदीन ।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते ।।

अपने ही स्वारथ के भूखे, कर न सके कुछ पर-उपकार ।
अपनी क्षुधा पूर्ति के कारन, झांके किनके किनके द्वार ।
मूड़ मुड़ाये, जटा रखाये, भेष बनाये विविध प्रकार ।
तब तक शांति नहीं जीवन में, जब तक मिटे न विषय विकार ।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते ।।

त्यागी बन के बन बन डोले, कर तल भिक्षा तरु तर वास ।
किन्तु जहाँ लों आशा तृष्णा, तब तक पाता रहता त्रास ।
क्यों न देखते निज अन्तर में, परमेश्वर का प्रेम प्रकाश ।
जिसकी कृपा-किरण से होता है, अज्ञान तिमिर का नाश ।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते ।।

अब न भूल तू इस माया में करता रह भगवद् गुणगान ।
निज धन से दीनों दुखियों को, स्वार्थ छोड़कर दे कुछ दान ।
सन्त संग से पावन हो जा, धारण कर गीता का ज्ञान ।
पुनि विवेक समता के द्वारा परम तत्व को ले पहचान ।
भज गोविन्दं भज गाविन्दं गोविन्दं भज मूढ़मते ।।

जिसने श्रद्धा भक्ति का कुछ, थोड़ा भी पाया आनन्द ।
गंगा गीता ज्ञानाश्रय से, कब तक रह सकती मति मन्द ।
मुक्त हो चला वह बंधन से, छूट गये सारे दुख द्वन्द्व ।
अनुरागी जो हुआ प्रभु का, पड़ न सकेंगे फिर यम-फन्द ।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते ।।

यही देख ! क्या रूप है तेरा, कौन पिता है माता कौन ।
कब से कितने दिन के सङ्गी, यह पत्नी सुत भ्राता कौन ।
यह संसार स्वप्नवत लीला, तेरा इससे नाता कौन ।
जाग जाग अब जाग, 'पथिक' तू तेरा पालक त्राता कौन ।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते ।।

**सन्त-वचन—जो संसार से काम नहीं लेते वही भगवान का नाम लेकर भगवान की ओर जाते हैं। जिससे भगवदाकार वृति हो वही भजन है। अपना सब कुछ सेवा में समर्पित कर देने पर भजन पूर्ण होता है। सबसे निराश होने पर ही कोई प्रभु का भजन कर पाता है।**

भक्तों की एक चाह में, दर्शन दिखाते आप हैं।
दुखियों की सच्ची आह में, हे नाथ आते आप हैं।।

जीवों पर प्यार करते हुए, नीचों के बीच उतरते हुए।
पतितों के पाप हरते हुए, उनको जगाते आप हैं।।

तुमसे ही शान्ति के सारे साज, भूले भले ही मानव समाज।
अपनी शरण में लिये की लाज सच में निभाते आप हैं।।

कोई तुम्हें पाते ज्ञान में, हैं देखते कोई ध्यान में।
जो कि 'पथिक' अज्ञान में, उनको उठाते आप हैं।।

**सन्त-वचन—सुख के भोगी सौभाग्यवान् नहीं है क्योंकि उनके सुख भोग का अन्त अवश्य होगा। दुखी सौभाग्यशाली होता है क्योंकि वह सुख से विरक्त होकर परमेश्वर की शरण लेता है। जो दुख से डरता है वह कुछ नहीं कर सकता। दुःख दोषों को मिटाने आता है।**

भगवन मैंने यह देख लिया तुम बिन है हमारा कोई नहीं।
तुम वहाँ सहायक होते जहाँ संगी सुत दारा कोई नहीं।।

मैं दीन हूँ दिखती शक्ति नहीं, सद्भाव नहीं कुछ भक्ति नहीं।
इस भवसागर में भटक रहा, दिखता है किनारा कोई नहीं।।

बहती वासना बयार महा, मुझको अटकाती कहाँ कहाँ।
चक्कर खाती जीवन तरणी है खेवनहारा कोई नहीं।।

मुझ पर हे नाथ दया करिये, मेरी सारी बाधा हरिये।
प्रभु एक तम्हारी शरण बिना, अब और है चारा कोई नहीं।।

तुम ही हो सुधि लेने वाले, बल बुद्धि तुम्हीं देनेवाले।
हो तुम्हीं 'पथिक' के परमाश्रय तुम बिन है सहारा कोई नहीं।।

**सन्त-वचन—संसार की सहायता से दुख नहीं मिटता। दुख तो सुख का अंत है। अज्ञानी को दुःख होता है। संसार के समस्त कष्ट एवं दुःख मनुष्य से सत्य को ढुंढवाना चाहते हैं।**

भगवान तुम्हारी जय होवे, गुरुदेव तुम्हारी जय होवे ।।

हो तुम्हीं एक आश्रयदाता, तुम रक्षक बन्धु पिता माता ।
तुम बिन है राह कौन पाता, तुम से ही जीव अभय होवे ।।

तुम परम तत्व के ज्ञाता हो, दुर्गति में सुगति विधाता हो ।
तुम दिव्य-प्रकृति निर्माता हो, कुमसमय तुमसे सुखमय होवे ।।

दुखियों के सुखकारक तुम हो अधमों के उद्धारक तुम हो ।
भवसागर के तारक तुम हो, तुमसे सौभाग्य उदय होवे ।।

पशु में मानवता लाते तुम, मानव को देव बनाते तुम ।
वह साधन-ज्ञान सिखाते तुम, जिससे कि शक्ति संचय होवे ।।

कल्याण शरण में आते ही, दुखहारी दर्शन पाते ही ।
अपना सर्वस्व बनाते ही, आनन्द लाभ अतिशय होवे ।।

धृति सुकृति सुमति मिलती तुमसे, कीरति शुभगति मिलती तुमसे ।
तप त्याग विरति मिलती तुमसे, अति सुन्दर शुद्ध हृदय होवे ।।

मैं पन सब तुम में खो जावे, अन्तर का मल यह धो जावे ।
जीवन अमृतमय हो जावे, चेतना तुम्हीं में लय होवे ।।

ऐसा अब दे दो ज्ञान प्रभो, कुछ रह न जाय अभिमान प्रभो ।
बस रहे तुम्हारा ध्यान प्रभो, यह 'पथिक' प्रेम तुममय होवे ।।

**सन्त-वचन—परमात्मा अपने ज्ञान स्वरूप से सबके एकमात्र परमगुरु हैं। गुरु होने के लिए गुरु शरण परमावश्यक है। गुरु-तत्व देह-तत्व से भिन्न है। गुरु-तत्व अविनाशी है, देह विनाशी है।**

भगवान तुम्हें हम भी कुछ अपनी सुनाते हैं ।
जो दुर्दशा है मन की कहने में लजाते हैं ।।

हे नाथ तुम्हीं से तो मिलता है हमें सब कुछ ।
तुमको ही भूल करके हम दुख उठाते हैं ।।

अभिमान, मोह, माया में मग्न हो रहे हम ।
उद्धार के लिये अब प्रभु तुमको बुलाते हैं ।।

वह ज्ञान शक्ति देदो जिससे कि शान्ति पायें ।
हम 'पथिक' तुम्हीं से प्रभु यह आश लगाते हैं ।।

---

**सन्त-वचन—तुम्हारे लिये क्या उचित है, यह परमेश्वर ही जानता है। अपने हित के लिए जो कुछ तुम न करे सकोगे वह उनकी ओर से पूर्ण होगा। अपना कर्तव्य पूरा करो, प्रभु की अहेतुकी कृपा पर विश्वास रखो।**

---

भज लो श्रीभगवान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान ।

रहे न रावण सम अभिमानी हिरणकश्यप सम वरदानी ।
बल वैभव की खान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान ।।

आये अर्जुन सम धनुधारी, धर्मराज सम धर्माचारी ।
दानी कर्ण समान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान ।।

युग-युग की सब बात पुरानी, कलियुग भी बहुत कहानी ।
कवि कर गये बखान जगत् में कुछ दिन के मेहमान ।।

कहाँ विक्रमादित्य यहाँ है, कालिदास अरु भोज कहाँ है ।
वह कारूं लुक मान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान ।।

सुनी सिकन्दर दारा की कृति, सुनी बीरबल की सुन्दर मति ।
अकबर से सुल्तान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान ।।

अब न कहेंगे आँखों देखी, समझ रहे हैं सबकी शेखी ।
कितने दिन की शान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान ।।

दु:खी जनों का दुख न रहेगा, सुखी जनों का सुख न रहेगा ।
क्यों भूला नादान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान ।।

जगदीश्वर का नाम रहेगा, वही परमसुख धाम रहेगा ।
यही खोज सद्ज्ञान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान ।।

वह परमेश्वर घटघट वासी, परमानन्दरूप अविनाशी ।
'पथिक' न भूलों ध्यान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान ।।

**सन्त-वचन—विचार करो किसके बिना तुम रह ही नहीं सकते । उसे जानो जो तुम्हारा कभी भी त्याग नहीं करता, जिससे तुम भिन्न हो ही नहीं सकते, जिसे जाने बिना तुम्हें कहीं भी परम शान्ति मिल ही नहीं सकती।**

भजन बिन जीवन महादु:ख पावत ।।
अपने में ही अपने प्रभु की, जब लौं शरण न आवत ।

जन्म मरण के प्रकृति-चक्र में जग वासना नचावत ।
सुख के पीछे ही दुख भोगत पुनि सुख को ललचावत ।।

कबहूँ जल के जन्तु बनत, जल के बिन प्राण गवाँवत ।
कबहूँ उड़त भ्रमर पतंग बनि अग्नि में अंग जरावत ।।

कबहूँ कूकर शूकर तनधरि सड़े मांस को खावत ।
कबहूँ काक गीध बक बनकर गहरी चोंच चलावत ।।

कबहूँ बन्दर रीछ रूप में अपने अंग बंधावत ।
कबहूँ ऊँट ह्वै दर दर डोलत बोझा पीठ लदावत ।।

बकरा ह्वै मैं मैं करि अकड़त सहसा सीस कटावत ।
कबहूँ भेड़ बनि औंधे दौड़त तन के बाल मुड़ावत ।।

कबहूँ गदहा बनि कें रेंकत दोनों पैर कसावत ।
धोबी के घर लादी लादत गिरत उठत पहुँचावत ।।

कबहूँ भेंसा बनि ठेला में जुति कै मुँह फैलावत ।
तपत धूप में बोझा खींचत हाँफत फैन गिरावत ।।

कबहूँ बैल बनत तेली के कोल्हू बांधि घुमावत ।
कबहूँ जोतत हल किसान के जब लौं ऋण न चुकावत ।।

प्रभु करुणा करि भ्रमित जीव को नर देही में लावत ।
जिस साधन से मुक्ति मिलत है गुरु द्वारा समझावत ।।

जब मानव सबसे विरक्त बन प्रभु में चित्त लगावत ।
'पथिक' परम गति प्राप्त करत नित परमानन्द मनावत ।।

**सन्त-वचन—भजन वही है जिससे मन भगवान मय हो जाये। परम प्रभु को अपना सर्वस्व मान कर सब कर्म उन्हीं के अनुकूल करना ही भगवद्भजन है। भजन की प्रसिद्धि होना मान प्रतिष्ठा प्राप्त होना धन लाभ होना, स्त्री में आसक्त होना, इच्छित वस्तुओं की प्राप्ति हो जाना भजन में विघ्न है।**

भूल न जाना तुम जिससे सब कुछ पाते भगवान वही है।
उससे विमुख बना देता जो मानव को अभिमान वही है॥

त्यागी वह जो अहंकार के सहित वासना को तज देवे।
भय चिन्ता मिट जाये जिससे, आस्तिक का सद्ज्ञान वही है॥

प्रभु के नाते सेवा करना कुछ न मांगना यही समर्पण।
कुछ भी पाकर, जो न भूलता प्रभु को, मानस ध्यान वही है॥

जो दुख में गम्भीर शान्त है, सहन शील है वही तपस्वी।
जो न किसी को दीन बनाये, सद्गति दाता दान वही है॥

जो धन चाहे वह निर्धन है, मान चाहता है अभिमानी।
'पथिक' जो न कुछ चाहे जग से, बन्धन मुक्त महान वही है॥

**सन्त-वचन—परमात्मा और जीवात्मा के मध्य में अहंकार ही दीवाल है वह अभिमान द्वारा अति दृढ़ हो रही है। ज्ञान द्वारा अहंकार को देखो। जो कुछ संसार में तुम्हें मिला है उसे अपना न मानकर प्रभु का मानो और प्रभु को ही अपना मान कर उसी के प्रेम का अनुभव करो।**

मन मोहन अपनी माया में क्यों हमें भुलाते हो।
मेरे इस मूरख मन की पूरी करते जाते हो॥

तुमसे मैंने सब कुछ पाया पर तुम न मिले अब तक।
मिलते भी कैसे, उर में सच्ची चाह नहीं जब तक।
तुम तो सच्चे प्रेमी को ही प्रभु दरश दिखाते हो॥

हे नाथ, बता दो हम भी ऐसा प्रेम कहाँ पायें।
तुमसे ही मांग रहे हैं बोलो और कहाँ जायें।
हम योग्य नहीं है इसीलिये तो देर लगाते हो॥

हे दानी, वह बल दो जिससे हम हो जायें त्यागी ।
अब देख सकें हम प्रियतम तुमको होकर अनुरागी ।
सुनता हूँ एकाकी होने पर ही मिल पाते हो ।।

अज्ञान-तिमिर छाया है, तुमको पहिचानें कैसे ।
यह अहंकार बाधक है तब तुमको जानें कैसे ।
हम दीन 'पथिक' के दोषों को अब क्यों न मिटाते हो ।।

---

**सन्त-वचन—माया के चक्कर से बचना चाहते हो तो मायापति परमेश्वर की शरण लो। संसार की सम्पत्ति को अपनी न मानो, भगवान की जानो। प्रभु की शरण होने पर ही माया से पार मिलता है।**

---

मन लेते रहो जिस तरह भी हो पावन प्रभु के नाम ।
कह लो नारायण वासुदेव कुछ क्षण ही या अविराम ।।

अच्युत अनन्त गोविन्द जपो सब रोग नष्ट होंगे ।
पुरुषोत्तम विष्णु जनार्दन जप लो दूर कष्ट होंगे ।
हरिनाम भूल जाये समझो उस समय विधाता बाम ।।

इस लिये नाम लो प्रभु का वह सर्वस्व तुम्हारा है ।
जो कुछ भी मिला तुम्हें अब तक प्रभु का ही सारा है ।
प्रभु क्षण भी दूर नहीं होता संग रहता आठों याम ।।

इस लिये नाम लो प्रभु का वह सब कुछ का दाता है ।
जो लेता कभी हिसाब नहीं देता ही जाता है ।
प्रार्थी नाम ले ले कर अपने सभी बनाते काम ।।

इसलिये नाम लो प्रभु अन्तर्यामी अविनाशी हैं ।
उनसे कुछ भी है छिपा नहीं सब घट घट वासी है ।
जब दिव्य दृष्टि खुल जाती दिखते जगमय प्रभु सुख धाम ।।

नाम की महा महिमा युग युग के संत सुनाते हैं ।
अब भी दीनों दुखियों से गुरुजन नाम जपाते हैं ।
हम 'पथिक' नाम का आश्रय लेकर पाते हैं विश्राम ।।

**सन्त-वचन—परमात्मा प्रेम में ही उपलब्ध होगा। विवेक में ही परमात्मा का साक्षात् होगा। कामना से मुक्त चित्त में परमात्मा की अनुभूति होती है। परमात्मा को जीवन के विस्तार में असीमता में अनन्तता में छिपा देखो। नाम के सहारे वृतियों को अन्तर्मुखी करके शान्त मौन होकर स्वयं में अनन्त सत्ता का अनुभव करो।**

मानव की सफलता है प्रभु प्रेम के पाने में ।
सत्संग सहायक है प्रज्ञा के जगाने में ।।

यह तन तो साधनों का है धाम मिला सबको ।
अब देर न हो साधन को शुद्ध बनाने में ।।

साधन को साधे रहने से सिद्धि मिला करती ।
साधन न साध पाना ही हेतु गिराने में ।।

हम सबकी सुनते आये प्रभु की नहीं सुनते हैं ।
सुख मानते हैं अपनी ही सबको सुनाने में ।।

भगवान के मिलने में दूरी है न देरी है ।
देरी है मोह ममता अभिमान मिटाने में ।।

प्रभु नित्य प्राप्त ही हैं सद्‌गुरु ने बताया है ।
हम 'पथिक' स्वयं खोये थे खोज लगाने में ।।

**सन्त-वचन—अदूरदर्शी मनुष्य ही लोभी मोही अभिमानी होते हैं क्योंकि वे विनाशी वस्तुओं के अथवा क्षणस्थायी सुखों के आगे नहीं देख पाते। जो जहाँ तक देखते हैं वही तक जीते और वहीं तक कर्म करते हैं।**

मानव तुमने क्या पाया ।।
देखो सुख के बदले में कितना है दु:ख उठाया ।।

इन भोग सुखों के पथ में होकर तन मन के रोगी ।
कितने ही पुण्य मिटाकर मर गये करोड़ों भोगी ।
उनकी दुर्गति को लखकर शुभमति ने तत्क्षण गाया ।। मानव०।।

कितने राजे महाराजे हो गये महा अभिमानी ।
वे भी न रहे इस जग में उनकी रह गई कहानी ।
इससे तत्वज्ञ जनों ने सुख को दुखान्त बतलाया ।। मानव० ।।

जिनके महलों में प्रभुता के नवराग सदा बजते थे ।
इच्छित सुखदाता सेवक जिनको न कभी तजते थे ।
उनकी समाधि के सूनेपन ने यह शब्द सुनाया ।। मानव० ।।

जिनको इस जग में सुन्दर सुखकर सत्कार मिला है ।
जिनको पुण्यों के बदले में उत्तम प्यार मिला है ।
उनसे पूछों यदि इतने पर भी सन्तोष न आया ।। मानव० ।।

जो कुछ है अभी समय है तुम कर लो अपने हित की ।
अन्तर्मुख होकर त्यागो चंचलता अपने चित की ।
यदि कर न सके तुम ऐसा तो जीवन व्यर्थ गंवाया ।। मानव० ।।

उन सत्पुरुषों को देखो जो परम तपस्वी त्यागी ।
तज मान मोह माया को जो हुए सत्य अनुरागी ।
हम 'पथिक' जनों को ऐसे सद्गुरु ने मार्ग दिखाया ।। मानव० ।।

---

**सन्त-वचन—इन्द्रिय दृष्टि से जो कुछ सुखद सत्य प्रतीत होता है, बुद्धि दृष्टि से वही दुखद असत्य दीखता है। मानव वही जो बुद्धि दृष्टि से जगत् दृश्य को देखता हो।**

---

मानव प्रभु गुण गाते न क्यों तुम ।
सत की शरण में आते न क्यों तुम ।। १ ।।

जिनको तुम अपना समझे हो सदा काम यह आ न सकेंगे ।
गुरु विवेक बिन भव बन्धन से कोई तुम्हें छुटा न सकेंगे ।।
मन का मोह मिटाते न क्यों तुम ।
मानव प्रभु गुण गाते न क्यों तुम ।। २ ।।

जैसा भी चिन्तन होता है चित्त उसीमय हो जाता है ।
जिसकी चाह प्रबल होती है प्राणी उसको ही पाता है ।।
सत्य से प्रेम बढ़ाते न क्यों तुम ।
मानव प्रभु गुण गाते न क्यों तुम ।। ३ ।।

जिसकी सत्ता में सब प्राणी इच्छित सुख पाते रहते हैं ।
जिसकी याद दिलाने के हित अगणित दुख आते रहते हैं ।।
दुख से लाभ उठाते न क्यों तुम ।
मानव प्रभु गुण गाते न क्यों तुम ।। ४।।

काम क्रोध मद अहंकार से जिसका हृदय नहीं जलता है ।
भोगी बन कर कौन जगत् में अपने हाथ नहीं मलता हैं ।।
'पथिक' त्याग अपनाते न क्यों तुम ।
मानव प्रभु गुण गाते न क्यों तुम ।। ५।।

---

**सन्त-वचन—जीव का धर्म है साधना, परमेश्वर का धर्म है कृपा जिसकी प्रत्येक प्रवृत्ति दूसरों के हित तथा प्रसन्नता का हेतु बने वही धर्मात्मा है। योग द्वारा सत्य दर्शन ही 'परम धर्म' है।**

---

मानव मोह नींद से जागो ।।
सब कुछ छुट जाने के पहले, दु:खद मृत्यु आने के पहले ।
निज को बन्धन मुक्त बना लो गुरुजन के संग लागो ।।

जग में कितने ही सुख देखे, सुख के पीछे ही दुख देखे ।
अब यदि शान्ति चाहते हो तो सब दोषों को त्यागों ।।

तन धन को अपना मत जानो, परमेश्वर को अपना मानो ।
चाहे कुछ आये या जाये, तुम न कभी कुछ मांगो ।।

लोभ मान माया को तज कर परमप्रेममय प्रभु को भज कर ।
'पथिक' तुम्हें योगी होना है भोग भूमि से भागो ।।

---

**सन्त-वचन—मोह नींद से जागना ही सत्य दर्शन का मुहूर्त है। साधक जब तक खोज में व्यस्त है तब तक स्वप्न में है। आत्म अज्ञान ही निद्रा है। वह खोज में नहीं, खोजने वाले में विद्यमान है। जब तक तुम कुछ बनना या होना चाहते हो तब तक जो निरन्तर सत्य है उसे नहीं देख सकोगे।**

---

मानव सोचो जग के सुख का, विस्तार रहेगा कितने दिन ।
सत्कार रहेगा कितने दिन यह प्यार रहेगा कितने दिन ।।

चाहे पितु हो या माता हो, पत्नी हो सुत या भ्राता हो।
जिसको अपना कहते उस पर, अधिकार रहेगा कितने दिन ।।

कोई आता कोई जाता, सबसे थोड़े दिन का नाता।
जिसका भी आश्रय लेते वह, आधार रहेगा कितने दिन ।।

जो जग में सच्चे ज्ञानी है, परमात्मतत्व के ध्यानी हैं।
उनसे पूछो मन का माना, संसार रहेगा कितने दिन ।।

तुम प्रेम करो अविनाशी से, मिल जाओ सब उर वासी से।
ऐ 'पथिक' यहाँ 'मैं मेरा' का व्यापार रहेगा कितने दिन ।।

---

**सन्त-वचन—न रहने वाली देह में रहने वाले को पहचान लो। न रहने वाले सुख दुख के प्रकाशक को जान लो वही अविनाशी है।**

---

मानव हो जाओ सवधान ।।

जो कुछ दिखता है दृश्य-जगत् इसमें ही तुम जाना न भूल।
जिस सुख के पीछे दौड़ रहे, वह निश्चय ही है दुख-मूल।
दिखता उसको ही जिसे ज्ञान ।। मानव०।।

संघर्ष कलह का कारण है, यह ऊँच-नीच को भेद दृष्टि।
तुमने ईश्वर को दुनिया में, रच ली है अपनी छुद्र सृष्टि।
जिसका कि तुम्हें मिथ्यामिमान ।। मानव०।।

कुछ पद पाकर मद आ जाता, होने लगती निज अर्थपूर्ति।
परहित तो वह कर पाते हैं, जो होते सच्चे त्याग मूर्ति।
अब देखो तुम किनके समान ।। मानव०।।

प्रभुता पाकर भोगी न बने, ऐसे भी जग में पुरुष वीर।
देखो उनको उनसे सीखो, वे कितने है गम्भीर धीर।
यदि तुम भी हो कुछ बुद्धिमान ।। मानव०।।

है शक्ति जहां तक भी तुममें तुम पुण्य करो या महापाप।
तुम देव बनो या दानव ही, लो सुख प्रद वर या दुखद शाप।
बन लो कठोर या दयावान ।। मानव०।।

दु:ख बोकर दु:ख ही काटोगे, बच सकते केवल सुख बोकर ।
जो कुछ दोगे वह आयेगा, कितने ही गुना अधिक हो कर ।
है अटल प्रकृति का यह विधान ।। मानव०।।

तुम अतिशय सरल विनम्र बनो, समझो न किसी को तुच्छ-नीच ।
कटुता कर्कशता निर्दयता, लाओ न कहीं व्यवहार बीच ।
परहित का रखों सदा ध्यान ।। मानव०।।

जो संग न सदा रह सकेगा, अब उसका दो तुम मोह छोड़ ।
जो तुमसे भिन्न न हो सकता, ऐ 'पथिक' उसी से नेह जोड़ ।
इस त्याग प्रेम का फल महान ।। मानव०।।

---

**सन्त-वचन—मानव वही है जो कुछ जानता भी और मानता भी है। सभी दुर्बलताओं की निवृत्ति मानव-जीवन की मांग है। असावधानी से अनेकों दोष बनते हैं। साधक को व्यर्थ वचन व्यर्थ श्रवण, व्यर्थ दर्शन व्यर्थ भ्रमण तथा व्यर्थ चिंतन से बचने के लिए सावधान रहना चाहिये।**

---

मिलता कभी सौभाग्य से ही सन्त समागम ।
सन्तों के सत्य संग से हटता है असत् भ्रम ।।

सत्संग के बिना कभी होता नहीं है ज्ञान ।
यदि ज्ञान न हो सत्य का रहता नहीं है ध्यान ।
बिन ध्यान के दिखते नहीं हैं प्रेममय भगवान ।
भगवान बिना जीव का होता नहीं कल्यान ।
सत्संग के सुयोग से मिटता है मोह तम ।। मिलता०।।

सत्संग के बिना किसी की गति नहीं होती ।
जिससे कि पुण्य प्राप्त हों सन्मति नहीं होती ।
पापों से जो बचाती वह सुकृति नहीं होती ।
उद्वेग को दबाती जो वह धृति नहीं होती ।
इसके बिना होता ही नहीं शक्ति का संयम ।। मिलता०।।

सत्संग से ही ध्रुव ने पाया था अटल धाम ।
प्रहलाद ने इससे ही दिखाया था कहाँ राम ।
सत्संग से ही पाण्डवों के दुख मिटे तमाम ।

सत्संग से बन जाते हैं बिगड़े हुए सब काम ।
सतसंग से सुधर गये लाखों महाअधम ।। मिलता०।।

इसके बिना कितने ही शक्ति शान्ति खो रहे ।
इस मोहमयी नींद में लाखों है सो रहे ।
जो लघु थे वे सत्संग से महान हो रहे ।
जो मलिन थे वह इससे ही निज मल को धो रहे ।
मिलती है 'पथिक' को यही पै शान्ति मनोरम ।। मिलता०।।

**सन्त-वचन—ज्यों-ज्यों असत् से छुटकारा होता जाता है त्यों-त्यों सत् से अभिन्नता होती जाती है। असतसंग ही सत्संग में बाधक है। सत् के ही द्वारा असत् की प्रतीति होती है। जो नित्य निरन्तर है वही सत् है।**

मुझको इतना ही क्या कम है।।

जो इतना अयोग्य होकर भी मैं आता हूँ द्वार तुम्हारे ।
जो न कहीं भी पा सकता हूँ वह पाता हूँ द्वार तुम्हारे ।
यद्यपि सब विधि मैं मलीन हूँ यहाँ न कुछ साधन संयम हैं ।। मुझको०।।

नाथ तुम्हारा आश्रय लेकर भवसागर में बह न सकेंगे ।
निश्चय ही उस कृपादृष्टि से पाप हमारे रह न सकेंगे ।
पतितोद्धारक नाम तुम्हारा मन का कर देता उपशम है ।। मुझको०।।

गाता रहूँ तुम्हारी महिमा यह कुछ कम सौभाग्य नहीं है ।
चाहे जब हो जैसे भी हो मेरा तो कल्याण यहीं है ।
मेरे तुम्हीं एक अवलम्बन तुमसे मिलती शान्ति परम है ।। मुझको०।।

ऐसा कुछ हों मेरे प्रियतम तुम्हें कहीं भी भूल न जाऊँ ।
चाहे कहीं रहूँ पर उर से तुमको ध्याऊँ तुमको पाऊँ ।
प्रभो मिटा दो जो कि 'पथिक' में दिखता कहीं अहं या मम है ।। मुझको०।।

**सन्त-वचन—चाह के मिटाने का नाम सन्तोष है। जितना कुछ है उतने ही में प्रसन्न रहना सन्तोष है। जो कुछ नहीं चाहता उसे कोई दुख नहीं दे सकता। त्याग, ज्ञान तथा प्रेम में सन्तोष न करना चाहिये।**

मुश्किलें होती हैं आसान बड़ी मुश्किल से ।
समझ में आता है अज्ञान बड़ी मुश्किल से ।।

दुनियाबी ज्ञान के गरूर में सब भूले हैं।
कोई होता है निरभिमान बड़ी मुश्किल से ।।

जहाँ इन्सान में है हैवानियत छिपी रहती।
देख पाते कोई विद्वान बड़ी मुश्किल से ।।

कभी ईश्वरी विधान गलत करता नहीं।
मगर होता है इतमीनान बड़ी मुश्किल से ।।

जो कि वलवान रूपवान झूठवान बना।
उसे होना है आत्मवान बड़ी मुश्किल से ।।

किसी की आत्मा परमात्मा से भिन्न नहीं।
ज्ञानी कर पाते हैं पहिचान बड़ी मुश्किल से ।।

किसी भी साधना से चित्त शुद्ध होने पर।
सुलभ हो जाते हैं भगवान बड़ी मुश्किल से ।।

सारे बन्धन अशान्ति दु:ख अहंकार में हैं।
मुक्त होता कोई महान् बड़ी मुश्किल से ।।

गलत कर्मों से ही हम मुश्किलों में पड़ते हैं।
सही कर्मों का होता ज्ञान बड़ी मुश्किल से ।।

सत्य सर्वत्र सर्वमय उसी में है संसार।
'पथिक' में रहता यही ध्यान बड़ी मुश्किल से ।।

---

**सन्त-वचन—परमात्मा सर्वत्र विद्यमान है, वह सबका है, सब में है, अभी है, यहीं है, हम उसी में हैं।।**

---

मेरे उर की पीर कोई जाने ना ।।

मैं जानूँ या प्रभु तुम जानो, और तमाशेगीर कोई जाने ना ।।
तरसभरी चितवन की करुणा, बहत रहत दृगनीर कोई जाने ना ।।
इक आशा लालसा चाह इक, किहि विधि करत अधीर कोई जाने ना ।।
बेसुध मगन लगन इक लागी, रहूँ सदा गम्भीर कोई जाने ना ।।
एकहि नाम 'ध्यान इक गायन', एक बसी तस्वीर कोई जाने ना ।।
जाके लगे 'पथिक' सोई जाने, और प्रेम की पीर कोई जाने ना ।।

**सन्त-वचन—वियोग के बिना योग का आनन्द नहीं आता इसीलिये प्रियतम प्रभु छिपे हुये हैं। जब उनके बिना हम कही भी चैन न लेंगे तब वह अपने में ही प्रकट दीखेंगे।**

मेरे परमाधार तुम्हीं हो।
मेरे जीवन में जीवन तुम अतिशय सुन्दर अनुपम धन तुम ।
सब सुख के भण्डार तुम्हीं हो, मेरे परमाधार तुम्हीं हो ।।

अलख अनन्त नित्य अविकारी भक्त भावमय लीलाधारी ।
अतुलित पूर्ण उदार तुम्हीं हो, मेरे परमाधार तुम्हीं हो ।।

अद्‌भुत रसमय रीति तुम्हारी, तुम समान है प्रीति तुम्हारी ।
सबके पालनहार तुम्हीं हो, मेरे परमाधार तुम्हीं हो ।।

रघुपति राघव राम कहीं तुम, गोपी बल्लभ श्याम कहीं तुम ।
निराकार साकार तुम्हीं हो, मेरे परमाधार तुम्हीं हो ।।

विविध रूपों में भक्ति तुम्हीं से, सबकी है अनुरक्ति तुम्हीं से ।
वार तुम्हीं हो पार तुम्हीं हो, मेरे परमाधार तुम्हीं हो ।।

कभी न भूले ध्यान तुम्हारा रहे एक अभिमान तुम्हारा ।
'पथिक' हृदय सरकार तुम्हीं हो, मेरे परमाधार तुम्हीं हो ।।

**सन्त-वचन—देहादिक वस्तुओं को अपना न समझो परमात्मा को ही अपना समझो तभी स्वतः चिन्तन ध्यान होने लगेगा । ध्यान का प्रयत्न ही ध्यान नहीं होने देता । आगे पीछे का चिन्तन भगवद् ध्यान में विघ्न है।**

मेरे परमाधार यहीं हो पर हम तुमको कैसे जानें ।।

जड़ तन मन के जीवन हो तुम नित्य सत्य आनन्दघन हो तुम ।
सर्वकला भण्डार यहीं हो पर हम तुमको कैसे जाने ।।

अलख अनन्त नित्य अविकारी भक्तिभाव वश लीलाधारी ।
दाता परम उदार यहीं हो पर हम तुमको कैसे जानें ।।

परम मधुर है प्रीति तुम्हारी सुखकर हितकर नीति तुम्हारी ।
निराकार साकार यहीं हों पर तुमको कैसे जानें ।।

कहीं न भूले ध्यान तुम्हारा रहे निरन्तर ज्ञान तुम्हारा ।
रक्षक सभी प्रकार यहीं हों पर हम तुमको कैसे जानें ।।

कभी 'पथिक' से दूर नहीं तुम जहाँ रहें हम नित्य वहीं तुम ।
एक अनन्त अपार यहीं हो, पर हम तुमको कैसे जानें ।।

---

**सन्त-वचन—ज्ञान मनुष्य के भीतर उसका स्वरूप है। आत्मा ज्ञान स्वरूप है। मान्यता शून्य चित्त का दर्शन सत्य का दर्शन है जो सर्वाश्रय सर्वाधार सब में व्यापक है उसे जानने के लिये शून्य और शान्त होना ही साधना है। विचारों के शान्त होने पर दर्शन का द्वार खुलता है।**

---

मेरे प्रभु हमें कभी न कभी निज रूप दिखाओगे ।
हम विमुख भले ही हों एक दिन तुम सम्मुख आओगे ।।

प्रभु नाम तुम्हारा इतना सुमधुर शुभ मंगलमय है ।
जिसका आश्रय लेने से होता दोषों का क्षय है ।
हे दुःखहारी मेरे भी सारे दुःख मिटाओगे ।।

तुम नित्य एक रस व्याप रहे हो जग के कण-कण में ।
तुमहीं से तो है नित नवीन परिवर्तन क्षण-क्षण में ।
हम देख सकें तुमको ऐसी साधना बताओगे ।।

हम भूले जिसको देख, जो कि अति मोहक सुखकर है ।
वह प्रकृति तुम्हारी सत्ता से जब इतनी सुन्दर है ।
उसके पीछे तुम कैसे हो यह भेद बताओगे ।।

हम छूट सकेंगे जैसे भी सुख-दुःख के बंधन से ।
यह तुम्हीं जानते हो, हम तो हारे हैं निज मन से ।
शरणागत दीन 'पथिक' को भी तुम मुक्त बनाओगे ।।

---

**सन्त-वचन—जिस स्मरण चिन्तन से मन की वृति तथा प्रीति प्रभुमय बने वही भजन है। अन्धविश्वास अज्ञान है, विवेक ही विज्ञान है। यदि**

**तुम प्रभु को ही पूरे हृदय से चाहते हो तो तुम्हारी भूल भ्रान्ति प्रभु अपनी कृपा से दूर कर ही देंगे।**

मेरे प्रियतम दयानिधान तुमको भूल न जाऊँ ।
सब में व्यापक है भगवान् तुमको भूल न जाऊँ ।।

अब ऐसी हो कृपा तुम्हारी मेरी मिटें कामना सारी ।
जागृत रहे स्वयं में ज्ञान तुमको भूल न जाऊँ ।।

परम प्रेममय सबके स्वामी अकथ अनोखे अन्तर्यामी ।
होता रहे सतत गुणगान तुमको भूल न जाऊँ ।।

प्रभो मुझे दो प्रज्ञा का बल, यह मन हो जाये अति निश्छल ।
मैं दु:ख-सुख में रहूँ समान तुमको भूल न जाऊँ ।।

प्रभो 'पथिक' में प्रेम जगा दो तृष्णा तम भय भ्रान्ति भगा दो ।
हे सर्वज्ञ समर्थ महान् तुमको भूल न जाऊँ ।।

---

**सन्त-वचन—चिन्तन उसी का करो जिससे भिन्नता न हो, दूरी न हो, जड़ता न हो और जो जन्म मृत्यु से परे हो।**

---

मैं तो उन सन्तन का दास जिन्होंने मन जीत लिया ।
वे कबहूँ रहत उदास जिन्होंने मन जीत लिया ।।

उनकी समीपता गंगा सी शीतल है ।
उनका उर निर्मल दिखता कहीं न छल है ।
उनके ढिंग मिलत सुपास जिन्होंने मन जीत लिया ।। १ ।।

उनके वचनों से मोह दूर हो जाता ।
मिलता विवेक भीतर का भ्रम खो जाता ।
हो जाते पातक नास जिन्होंने मन जीत लिया ।। २ ।।

वे संग रहित है प्रभु के ही अनुरागी ।
जिनसे दु:ख मिलता उन दोषों के त्यागी ।
वे जग से रहत निराश जिन्होंने मन जीत लिया ।। ३ ।।

उनके जीवन में चिन्ता भय आने का ।
अविवेक जनित मानसिक क्लेश पाने का ।

मिलता न कहीं अवकास जिन्होंने मन जीत लिया ।। ४।।

उनको जग में सब दिखता मंगलमय है।
प्रतिकूल परिस्थिति में चित शान्त अभय है।
उन्हें होता कहीं न त्रास जिन्होंने मन जीत लिया ।। ५।।

मैं 'पथिक' उन्हीं को पुनि-पुनि शीस नवाऊँ।
उनसे ही सुमति आत्मरति सद्गति पाऊँ।
करूँ उनके निकट निवास जिन्होंने मन जीत लिया ।। ६।।

---

**सन्त-वचन—माया के चक्कर से बचना चाहते हो तो मायापति परमेश्वर की शरण लो। संसार की सम्पत्ति को अपनी न मानो, भगवान की जानो।**

---

मैं क्या माँगू जब मेरा सब कुछ भार तुम्हीं में परमात्मन।
जाने अनजाने जीवन का विस्तार तुम्हीं में परमात्मन ।।

धड़कन नाड़ी प्राणों की गति तन का पाचन विधिवत् पोषण।
चलता है जन्म-मरण तक सब व्यापार तुम्हीं में परमात्मन ।।

यह अहंकार अपने ही दोषों से अगणित दुःख पाता है।
इस महारोग का होता है उपचार तुम्हीं में परमात्मन ।।

सुख के पीछे भागते हुये जब हम अतिशय थक जाते हैं।
विश्राम सुलभ होता है मन के पार तुम्हीं में परमात्मन ।।

ज्यों सागर में तरंग रहती ऐसे हम रहते हैं तुम में।
तुम ही तो अपने हो, अपना अधिकार तुम्हीं में परमात्मन ।।

जिसका कोई भी रूप नहीं वह सर्वरूपमय तुम ही हो।
यह सभी बिगड़ते बनते हैं आकार तुम्हीं में परमात्मन ।।

उत्तर दक्षिण पूरब पश्चिम से पथ कितने ही दिखते हैं।
हम 'पथिक' कहीं हों मिलते हैं सब द्वार तुम्हीं में परमात्मन ।।

**सन्त-वचन—जिसकी आवश्यकता केवल भगवान ही रह जाते हैं वही भक्त बनता है। विषयी अनेक का और विरागी एक का भजन करता है।**

मैं हूँ पथिक सखे तुम मुझसे समझ-बूझ कर प्रीति बढ़ाना ।।
फिर मत कहना आगे चलकर मैंने तुम्हें नहीं पहिचाना ।।

यदि तुम मेरे सच्ची साथी हो तो इस सत्पथ में आओ ।
आकृति नहीं किन्तु तुम अपनी परम विरागी प्रकृति बनाओ ।
हो कुछ भी निज भाग्य परिस्थिति कभी न अपना लक्ष्य भुलाओ ।
ऐसा न हो कही कुछ लालचवश तुम पीछे ही रह जाओ ।
याद रहे अति दुष्कर होगा मुझे छोड़कर के फिर पाना ।।

यदि तुम अपने मन में कुछ दुनियाबी ममता प्यार लिये हो ।
और साथ ही शान मान के पद उपाधि अधिकार लिये हो ।
भौतिक जीवन रक्षा के हित धन-वैभव का भार लिये हो ।
सत्य विमुख क्षणभंगुर सुख का ही यदि तुम आधार लिये हो ।
तब तो मेरे संग में तुमको बहुत कठिन है पैर उठाना ।।

कितने प्रेमी मिले, छुट गये कुछ आगे भी छुट जायेंगे ।
रुकने वाले बढ़े हुओं को देख-देख कर पछतायेंगे ।
इस पथ में चंचल चित वाले जहाँ-तहाँ ठोकर खायेंगे ।
जो कि तपस्वी त्यागी हैं वह सत्वर परम शान्ति पायेंगे ।
प्रेमी का कर्तव्य यही है कहीं न रुकना चलते जाना ।।

चलते हुये चतुर्दिक अपने किसी किसी को सोते देखूँ ।
कभी किसी को दुखद स्वप्न से भयवश जाग्रत होते देखूँ ।
सुख के कारण ही इस जग में बद्ध जीव को रोते देखूँ ।
सत्यज्ञान से वंचित रहकर सबको जीवन खोते देखूँ ।
सोचो कब तक साथ रहेगा जिसको तुमने अपना माना ।।

प्रभु के पथ में चलते रहना मेरा तो बस यही काम है।
जहाँ किया विश्राम कहीं पर कहने भर को वही धाम है।
जीवन के दिन बीत रहे हैं नित्य प्रात है नित्य शाम है।
ठहर न सकता अधिक दिवस तक इसीलिये तो पथिक नाम है।
इस अनन्त के पथ में मेरा कोई निश्चित नहीं ठिकाना ।।

मैं हूँ पथिक सखे तुम मुझसे समझ-बूझकर प्रीति बढ़ाना ।।

---

**सन्त-वचन—तुम भले ही न समझो पर मृत्यु इसीलिये है कि तुम विनाशी जीवन के द्वारा अविनाशी नित्य जीवन को प्राप्त कर लो। इस देह को अपना रूप न मानो।**

---

मैंने देखा है दृष्टि पसार सदा रहता कुछ भी नहीं ।।
जहाँ तक भी है ये संसार सदा रहता कुछ भी नहीं ।।

अनेकों जन्म ले कितने यहाँ माता-पिता देखे।
पता भी है नहीं जिनका बहुत संगी सखा देखे।
वृहद् धन धान्य वैभव भोग के शुभ भाग्य पा देखे।
यहाँ अपनी प्रशंसा के बहुत कुछ गीत गा देखे।
यही कहना पड़ा हर बार सदा रहता कुछ भी नहीं ।।

यहाँ पर हर किसी को, नेह नाता जोड़ते देखा।
जहाँ मन को न हो पाई, वहीं मुख मोड़ते देखा।
उन्हीं को रूठते लड़ते प्रीति को तोड़ते देखा।
जिसे पकड़ा उसी को, निठुरता से छोड़ते देखा।
तभी मैंने लगाई पुकार सदा रहता कुछ भी नहीं ।।

प्रेमिका और प्रेमिक प्रेम का जो गान करते हैं।
परस्पर दीखता ऐसा कि सर्वस दान करते हैं।
किन्तु सुख मानते जिसमें उसी का मान करते हैं।

अनेकों दु:ख सहकर स्वार्थ का ही ध्यान करते हैं।
बता देता है सीमित प्यार सदा रहता कुछ भी नहीं ।।

यहाँ पर है कोई अपना तो केवल आत्मा अपना।
वही है विश्व व्यापक प्रेममय परमात्मा अपना।
प्रकाशक नाम रूपों का यही विमलात्मा अपना।
उसी के हम, वही है सच्चिदानन्द आत्मा अपना।
और जितने भी है आधार सदा रहता कुछ भी नहीं ।।

जहाँ सब दु:ख मिट जाते वही सच्चा ठिकाना है।
वहाँ पर पहुँच कर के इस जगत में फिर न आना है।
यहाँ कुछ भी न अपना मानकर ही मुक्ति पाना है।
अहंता, स्वार्थपरता, मोह, ममता को मिटाना है।
'पथिक' यह ज्ञानियों का विचार सदा रहता कुछ भी नहीं ।।

---

**सन्त-वचन—जो कुछ भी जीवन में मिला है उसे अपना न मानो। जिस प्रभु से मिला है उस नित्य प्राप्त प्रभु को अपना सर्वस्व जानो। तुम वह सत्य हो जिसमें किसी प्रकार का परिवर्तन सम्भव नहीं। अहंता ममता अपने ही छोड़ने से छूटती है शेष सब कुछ छीन लिया जाता है। अहंता ममता को छोड़ना ही संन्यास है।**

---

मैंने सुना है तुम हो पर यह कुछ भी नहीं हो ।
जो कुछ हो विलक्षण हो तुम जैसे भी कहीं हो ।।

तुम झलक दिखाते कभी ज्ञानी के ज्ञान में।
तुम समझ में आते कभी ध्यानी के ध्यान में।
तुम चेतना बन चमकते हो स्वामिमान में।
तुम क्षुद्र में हो और तुम्हीं महान में।
इस झूठ के परदे में हो जो कुछ हो सही हो ।। मैंने०।।

जिस दर पै आके फिर कहीं जाना नहीं रहे ।
मन के लिये कोई भी बहाना नहीं रहे ।
जाने के लिये कोई ठिकाना नहीं रहे ।
पाकर तुम्हें फिर कुछ पाना नहीं रहे ।
मेरी ये चाह है कि तुम्हारी ही चही हो ।। मैंने०।।

तुमको कभी दूरातिदूर मान रहे हम ।
आनन्दमय चिन्मात्र कभी जान रहे हम ।
अपने ही रूप में कहीं पहिचान रहे हम ।
संसार में क्या सार है यह छान रहे हम ।
हमसे वो दूर कर दो जो कुछ भूल रही हो ।। मैंने०।।

सब खोज लगा करके, जाना यही हमने ।
तीर्थों में भी जाकर के जाना यही हमने ।
कुछ वेष बना करके जाना यही हमने ।
अब स्वयं में आकर के जाना यही हमने ।
मुझ 'पथिक' में हो, मैं जहाँ हूँ तुम भी वहीं हो ।। मैंने०।।

---

**सन्त-वचन—भगवान समाज सेवक को दुखद संसार के रूप में, जिज्ञासु को ज्ञान के रूप में और प्रत्येक भावुक प्रेमी को भावानुसार विविध रूप में मिलते हैं।**

---

मंगलमय घड़ी आई है कोई जाने न जाने ।।
जब ते मिले दरश सद्गुरु के मनहुँ परमनिधि पाई है, कोई जाने न जाने ।।
शुभ सतसंगति सुलभ भई जब ज्ञानामृत झरिलाई है, कोई जाने न जाने ।।
सुनि सुनि निज प्रियतम को महिमा मन में सुरति समाई है, कोई जाने न जाने ।।

एकहि मनन एक ही चिन्तन एक ही छवि मन भाई है, कोई जाने न जाने ।।
सकल विश्व में उस सुन्दर को शुचि सुन्दरता छाई है, कोई जाने न जाने ।।
'पथिक' धन्य वह जिसने अपने प्रभु से प्रीति लगाई है, कोई जाने न जाने ।।

---

**सन्त-वचन—मानसिक स्वीकृतियों धारणाओं से परतन्त्र साधक आनन्द को आलोक को प्राप्त नहीं होता। प्रेम में परमात्मा है आनन्द है जीवन है।**

---

यदि आज सद्विभूतियों का अवतार न होता ।
सद्धर्म धरा धाम पै विस्तार न होता ।।

अपने को त्याग तप में यदि ये न तपाते ।
जीवों का किसी भाँति भी निस्तार न होता ।।

सद्ज्ञान का प्रकाश भी मिलता नहीं कहीं ।
गुरुदेव का खुला जो दया द्वार न होता ।।

कितने अध:पतित हम सबके लिये यहाँ ।
यदि ये न उतरते तो उद्धार न होता ।।

निर्द्वन्द 'पथिक' हो रहे इनकी ही शरण में ।
जिनकी कृपा बिना है कोई पार न होता ।।

---

**सन्त-वचन—जिसमें अनन्त ऐश्वर्य, अनन्त माधुर्य और अनुपम सौंदर्य एक साथ मिलते हैं वही भक्तों का भगवान है। भक्त वही है जो भगवान के अतिरिक्त किसी का भी चिन्तन नहीं करता।**

---

यदि चाहो निस्तार भजो नारायण नाम ।
सब समेट कर प्यार भजो नारायण नाम ।।

नारायण ही संकटहारी, प्राणिमात्र के हृदय बिहारी ।
आश्रय सभी प्रकार भजो नारायण नाम ।।

परमसुहृद करुणा के सागर, ज्ञान स्वरूप सकल गुणआगर ।
दाता परम उदार भजो नारायण नाम ।।

चलते फिरते रोके गाके दु:ख में सुख में मन समझा के ।
कभी पुकार पुकार भजो नारायण नाम ।।

वह चिन्मय है इस जड़तन में, वही अचल हैं चंचल मन में ।
'पथिक' स्वभाव सुधार भजो नारायण नाम ।।

---

**सन्त-वचन—वाणी द्वारा नाम स्मरण से नामी के प्रति सम्बन्ध जुड़ता है। मन द्वारा स्मरण करने से प्रीतिपूर्वक अपनत्व का भाव बढ़ता है। नामी को बुद्धियोग द्वारा जानने से तत्वत: जानकारी होती है। प्रेमयोग पूर्वक भजन से अभेद सम्बन्ध की अनुभूति होती है। सद्भाव एवं प्रेम के योग बिना भजन पूर्ण नहीं हो पाता।**

---

यदि तुम बुद्धिमान हो मानव, जीवन व्यर्थ गंवाते क्यों हो ।।
ऐसा अवसर पाकर अपने हित में देर लगाते क्यों हो ।।

चाहे जिसे देखिये जग की सभी वस्तु में परिवर्तन है ।
कुछ भी तुम पा जाओं लेकिन वह सब अपने का सा धन है ।
अन्त दुखद सुख ही बन्धन है रचने वाला चंचल मन है ।
यदि तुम मुक्ति चाहते हो तो देखो जो चिद्आनन्दघन है ।
वह है जनम मरण का साथी उसकी याद भुलाते क्यों हो ।।

पुण्यवान होना है तुमको सेवा पर उपकार करो तुम ।
यदि अपना उत्थान चाहते प्राणिमात्र से प्यार करो तुम ।
हृदय निष्कलुष रखना हो तो सबसे सद्व्यवहार करो तुम ।
सत्य ज्ञान से दुखद अविद्या की सीमा को पार करो तुम ।
जिन दोषों से दुर्गति होती भ्रमवश उन्हें छिपाते क्यों हो ।।

जिसके द्वारा मानवता में सरस दिव्यता लाई जाती ।
शुभकर्मी बन सद्भावों की जिससे शक्ति बढ़ाई जाती ।

जिसके बल से दृढ़प्रतिज्ञ बन पाशव प्रकृति मिटाई जाती ।
कितने ही जन्मों के पीछे जो जीवन में पाई जाती ।
उस विद्या का दुरुपयोग कर अपने पाप बढ़ाते क्यों हो ।।

जो कुछ भी है पास तुम्हारे उससे तुम दानी बन जाओ ।
विनम्रता के द्वारा ही तुम सरल निरभिमानी बन जाओ ।
प्राप्त ज्ञान का गर्व छोड़कर अधिकाधिक ज्ञानी बन जाओ ।
निर्मोही होकर तुम सच्चे प्रेमी पुनि ध्यानी बन जाओ ।
होकर अमृत पुत्र 'पथिक' तुम मृत्यु मार्ग में जाते क्यों हो ।।

---

**सन्त-वचन—सत्संग का सुयोग मिलने पर भी यदि मनुष्य विचार न करेगा, अपने दोषों को न देखेगा तो सैकड़ों वर्ष बीत जाने पर दुखों और बन्धानों से मुक्ति न मिलेगी। सबसे बड़ा बुद्धिमान वही है जो अपने हित का साधन जानता है।**

---

यदि समझ सको तो यह समझो क्यों भूले विश्वबिपिन में तुम ।
इतना दुख पाकर भी अब तक सुख खोज रहे हो किन में तुम ।।

कितना ही घूमोफिरो कहीं, जो कुछ दिखता है सत्य नहीं ।
अपने को न जानने तक ही मोहित हो महामलिन में तुम ।।

इस सृष्टि वीथियों में सुन्दर आकृतिमय पुष्प खिले मनहर ।
पर कण्टक भी उनके संग में, रस लेने जाते जिनमें तुम ।।

जिनको तुम कहते हो सुखमय, वे दीखेंगे इक दिन दुखमय ।
जिनके प्रलोभनों में फंस कर फिरते हो गलिन गलिन में तुम ।।

जग में कुछ अपना मत जानो जगदीश्वर को अपना मानो ।
जो तुम्हे छोड़ते जाते हैं, क्यों अटक रहे हो उनमें तुम ।।

निश्चित है मृत्यु निशा आना, खोकर यह समय न पछताना ।
ऐ 'पथिक' स्वयं का अन्वेषण अब कर लो दिन ही दिन में तुम ।।

**सन्त-वचन—बुद्धि दृष्टि से देह जैसी बाहर भीतर है वैसी ही देखो। शब्द स्पर्श रूप रसादि की वेदना को साक्षी होकर देखो सुख दुख की सीमा को देखो। सकाम निष्काम चित्त को दृष्टा होकर देखो। मन की राग द्वेष क्रोधदि वृत्तियों को देखो। भोक्ता न बनकर दृष्टा बने रहो, जो क्षण-क्षण परिवर्तित हो रहा है जा रहा है उसमें सदा एक रस रहने वाले अविनाशी को देखो—इस प्रकार सम्यक् दर्शन से भक्ति मुक्ति सुलभ हो जाती है।**

यह प्रेम पंथ ऐसा ही है जिसमें सब कोई चल न सके ।
कितने ही बढ़े थके फिसले कुछ आगे गये सम्हल न सके ।।

जो कुछ न चाहते हैं जग में वह कहीं रुकते हैं मग में ।
है सुन्दर सांची प्रीति वही जो उर से कभी निकल न सकें ।।

वे प्रेमी हो अधिकारी हैं जो इतने धीरजधारी हैं ।
चाहे कितना ही दुख आये तन जाये पर प्रण टल न सके ।।

वे मिलते सब कुछ खोने से उर का मल धुलता रोने से ।
प्रियतम का वह प्रेमी कैसा जो विरह अग्नि में जल न सके ।।

जो भोग सुखों का त्यागी है प्रभुता से पूर्ण विरागी है ।
वह 'पथिक' पहुँच पाता जिसको यह मन को माया छल न सके ।।

**सन्त-वचन—परम प्रेमास्पद वही है जो नित्य निरन्तर अपने साथ है जो सदा देता ही रहता है, वह स्वयं ही अपना प्रेम प्राणियों को देता है और उसी अपने प्रेम को अपने प्रति पाकर प्रसन्न हो जाता है।**

यह सत्य वचन है पूर्ण त्याग बिन हम चिरशान्ति न पा सकते ।।
सच्चे प्रेमी होकर ही जग में पूर्ण त्याग अपना सकते ।।

अब समझे यह सुख की तृष्णा अगणित अपराध कराती है ।
अधिकार मान धन की लिप्सा कितने ही द्वार घुमाती है ।
कितनी ही सिद्धि प्रसिद्धि मिले पर मन को चैन न आती है ।
जब तक संतोष नहीं होता सबको कामना नचाती है ।
हम निजस्वरूप में नित्यतृप्त होकर कामना मिटा सकते ।। १ ।।

हम बन जायें तपसी विरक्त कौपीन मात्र लेकर तन में।
इतने पर भी यदि भोगों की कामना अतृप्त भरी मन में।
कुछ भक्तों के मिलते ही हम फिर महल बना सकते बन में।
साधना भूल सकती है तब तो धनिकों के आराधन में।
जब तक गुरु ज्ञान न हो तब तक पग-पग में धोखा खा सकते ॥ २॥

हम संन्यासी हो जायें पर यदि कीर्ति प्रतिष्ठा है प्यारी।
सम्भव है छोटा घर तज कर हम बन जायें फिर मठधारी।
तब तो चाहेंगे आश्रम में आजायें ऊँचे अधिकारी।
गुरुजन की नहीं गवर्नर के स्वागत की होगी तैयारी।
तब लक्षाधीशों के पीछे ईश्वर का ध्यान भुला सकते ॥ ३॥

हम श्रमी संयमी साधक हों इसके ही लिये मिला तन है।
जीवन को मुक्त बनाने का बस असंगता ही साधन है।
यह भी समझे ! बन्धन का कारण यह तन नहीं किन्तु मन है।
उलझन भी तब तक है जब तक मष्तिष्क हृदय में अनबन है।
हम सद्विवेक के द्वारा ही सारी उलझन सुलझा सकते ॥ ४॥

हम मान रहे हैं अपने को जग में यदि सर्वोत्तम ज्ञानी।
हैं धनी कुलीन शक्तिशाली विद्वान विचारक विज्ञानी।
देखना यही है अन्तर में कितने लोभी कितने दानी।
उर के कठोर या कोमल-चित हैं नत विनम्र या अभिमानी।
हम आत्म निरीक्षण करके जीवन में सुन्दरता ला सकते ॥ ५॥

हम जन नेता हो सकते हैं नेतृत्व स्वयं पर कर लें जब।
सुख बाँट सकेंगे दुखियों को अपने अभाव दुख हरलें जब।
तब उठा सकेंगे दलितों को हम उनके बीच उतर लें जब।
हम भीतर से शीतल होकर ही पर ताप हटा सकते ॥ ६॥

बन सकते सरस कथा वाचक जब ध्यान कभी घन में न रहे।
पूजा में क्या चढ़ पायेगा, यह उथल पुथल मन में न रहे।

श्रोता दर्शन कर मुग्ध बने, वह भूषा विधि तन में न रहे ।
निज भाव भगवद्‌कार बने, जब प्रीति धनिक जन में न रहे ।
हम सन्तोषी निस्पृह होकर सुन्दर हरिकथा सुना सकते ।। ७।।

हम उपदेशक बन सकते जब लोभादि विकारों को छोड़े ।
हम पा सकते सत्यानुराग जब असत् सुखों से मन मोड़े ।
यदि सर्व हितैषी होना है, ममता के सब नाते तोड़े ।
हम भक्ति सुलभ कर पायेंगे जब प्रीति एक प्रभु से जोड़े ।
पहले हम अपने को समझें फिर औरों को समझा सकते ।। ८।।

जीवन में सद्गति तब निश्चित जब लोभ काम वश रहें नहीं ।
सेवा के बदले में समाज से मान भोग कुछ चहें नहीं ।
जो कष्ट मिलें सब सह जायें, हिंसा अनीति को गहें नहीं ।
शम दम धीरज को धारण कर क्रोधाजित बन कटु कहें नहीं ।
हम दैवी सम्पद के द्वारा जीवन आदर्श बना सकते ।। ९।।

परमार्थ सिद्धि हम पा सकते जब स्वार्थ पूर्ति की चाह न हो ।
सेवा से आत्म शुद्धि होगी जब सुख दुख की परवाह न हो ।
प्रियतम से प्रीति मिला देगी जब अन्य किसी की राह न हो ।
हम भक्त मुक्त हो जायेंगे जब कहीं शिथिल उत्साह न हो ।
हम 'पथिक' प्रभु कृपा के बल पर ही परम लक्ष्य तक जा सकते ।। १०।।

---

**सन्त-वचन—साधक को अपने में प्राप्त ज्ञान से ही मुक्ति मिल सकती है, प्राप्त प्रेम से ही भक्ति सुलभ दीख सकती है और स्वयं के त्याग से ही शान्ति की अनुभूति हो सकती है। अन्य के ज्ञान का भोग हो सकता है मुक्ति नहीं मिलेगी। अन्य के प्रेम का भोग हो सकता है भक्ति नहीं हो सकती, अन्य के त्याग का भोग हो सकता है शान्ति नहीं मिल सकती जो परमात्मा को पाये बिना उसे पाने के लिये मिले हुए का त्याग करते हैं वही त्याग के अहंकारी बनते हैं।**

---

यह सद्‌गुरु दरबार है सबको मिलता प्यार है।
राजा रंक सुखी दु:खियों के लिये खुला ये द्वार है ।।

परमेश्वर का ज्ञान तत्व हम जहाँ प्रकाशित पाते हैं।
वहीं हमें गुरु कृपा दीखती भव बंधन कट जाते हैं।
मिटता अहंकार है आता सत्य विचार है।
अपने तन या चंचल मन पर हो जाता अधिकार है ।।

गुरुमुख मानव दोष मुक्त हो लघु से गुरु हो जाता है।
जो मनमुख है सुख के पथ में ही अगणित दु:ख पाता है।
मनमुख ही मझधार है, गुरुमुख ही भव पार है।
वही जान पाता जैसा कुछ, यह विचित्र संसार है ।।

गुरु के संगी निर्मोही निर्लोभी तत्व ज्ञानी हैं।
लघु के संगी तन धन के लोभी मोही अभिमानी हैं।
गुरु के संग विचार है, लघु के संग विकार है।
एक सभी को प्रिय होता है एक भूमि का भार है ।।

ज्ञान रूप गुरु की उपासना सारे दोष मिटाती है।
कहीं ज्ञान को नहीं भूलना उपासना कहलाती है।
उपासना ही सार है इससे ही उद्धार है।
'पथिक' गुरुकृपा से गुरुता का देख रहा विस्तार है ।।

---

**सन्त-वचन—गुरु विवेक के सहारे अहं को मेरापने के आकारों से मुक्त करो। जो ज्ञानस्वरूप गुरु की आज्ञा पालन करते हुये दोषों का नाश करता है तथा सद्गुणों का विकास करता है वही गुरु की उपासना है।**

---

यह मन चंचल चोर किस तरह बस कर पाऊँ।

घर बैठूँ या बन को जाऊँ, वस्त्र रंगूँ या खाक रमाऊँ।
हो सद्‌भाव विभोर किस तरह बस कर पाऊँ ।।

कौन जतन से बन्धन खोलूँ किस विधि ममता मल को धो लूँ।
चलत नहीं कुछ जोर, किस तरह बस कर पाऊँ ।।

दु:ख में रोऊँ सुख में गाऊँ, अहंकार के वेष बनाऊँ ।
लोभ रहा झकझोर किस तरह बस कर पाऊँ ।।

हमसे तो कुछ बनि नहिं आवै प्रभु तुम चाहो सब बनिजावै ।
लखो 'पथिक' की ओर किस तरह बस करि पाऊँ ।।

---

**सन्त-वचन—मन को न कहीं लगाओ न हटाओ उसे साक्षी होकर देखते रहो। वह जहाँ जाये जाने दो तुम नित्य प्राप्त आत्मा की चेतना में स्थिर रहो शान्त रहो, कोई प्रयत्न न करो, केवल देखते रहो, मन को अपना न मानो वह जिसका है उसी का जान कर असंग होकर दृष्टा बनो।**

---

यह सच है त्याग प्रेम को ही जीवन में पूर्ण बनाना है ।
इस राग द्वेष की सीमा को जैसे हो तोड़ मिटाना है ।।

जब तक हम रागी द्वेषी हैं इस जग से हुआ विराग नहीं ।
जब तक अन्तर में भेदभाव तब समतामय अनुराग नहीं ।
चिन्ता भय को आस्तिक जीवन में मिलता कोई भाग नहीं ।
जब तक कि अहंता ममता है तब तक हो पाया त्याग नहीं ।
अब आत्म निरीक्षण करके सब दोषों को दूर हटाना है ।।

अपना हित तभी हो सकेगा जब मान भोग की चाह न हो ।
सेवा से आत्म शुद्धि होगी जब सुख-दु:ख की परवाह न हो ।
तब सुलभ परमगति होगी जब वासना रोकती राह न हो ।
बाधाएँ हटती जायेंगी जब कहीं शिथिल उत्साह न हो ।
जो कुछ भी शक्ति प्राप्त हमको अब सदुपयोग में लाना है ।।

चाहते यही हम सब प्राणी आनन्द प्राप्त हो जीवन में ।
यद्यपि हम खोज रहे इसको विषयोपभोग वैभव धन में ।
थक कर फिर कभी झाँकते हैं गिरि गुहा सिन्धु तट में बन में ।
जब तक अपूर्णता दिखती है तब तक है चैन नहीं मन में ।
पूर्णता सत्य में रहती है हमने असत्य में माना है ।।

त्याग की पूर्णता में न रहेगा 'अहम्' और 'मम' का बन्धन ।
फिर असंगता ही हो जायेगी नित्य मुक्ति का शुचि साधन ।
प्रेम की पूर्णता होते ही सर्वमय मिलेंगे आनन्दघन ।
जब चित् चिन्मय हो जायेगा योगी होगा यह भोगी मन ।
है यही 'पथिक' का परमलक्ष्य-परमार्थ इसे ही पाना है ।।

---

**सन्त-वचन—यदि शक्ति बिखरी नहीं है वृत्ति शान्त है तो विचार से निर्विचार में शब्द से शून्य में होना ही सहज साधना है। चैतन्य सागर में विचार रूपी लहरों में तैरते रहने से सत्य नहीं सुलभ होता वह उसमें डूबने से ही मिलता है। सेवा की पूर्णता में त्याग पूर्ण होता है पूर्ण त्याग में ही प्रेम पूर्ण होता है।**

---

यह समय न सदा रहेगा ।।

परिवर्तनशील जगत् में कब तक तू किसे चहेगा ।।
जो पुण्य कर सके कर ले, सद्भावों से हिय भर ले ।
सद्गुरु का आश्रय धर ले, भवसागर से अब तर ले ।
यह कर न सका तो जीवन माया से विवश बहेगा ।।

यदि धन है तो दानी बन विद्या है तो ज्ञानी बन ।
परमेश्वर का ध्यानी बन अति सरल निरभिमानी बन ।
चिन्ता न करे तू इस की कोई क्या मुझे कहेगा ।।

अब सावधान हो जाना अपना अज्ञान मिटाना ।
अब आत्म ज्ञान में आना जो बिगड़ी उसे बनाना ।
अभिमान मोह वश प्राणी जग में अति दुःख सहेगा ।।

अब तक तू सोता क्यों है यह अवसर खोता क्यों है ।
अपराधी होता क्यों है भयवश तू रोता क्यों है ।
वह 'पथिक' अभय होगा जो सद्गुरु ज्ञान गहेगा ।।

**सन्त-वचन—देह छूटने के प्रथम ही शक्ति समय का दुरुपयोग नहीं करते हुये तृष्णा का त्याग कर दो, विनाशी से प्रीति हटा कर अविनाशी आत्मा में लगा दो आत्मा में ही शान्त तृप्त सन्तुष्ट रहो।**

यही विनय है कभी कहीं भी, प्रभो ! तुम्हें हम भूल न जायें ।
जीवन के इन प्रति द्वन्द्वों में, जीवनेश तुमको ही ध्यायें ।।

कितना ही हमको सुख-दु:ख हो, जो कुछ भी अपने सम्मुख हो ।
सभी दशा में निर्भय होकर, तुममें ही आनन्द मनायें ।।

सुनते हैं तुम दूर नहीं हो, तुम्हीं सर्वमय अभी यहीं हो ।
कहीं पाप हमसे न बने अब ऐसी गति-मति विमल बनायें ।।

अद्‌भुत अकथ तुम्हारी माया, इसने किसको नहीं नचाया ।
जिसमें सुर मुनिजन भी मोहे, हम अपनी क्या बात चलायें ।।

यहाँ न भक्ति प्रेम का बल है, साधन में मन अति चंचल है ।
'पथिक' तुम्हारी ही शरणागति, अब तो जैसे बने निभायें ।।

**सन्त-वचन—परम प्रभु के प्रीतिपूर्वक स्मरण से प्रपञ्च का विस्मरण हो जाता है। प्रपञ्च विस्मरण से ही निरन्तर स्मरण दृढ़ होता है। प्रभु की सतत दया के ज्ञान से स्मरण का ध्यान रहता है।**

राखहु अब प्रभु लाज हमारी ।।
हे परमेश्वर हृदय बिहारी ।।

मैं दरिद्र हूँ अति उदार तुम, हर लो हे हरि पाप भार तुम ।
इस भव दु:ख से पार करो तुम, अपकारी मैं तुम उपकारी ।।

मैं अशुद्ध हूँ परम शुद्ध तुम, मैं विमूढ़ हूँ महाबुद्ध तुम ।
मैं सकाम इसके विरुद्ध तुम, मुझे सुगति दो दुर्गतिहारी ।।

गुणाबद्ध मैं गुणातीत तुम, महामलिन मैं अति पुनीत तुम ।
फिर भी हो आद्यन्तमीत तुम, मैं विकार युत तुम अविकारी ।।

मैं निर्बल हूँ शक्तिमान तुम, महाक्षुद्र मैं हो महान तुम ।
मैं दु:खपीड़ित दयावान तुम, 'पथिक' पतित हूँ शरण तुम्हारी ।।

---

**सन्त-वचन—अपने को सब ओर से विमुख कर लेना निवृत्ति है। स्वीकृति ही प्रवृत्ति है। निवृत्ति आनन्दघन से अभिन्न करती है। प्रवृत्ति संसार की ओर ले जाती है।**

---

राम बिन कहीं नहीं विश्राम, यह माया की छाया झूठी ।
झूठा विभव तमाम, राम बिन कहीं नहीं विश्राम ।।

मात पिता पत्नी सुत भ्राता, यह सब देह रहे तक नाता ।
सदा न आवै काम, राम बिना कहीं नहीं विश्राम ।।

देखे सुने बड़े अभिमानी धनपति जनपति राजारानी ।
नश्वर हैं सब नाम, राम बिन कहीं नहीं विश्राम ।।

जो निज में सच्चिदानन्दघन, जिनके आश्रित अहं बुद्धि मन ।
उसे भजो निशियाम, राम बिन कहीं नहीं विश्राम ।।

परम प्रेममय नित्य निरञ्जन अन्तर्यामी भव भय भंजन ।
'पथिक' आत्माराम, राम बिन कहीं नहीं विश्राम ।।

---

**सन्त-वचन—सुखासक्त कामी राम से विमुख होकर संसार में ही आजीवन चक्कर लगाता रहता है। चक्राकार गति में कहीं पहुँचना नहीं होता, लेकिन पहुँचने का भ्रम उसे चलाता ही रहता है। चक्राकार गति में अपने से पीछे किसी को देखकर अहंकार गर्वित होता है और अपने से आगे किसी को देखकर हीनता की व्यथा से उत्तेजित होता है परन्तु जो संसार से कुछ नहीं चाहता वही नित्य सुलभ राम के सम्मुख होकर परम विश्राम पाता है।**

---

लिये चलो सत पथ में शक्तिमान लिये चलो ।
अध:पतित जीवन को हे महान लिये चलो ।।

हर लो हे ज्योतिर्मय मेरा अज्ञान तिमिर ।
जिससे शुभ गति मति हो चंचल चित हो सुस्थिर ।
देकर हे करुणामय दिव्य ज्ञान लिये चलो ।।

मिट जायें अन्तर के सब दुर्दमनीय दोष ।
प्रभु-प्रदत्त सद्‌गुण से हो मम निष्कलुष कोष ।
मिल जाये हमको भी प्रेम दान लिये चलो ।।

वह बल दो जिससे मैं तृष्णा को सकूँ त्याग ।
जग के नश्वर सुख में रह जाये कुछ न राग ।
उसी तरह जैसा कुछ हो विधान लिये चलो ।।

हे मेरे जीवनेश तुमसे ही है पुकार ।
अब तो जिस भाँति बने भवदु:ख से करो पार ।
'पथिक' पूर्व पापों पर दो न ध्यान लिये चलो ।।

---

**सन्त-वचन—प्राप्त शक्ति का सदुपयोग करो और शक्ति के दाता शक्तिमान को न भूलो। जो सब कुछ परमेश्वर का नहीं जानते वे ही अभिमानी होते हैं।**

---

वह जीवन मंगलमय है।

जो संयम सत् व्रतधारी सतसंगी पर उपकारी ।
जिसको है शुचिता प्यारी अति सात्विक सरल हृदय है ।।

घर में होंवें या वन में, हों स्वतन्त्र या बन्धन में ।
भगवान बसें जब मन में फिर जग में किसका भय है ।।

जो सत्य ध्यान में जागे विषयों को विषवत् त्यागे ।
माया ममता से भागे, उसकी सब कहीं विजय है ।।

निशिदिन गुणगान प्रभु का, हर रंग में ज्ञान प्रभु का ।
चहुँदिशि हैं ध्यान प्रभु का, जब 'पथिक' प्रभु में लय है ।।

**सन्त-वचन—सच्चा सेवक स्वयं ही प्रभु की कृपा का पात्र बन जाता है और गुरुजनों का आशीर्वाद उसे बिना माँगे ही मिल जाता है। जो जिसके काम आता है वही उसका प्रेमपात्र हो जाता है। दीन-दु:खी के काम आना दीनबन्धु प्रभु का प्रिय हो जाना है।**

वह जीवन क्या जिस जीवन में जीवन को पूर्ण बना सके ।
वह अज्ञानी अभिमानी है जो मन का मोह मिटा न सके ॥

कोई बल-मद में फूल रहे, ऊँचे पद पाकर झूल रहे ।
लेकिन वह शक्ति निरर्थक है, जो काम किसी के आ न सके ॥

जो भ्रमवश भोगासक्त बने, जो अपने मन के भक्त बने ।
विषयों से यदि न विरक्त बने, सतपथ में पैर बढ़ा न सके ॥

जिस संगति से सद्ज्ञान न हो, कर्तव्य धर्म का ध्यान न हो ।
हम उसे सुसंगति क्यों समझें, जो हमें प्रकाश दिखा न सके ॥

मिटती है जिससे भ्राँति नहीं, मिलती है जिससे शान्ति नहीं ।
ऐ 'पथिक' प्रेम का पथ वह क्या जो प्रियतम तक पहुँचा न सके ॥

**सन्त-वचन—प्रेम-पूर्वक जिसका जीवन दूसरों की पूर्ति के लिये है वही मानव-जीवन है। दोषों का ज्ञान और उन्हें मिटाने का प्रयत्न मानवी प्रकृति में होता है। मानव ही त्याग, ज्ञान और प्रेम को पूर्ण कर सकता है।**

वह प्रियतम जो अतिशय सुन्दर ॥

शान्ति सुशोभित छवि श्रीमुख की, चितवन में धाराएँ सुख की ।
परम तृप्ति कर सुघर सलोने, दोनों नयन नेह के निर्झर ॥

अन्तर में सौन्दर्य छलकता, रोम-रोम ऐश्वर्य झलकता ।
क्षमा, दया, करुणा, सुशीलता, सभी दिव्य गुण मानो अनुचर ॥

उसका सब भय खो जाता है, जीवन शीतल हो जाता है ।
जिस पर भी वह पड़ जाते हैं, प्रभु के कोमल उभय कमल कर ॥

सभी रूप में सभी नाम में, सभी देश में सभी धाम में ।
भक्तों की पुकार को सुनकर, देते रहते हैं अभीष्ट वर ।।

दीनबन्धु वे कहलाते हैं, उन्हें अकिञ्चन ही पाते हैं ।
मैं अब 'पथिक' शरण आया हूँ, मेरा भी मिट जाये दु:ख डर ।।

---

**सन्त-वचन—आस्था श्रद्धा, विश्वास के द्वारा ही प्रभु की प्राप्ति होती है। विश्वास उसी पर करो जो पूर्ण ही, नित्य समर्थ हो। प्रभु को अपना स्वीकार किये बिना अपनत्व भावना बिना प्रभु के प्रति प्रेम नहीं होता।**

---

वह प्रेम दो हमें प्रभो जिससे कि तुम्हें पायें ।
तज करके मोह-माया केवल तुम्हीं को ध्यायें ।।

जब-जब हमें दबायें यह भोग वासनायें ।
वह शक्ति दो कि जिससे अपने को हम बचायें ।।

ऐसी हो चाह सच्ची जो चैन न लेने दे ।
प्रियतम तुम्हें रह रहकर हम हृदय से बुलायें ।।

सबसे विरक्त होकर अनुरक्त हो तुम्हीं में ।
केवल सुनें तुम्हारी, अपनी तुम्हें सुनायें ।।

चिन्तन में तुम्हारे ही तल्लीन चित्त होकर ।
जब चुप न रह सकें तब तुमसे ही रोयें गायें ।।

जब तक हमें शरण में स्वीकार तुम न कर लो ।
हम 'पथिक' इसी धुन में अपना समय बितायें ।।

---

**सन्त-वचन—शरण ही निर्बल को बल, साधक को सिद्धि, प्रेमी को प्रेमपात्र, भक्त को भगवान, दु:खी को आनन्द, पतित को पवित्रता,**

**भोगी को योग, परतन्त्र को स्वतन्त्रता, बद्ध को मुक्ति भयातुर को अभय मर्त्य को अमरता प्रदान करती है।**

---

वही मानव शान्ति जग में पा रहे हैं ।
जो सतत गुरु ज्ञान को अपना रहे हैं ।।

भोग सुख का अन्त दु:ख है किन्तु फिर भी ।
जिसे देखो उधर ही ललचा रहे हैं ।।

देखते न वियोग को संयोग में जो ।
कभी रोयेंगे अभी जो गा रहे हैं ।।

जिन्हें जीवन में न दिखती मृत्यु निश्चित ।
वही जीवन व्यर्थ खोते आ रहे हैं ।।

जगत् दृश्य जिन्हें असत्य न दीखता है ।
वही बन्धन मोह व्याधि बढ़ा रहे हैं ।।

देह को ही रूप अपना मानते जो ।
वही जीव विनाश पथ में जा रहे हैं ।।

जो कि अपना सत्स्वरूप न जानते हैं ।
वही चिन्तित भयातुर घबरा रहे हैं ।।

जिस तरह से मुक्ति मिल सकती दु:खों से ।
'पथिक' को गुरुजन यही समझा रहे हैं ।।

---

**सन्त-वचन—जहाँ 'मैं' नहीं है वहीं शान्ति है, मोक्ष है, परमात्मा है, खुली आँखों वाला विवेक ही साधक को सत्य के समक्ष उपस्थित कर देता है।**

---

वहीं सुलभ भगवान होता ।।

किसी बहाने प्रीतिपूर्वक जब उसका आह्वान होता ।।

जिसकी जग में रही न आशा भक्ति योग की ही अभिलाषा ।
प्रेम भाव से जब उसका ही निशिदिन चिन्तन ध्यान होता ।।

जिसमें सुन्दर भाव तरलता, सहिष्णुता सन्तोष सरलता ।
दया क्षमा करुणा से रंजित जहाँ स्वतन्त्र विधान होता ।।

सदा अतिथि सत्कार जहाँ है सबके प्रति शुचि प्यार जहाँ है ।
जहाँ सर्वहितकर प्रवृत्ति में भी निवृत्ति का भान होता ।।

जिसका है सेवामय जीवन भोग सुखों से अति विरक्त मन ।
जिसकी संगति से मानव का निश्चित अभ्युत्थान होता ।।

जहाँ विरह में आँसू बरसें, व्याकुल हृदय दरश को तरसे ।
जब वियोग में भी स्वरूप से अभिन्नता का ज्ञान होता ।।

जो अपना कुछ भी न मानता, सब दाता का दिया जानता ।
जिसकी सम्पत्ति का दु:खियों की सेवा में ही दान होता ।।

अग्नि तत्व सर्वत्र व्याप्त है, घर्षण बिन होता न प्राप्त है ।
इसी भाँति उस व्यापक हरि का जहाँ सतत गुणगान होता ।।

तन धन में न जहाँ ममता है स्वार्थ रहित जिसमें समता है ।
'पथिक' शान्ति पद वह पाता है जिसका लक्ष्य महान् होता ।।

---

**सन्त-वचन—विचार वासना संकल्प अहंकार जहाँ नहीं है वहीं परमात्मा का योगानुभव होता है। खोज छोड़ते ही 'मैं' को खोते ही उसे पा लिया जाता है। जहाँ दूसरा कोई नहीं रहता वहीं सच्चिदानन्द विद्यमान है। अपने को अस्वीकार किये बिना ईश्वर की स्वीकृति असम्भव है। 'मैं' नहीं हूँ केवल प्रभु ही हैं वही प्रभुमय है**

---

व्यर्थ जीवन न जाये सजग रहना ।।

जहाँ तक हो सके तुम पुण्य दान करते रहो ।
गुमान छोड़कर गुणियों का मान करते रहो ।
प्रेम के नेम से ईश्वर का ध्यान करते रहो ।
उनकी लीलाओं का सविवेक गान करते रहो ।
मन को प्रभु में लगाये सजग रहना ।।

पूरी होगी अवश्य जो कि चाह सच्ची है ।
खाली जायेगी नहीं जो कि आह सच्ची है ।
सच्चे प्रेमी बनो बस यह सलाह सच्ची है ।
समझ लो अपने लिये कौन राह सच्ची है ।
भूल होने न पाये सजग रहना ।।

फिसल जाना न कभी सुखों के प्रलोभन में ।
त्याग दो उसको जो दुर्वासना भरी मन में ।
देखो भगवान् को सब प्राणियों में जन जन में ।
कहीं आसक्त न होना यहाँ वैभव धन में ।
भाव डिगने न पाये सजग रहना ।।

सदा सम रह के यह संसार देखते जाना ।
प्यार हो या कि तिरस्कार देखते जाना ।
झूठ है जगत् का व्यौहार देखते जाना ।
अपना जैसे भी हो उद्धार देखते जाना ।
'पथिक' जो कुछ भी आये सजग रहना ।।

---

**सन्त-वचन—असावधानी से अनेक दोष बनते हैं। साधक को व्यर्थ वचन, व्यर्थ श्रवण, व्यर्थ दर्शन, व्यर्थ भ्रमण तथा व्यर्थचिंतन से बचने के लिये सावधान रहना चाहिये।**

---

विश्वनाथाय परमात्मने ते मनः ।
शान्तिमूलाय विश्वात्मने ते नमः ।।

कुछ भी दुनियाँ के करुँ काम यही कहते हुये ।
मिटे दुर्वासना तमाम यही कहते हुये ।
बीतें दिन-रात सुबह-शाम यही कहते हुये ।
जिधर देखूँ करूँ प्रणाम यही कहते हुये ।।
विश्वनाथाय परमात्मने ते नमः ।
शान्तिमूलाय विश्वात्मने ते नमः ।।

हर एक नाम में हर रूप में हो ध्यान यही ।
मिटा देता है जो अज्ञान है वो ज्ञान यही ।
यही पूजा स्वधर्म और व्रत विधान यही ।
मन से वाणी से सदा होता रहे गान यही ।।

विश्वनाथ परमात्मने ते नमः ।
शान्तिमूलाय विश्वात्मने ते नमः ।।

यही मेरा सदा आधार इसी में आनन्द ।
भूल जायें सभी संसार इसी में आनन्द ।
रहूँ इस पार या उस पार इसी में आनन्द ।
रहे यह ध्यान लगातार इसी में आनन्द ।।

विश्वनाथ परमात्मने ते नमः ।
शान्तिमूलाय विश्वात्मने ते नमः ।।

कहीं तो रामरूप में तुम्हीं परमेश्वर हो ।
किसी को कृष्णरूप में तुम्हीं जगदीश्वर हो ।
तुम्हीं सर्वेश हो रमेश हो महेश्वर हो ।
सभी भावों में तुम्हीं 'पथिक' जीवनेश्वर हो ।।

विश्वनाथाय परमात्मने ते नमः ।
शान्तिमूलाय विश्वात्मने ते नमः ।।

---

**सन्त-वचन—किसी का ध्यान न करो इससे परमात्मा का ध्यान स्वतः शेष रह जायेगा। मन के निःसंकल्प होने पर ध्यान दृढ़ होता है। हम अहं को नहीं भूलते और अहं के भीतर जो सत्य है उसे भूले रहते हैं।**

---

वे वीर विवेकी मानव हैं, जो मोह नींद से जाग सके ।
उनके ही दुःख मिटेंगे जो निजकृत दोषों को त्याग सके ।।

वे श्रमी संयमी होते हैं, बे शुभकर्मी सद्गति पाते ।
जो शक्ति समय का सदुपयोग कर, भोग भूमि से भाग सके ।।

बेचैन बनाती जो सबको, वह चिन्ता, उनकी मिट जाती ।
जिनका चित चाह मुक्त होकर, हरि के चिन्तन में लाग सके ।।

है साधक का पुरुषार्थ यही, सारी दुर्बलतायें तज दे ।
कामना रहित होकर जो अपना हृदय प्रीति से पाग सके ।।

सबका दाता जगदीश्वर है, पूरी होती सबके मन की ।
तू 'पथिक' भिखारी ऐसा बन, प्रभु से प्रभु को ही माँग सके ।।

---

**सन्त-वचन—जिसमें दोषों के त्याग का साहस है वही वीर पुरुष स्वतन्त्रता प्राप्त करता है। वासना अहंता से भरा चित्त वाह्य त्याग से शान्ति न पायेगा। त्याग की चाह भी भोगी अहंकार में होती है। चित्त का त्याग ही त्याग है।**

---

सकल भुवन के गान तुम्हीं हो ।।
सर्वाधार महान् तुम्हीं हो ।।

तुम नास्तिक की प्रकृति शक्ति में, आस्तिक की श्रद्धेय अस्ति में ।
ज्ञानी की तत्वानुरक्ति में, आदि मध्य अवसान तुम्हीं हो ।।

सर्व रूप में सर्वनाम में, सर्व काल में सर्व धाम में ।
तुम ही गति में तुम विराम में, शक्तिमान भगवान तुम्ही हो ।।

तुममें दनुज देवगण तुम में, तुम में पर्वत हैं तृण तुममें ।
तुममें कल्प और क्षण तुममें, सबके परमस्थान तुम्हीं हो ।।

मानव में सतधर्म तुम्हीं से, कर्म विकर्म अकर्म तुम्हीं से ।
मिले गुह्यतम मर्म तुम्हीं से, सबको देते ज्ञान तुम्हीं हो ।।

तुम अमान के मानी के भी, ज्ञानी के अज्ञानी के भी ।
तुम दरिद्र के दानी के भी, आश्रय एक समान तुम्हीं हो ।।

तुममें जीवन मरण तुम्हीं में, सबका है निस्तरण तुम्हीं में ।
'पथिक' पा रहा शरण तुम्हीं में, करते शान्ति प्रदान तुम्हीं हो ।।

**सन्त-वचन—नित्य आत्मा में जो अर्पित है वही आस्तिक है। आस्तिक के जीवन में भय-चिन्ता को कहीं स्थान नहीं मिलता।**

सबकी तुम्हीं सुध लो प्रभु ।।

सुनता हूँ प्रकट होते दु:ख भरी पुकार में तुम ।
देखे गये हो दलितों दीनों के द्वार में तुम ।
हो रीझते भक्तों के भावोद्‌गार में तुम ।
मिलते हो हर किसी को निष्काम प्यार में तुम ।
मेरे लिये भी अब तो कुछ साधना बल दो प्रभु ।। सबकी।। १।।

कोई तुम्हें गुण रहित निराकार जानते हैं ।
कोई तुम्हें ऐश्वर्यमय साकार जानते हैं ।
कोई तुम्हें सत्तामय आधार मानते हैं ।
तुममें ही अखिल विश्व का विस्तार जानते हैं ।
कुछ खोज लगाते हैं कि तुम कैसे हो क्या हो प्रभु ।। सबकी।। २।।

भावानुसार भक्त को भगवान तुम्हीं दिखते ।
विद्वान को सर्वत्र विद्यमान तुम्हीं दिखते ।
प्रेमी हृदय को क्षुद्र में महान तुम्हीं दिखते ।
प्रज्ञा में प्रकाशित केवल ज्ञान तुम्हीं दिखते ।
अनजान में या जान में सब चाहते तुमको प्रभु ।। सबकी।। ३।।

मुझ को भी वह बल दो जिससे हो सकूँ अभय अब ।
निर्दोष होके पाऊँ आनन्द निरतिशय अब ।
मैं अपने रूप में तुम्हें ही देखूँ सर्वमय अब ।
जैसे भी हो कृपा कर मेरी सुनो विनय अब ।
मुझ 'पथिक' का पतन नहीं तुम चाहते हो जो प्रभु ।। सबकी।। ४।।

**सन्त-वचन—जो प्रभु का प्रेम वस्तु व्यक्तिमय बन गया है उसे समेट कर प्रभु की ओर मोड़ते ही वह प्रभुमय दीखने लगेगा । जो परमात्मा**

**के लिये उपस्थित है उसी के प्रति परमात्मा वहीं उपस्थित है प्रेम के लिये आसक्ति ममता अहंता छोड़नी पड़ती है।**

---

सब के लिये खुला जो यह द्वार ही ऐसा है ।
कोई भी चला आये दरबार ही ऐसा है ।।

सबसे निराश होकर मिलता यहीं ठिकाना ।
पर सब नहीं समझेंगे संसार ही ऐसा है ।।

दोनों यहाँ कठिन है, रुकना या चले जाना ।
कुछ मार ही ऐसी है कुछ प्यार ही ऐसा है ।।

भावानुसार अपने भगवान भी बन जाते ।
जैसे के लिये तैसा व्यवहार ही ऐसा है ।।

जिसके बिना जीवन में सत्-शान्ति नहीं मिलती ।
दिखता यहाँ जीवन का आधार ही ऐसा है ।।

छुट जाते जहाँ बन्धन, भव दुःख भी मिट जाते ।
होता यहाँ 'पथिक' का उपचार ही ऐसा है ।।

---

**सन्त-वचन—जिसे सभी वस्तुयें अनुकूल और पवित्र, सब घटनायें लाभकारी, सब दिन शुभ, सभी मनुष्य देवरूप दिखाई दें वही कवि तत्वदर्शी सन्त है।**

---

सच्चिदानन्द सबके प्रियतम अब पता लगा तुम दूर नहीं ।
ऐसा कुछ हो ही नहीं सकता जिसमें तुम हो भरपूर नहीं ।।

यह होश दिया तुमने ही तो जब अहंकार को पहचाना ।
तुम वहीं प्रकट होते रहते, रहता है जहाँ गरूर नहीं ।।

जो कुछ भी सामने आता है मैं देख देख यह गाता हूँ ।
किस क्षण में शक्ति नहीं तुमसे किस कण में तुम्हारा नूर नहीं ।।

ये आखें तुम को क्या देखें सब आखें तुम से रोशन है ।
खोज में भटकते वे जिनको दर्शन का अभी शहूर नहीं ।।

मुझको तो अपनी किस्मत के उठने गिरने की समझ नहीं ।
जो ठीक वही तुम करते हो, मुख्तार हो तुम मजबूर नहीं ।।

जब जब हम हैं तब तुम गुम हो, हम गले कि बस तुम ही तुम हो ।
सब ओर तुम्हीं, तब 'पथिक' और कुछ चाहे यह दस्तूर नहीं ।।

---

**सन्त-वचन—जो खोजता है तथा जिसे खोजता है, दोनो एक ही हैं। वह खोजने वाले में पहले ही विद्यमान है। जब साधक को अपने में ही सत्य का अनुभव हो जाता है तब परमात्मा से भेद भिन्नता व दूरी मिट जाती है।**

---

सज्जनों उधर दुख सुख में रोने गाने वालों को देखो ।
दु:ख सुख से रहित नित्य आनन्द मनाने वालों को देखो ।।

जिसकी प्रतीति तो होती पर प्राप्त नहीं होता कुछ भी ।
उस अनित्य सुख में अपना चित्त फँसाने वालों को देखो ।।

जिस वस्तु व्यक्ति से मिल करके यह कहते हैं ये मेरी है ।
इस ममता का फल दुख है अश्रु बहाने वालों को देखो ।।

जो अपने से है भिन्न नहीं जिसमें जड़ता का दोष नहीं ।
उसको ही दूर मान कर खोज लगाने वालों को देखो ।।

जब तक वैभव-धन-मान-भोग के रस का मन रागी रहता ।
तब तक जैसी गति होती वेष बनाने वालों को देखो ।।

चरचा चलती है सत् की पर जब रमण असत् में होता है ।
सतसंग रहित उन सतसंगी कहलाने वालों को देखो ।।

देखते हुए उसको जानो जिसकी सत्ता में देख रहे ।
तुम 'पथिक' सजग हो मुक्ति भक्ति के पाने वालों को देखो ।।

**सन्त-वचन—तुम्हें आनन्द प्राप्त करना है अतः सदा आनन्द स्वरूप का चिन्तन करो। तुम्हें प्रेमी होना है इसलिये प्रेमस्वरूप का ही मनन करो।**

सज्जनों परमेश्वर का सुमिरन बारम्बार करलो ।।
कभी कुछ बिगड़ा है तो उसका अभी सुधार कर लो ।।

जिसे तुम अपना कहते उसके साथ सदा न रहोगे ।
जहाँ सुख मान रहे हो वहीं अन्त में दुख सहोगे ।
अभी अवसर है, यदि सत्संगति से गुरु ज्ञान गहोगे ।
मुक्ति मिल जायेगी, जब इस जग में तुम कुछ न चहोगे ।
मृत्यु आने के पहले जीवन का उद्धार कर लो ।।

बचाओगे जो कुछ वह तुमसे छिन जायेगा ही ।
जिसने जो कुछ दे रक्खा वह जीवन में पायेगा ही ।
अरे चिन्ता छोड़ो जो भाग्य लिखा वह आयेगा ही ।
कहीं सुख के पीछे यदि होगा पाप रुलायेगा ही ।
सदा कुछ भी न रहेगा कितना ही विस्तार कर लो ।।

अनेकों पछताते हैं जीवन के अच्छे दिन खो कर ।
अनेकों भोग रहे हैं दुष्कर्मों का फल रो रोकर ।
अनेकों पशुवत जीते हैं औरों का बोझा ढोकर ।
कहीं विरले ही मानव, जो रहते स्वाधीन होकर ।
तुम्हें जो कुछ भी करना है वह अभी विचार कर लो ।।

भक्त होना है तो प्रभु को ही अपना मान लेना ।
मोह ममता तजकर बस सेवा का व्रत ठान लेना ।
त्याग करना है, सारे दोषों को पहिचान लेना ।
असत से असंग होकर सत्स्वरूप को जान लेना ।
'पथिक' अपने में ही निज प्रियतम को स्वीकार कर लो ।।

**सन्त-वचन—स्वयं को जानना नित्य प्राप्त परमात्मा से निरन्तर योग का अनुभव करना, दोषों का त्याग करना, कर्तव्य का पालन करना, वर्तमान में ही सकता है। जो कुछ दीख रहा है वह मायिक दृश्य है। जिस ज्ञान में दीख रहा है वही सत्य है। स्वयं में ही प्रतिष्ठित परमात्मा की उपासना करो।**

सत् रूप प्रभो अपना अब तो मुझे दिखाना ।
अज्ञान तिमिर मेरा, हे दयामय मिटाना ।।

हम कह रहे तुम्हीं से दुख हरण नाम सुनकर ।
परमेश न तुम बिन है मेरा कहीं ठिकाना ।।

तुम दूर नहीं मुझसे, सब देख ही रहे हो ।
जैसा हूँ अब शरण हूँ जैसे बने निभाना ।।

अपने बनाये बंधन मैं तोड़ नहीं पाता ।
निज बुद्धि योग देकर भव पाश से छुड़ाना ।।

इस दृश्य जगत् में अब फिर फिर न भूल जाँऊ ।
हे परमगुरु 'पथिक' को सत्यानुभव कराना ।।

**सन्त-वचन—जो अहंकार पूर्वक तुम बनाओगे वह शाश्वत सत्य स्थायी हो ही नहीं सकता। जिसकी सत्ता से और जिस आश्रय में कुछ बनाते हो वही सत्य है। जब तक तुम स्वयं को नहीं जानते तब तक परमात्मा की खोज काल्पनिक होगी। जहाँ मन बुद्धि मौन होंगे विचार शान्त होंगे वहीं नित्य प्राप्त सत्य आत्मा परमात्मा की अनुभूति होगी।**

सत्य धर्म वीरों का पथ है इसमें दुर्बल आ न सकेंगे ।
जब तक वे न जितेन्द्रिय होंगे तब तक सद्गति पा न सकेंगे ।।

दिखते लाखों नर आकृति में असुर प्रकृति के अति अभिमानी ।
सुख लोलुप शोषक उत्पीड़क सत्यविमुख भौतिक विज्ञानी ।
मानवता का घोर अनादर करते हैं निज सुख के ध्यानी ।

सर्व भूत-हित में जो रत हों दुर्लभ ऐसे प्रेमी दानी।
वे सब के ढिंग आते रहते सब उनके ढिंग जा न सकेंगे ॥ १॥

जब अतिशय ही पुण्य प्रबल हो तब लगती सत्संगतिप्यारी ।
फिर भी यदि श्रद्धा न प्रबल हो बाधक बनते संशय भारी ।
बड़े भाग्य से संत पुरुष जब कोई हो आज्ञाकारी ।
वह मानव सद्भावपूर्वक बन जाता है पर उपकारी ।
हितप्रद सेवा के बिन कोई अपने पाप मिटा न सकेंगे ॥ २॥

सद्विवेक से रहित पुरुष की सुत कलत्र के प्रति रति होती ।
असतसंग देहाभिमान वश सत् स्वरूप की विस्मृति होती ।
जहाँ शक्ति का दुरुपयोग है जीवन में अति अवनति होती ।
धर्म-ग्लानि कर्तव्य हीनता, संचित पुण्यों की क्षति होती ।
यह अज्ञान मोह सद्गुरु बिन कोई और हटा न सकेंगे ॥ ३॥

जिस साधक में धैर्य नम्रता सहिष्णुता यह दै देवी धन है ।
उसका ही साधन के द्वारा उठता अध: पतित जीवन है ।
तप संयम करना ही होता जब भोगों में चंचल मन है ।
व्रत हठ भी बनता आवश्यक जब विषयों का प्रबल व्यसन है ।
'पथिक' त्याग बिन शान्ति द्वार में रागी पैर बढ़ा न सकेंगे ॥ ४॥

---

**सन्त-वचन—व्यक्तित्व से स्वरूप तक पहुँचने का मार्ग ही धर्म हैं। अहंकार के शून्य होने पर स्वरूप का बोध होता है जिससे सद्गुणों का विकास हो वह धर्म पथ है। जीव का धर्म है साधना, परमेश्वर का धर्म है कृपा, सारे दोषों का जन्म जाने हुए को न मानने से होता है। जहाँ तक शुभ सुन्दर का ज्ञान है उसे स्वीकार न करना और जिस अशुभ असुन्दर का ज्ञान है उसे त्याग न करना भारी अपराध है।**

---

सत्य नाम सद्गुरु से पाया ओम् ओम् ओम् ।
सब मन्त्रों का प्राण ओम् है, अक्षर अवधान ओम् ।
यही प्रणव वेदों ने गाया ओम् ओम् ओम् ॥

ब्रह्मा विष्णु महेश ओम् में स्वर्ग भुवर भूदेश ओम् में ।
स्वर निनाद में यही सुनाया, ओम् ओम् ओम् ।
कारण सूक्ष्म स्थूल, ओम् में, अन्त मध्य अरु मूल ओम् में ।
इसमें ब्रह्म इसी में माया, ओम् ओम् ओम् ।।

परम तत्व का ज्ञान ओम् में ब्रह्मशक्ति का ध्यान ओम् में ।
ओम्कारमय विश्व दिखाया, ओम् ओम् ।
ओम् सच्चिदानन्दधाम है, भक्तिद मुक्तिद पूर्णकाम है ।
'पथिक' हृदय में यही समाया ओम् ओम् ओम् ।।

---

**सन्त-वचन—आत्मा में अनन्त शक्ति सामर्थ्य एवं अनन्त ज्ञान है। बुद्धियोग द्वारा जागृति होती है। परमात्मा के स्मरण करते रहने से व्यर्थ चिन्तन के त्याग से बुद्धि योग प्राप्त होता है। संसार में त्रिशक्ति है जो त्रिपुटी है, जो त्रिगुण हैं वह सब ओम् में ही हैं। ओम् का ध्यान करने वाला त्रिगुणमय जगत् को पार कर शून्य में शान्त रह कर परम तत्व का बोध प्राप्त करता है। अधिकारी ही ओम् का ध्यान कर सकते हैं।**

---

सद्गुरु एक तुम्हीं आधार ।।
जब तक तुम न मिलो जीवन में, शान्ति कहाँ मिल सकती मन में ।
खोज फिरे संसार ।।
जब दुख पाते अटक अटक कर, सब आते हैं भूल भटक कर ।
एक तुम्हारे द्वार ।।
जीव जगत् में सब कुछ खोकर, बस बच सका तुम्हारा होकर ।
हे मेरे सरकार ।।
कितना भी हो तैरनहारा, लिया न जब तक शरण सहारा ।
हो न सका वह पार ।।
हे प्रभु तुम्हीं विविध रूपों से, सदा बचाते भव कूपों से ।
ऐसे परम उदार ।।
हम आये हैं शरण तुम्हारी, अब उद्धार करो दुखहारी ।
सुन लो पथिक पुकार ।।
सद्गुरु एक तुम्हीं आधार ।।

**सन्त-वचन—आवश्यकता होने पर सच्ची चाह और सुनने से बनावटी चाह होती है। भोग-सुखों की चाह ही योग सिद्धि की ओर नहीं बढ़ने देती। मननशील मानव को यह समझ लेना चाहिये कि वह जिसका आधार लेकर जी रहा है, सुखी हो रहा है वह विनाशी, स्वतन्त्र, परतंत्र, शक्ति सम्पन्न या दुर्बल है—गुरुतत्व अविनाशी है देह विनाशी है।**

---

सदा जो सुसंगति में आते रहेंगे, विवेकी स्वयं को बनाते रहेंगे ।
मिलेगी नहीं शान्ति उनको कहीं भी, जो परमात्मा को भुलाते रहेंगे ।
बनेंगे कभी मुक्त जीवन में वे ही, जो चाहों को अपनी घटाते रहेंगे ।
सुखी होंगे जो किसी को दु:ख देकर, वही अन्त में दुख उठाते रहेंगे ।।
उन्हें ही वह सुख सिन्धु स्वामी मिलेंगे, जो दुखियों को सुख पहुँचाते रहेंगे ।
उन्हीं की बनी और बनती रहेंगी, जो बिगड़ी किसी की बनाते रहेंगे ।
जो जितना अधिक दान कर लेंगे जग में, वह पुण्यों की पूँजी बढ़ाते रहेंगे ।
न देगे किसी को जो शुभ और सुन्दर, कभी बैठे माखी उड़ाते रहेंगे ।
जो कुछ दीखता है रहेगा न सब दिन, कहाँ तक यहाँ मन फंसाते रहेंगे ।
'पथिक' अपने में अपने प्रियतम को पाकर, महोत्सव निरन्तर मनाते रहेंगे ।।

---

**सन्त-वचन—मन्दिर एवं मूर्ति में भगवान की प्रतिष्ठा करने वालों की अपेक्षा वे प्रेमी विवेक युक्त हैं जो स्वयं में ही और प्राणी के देह रूपी मन्दिर में ही परम प्रेमास्पद प्रभु को प्रतिष्ठित देखते हैं। जो प्रेम को प्राप्त होता है वहीं स्वयं में परमात्मा को प्राप्त अनुभव करता है। परमात्मा की खोज प्रेम के अभाव में ही चलती रहती है।**

---

सदा प्रेम में आते प्रभु तुम, सब कुछ देते जाते प्रभु तुम ।

तुम ही परम सुहृद सुखकारी, सबके प्रिय तुम हृदय बिहारी ।
बिगड़ी दशा बनाते प्रभु तुम, सदा प्रेम में आते प्रभु तुम ।।

निर्विकार तुम शान्तिधाम हो, भक्तिद मुक्तिद पूर्णकाम हो ।
संशय शोक मिटाते प्रभु तुम, सदा प्रेम में आते प्रभु तुम ।।

तुम ही गुणमय गुणातीत तुम, पतित उधारक अति पुनीत तुम ।
अन्तर तिमिर हटाते प्रभु तुम, सदा प्रेम में आते प्रभु तुम ।।

तुम अनित्य में नित्य प्रकाशित, तुममें सारा जड़जग भासित ।
सोये 'पथिक' जगाते प्रभु तुम, सदा प्रेम में आते प्रभु तुम ।।

---

**सन्त-वचन—परम प्रेमास्पद वही है जो नित्य निरंतर अपने साथ है जो सदा देता ही रहता है, वह स्वयं ही अपना प्रेम प्राणियों को देता है और उसी अपने प्रेम को अपने प्रति पाकर प्रसन्न हो जाता है।**

---

सदा सत्य को ही बिलोते रहो तुम ।
हृदय को विकारों से धोते रहो तुम ।।
बड़े से बड़ा अब यही काम करना ।
चपल मन को स्वाधीन रख कर विचरना ।।
दु:खों से न डरना अटल धैर्य धरना ।
कहीं भी नहीं पाप पथ मैं उतरना ।।
परम पुण्य के बीज बोते रहो तुम ।। १।।

कहीं तुच्छ अभिमान आने न पाये ।
असत् दृष्य सत् से डिगाने न पाये ।
ये सुख दु:ख मन को भुलाने न पाये ।
समय-शक्ति कुछ व्यर्थ जाने न पाये ।
बहुत खो चुके अब न खोते रहो तुम ।। २।।

उठो शीघ्र ममता से मुँह मोड़ करके ।
बढ़ो कामना जाल को तोड़ करके ।
जो कुछ मन से पकड़ा उसे छोड़ कर के ।
जियो एक हरि से लगन जोड़ कर के ।
प्रलोभन से उपराम होते रहो तुम ।। ३।।

मिले मुक्ति जिससे वही ज्ञान उत्तम ।
बढ़े दैवी सम्पति वही दान उत्तम ।
मिले प्रेम धारा वह गुण गान उत्तम ।
मिलें नित्य प्रियतम वही ध्यान उत्तम ।
'पथिक' स्वयं में शान्त होते रहो तुम ।। ४।।

**सन्त-वचन—बुद्धि योग द्वारा मन्थन करो, मन के संयोग में घर्षण न करो। मन्थन से नवनीत रूपी सार निकलता है। घर्षण से सन्ताप उत्पन्न होता है।**

सभी कुछ प्रभु देते जाते आप हैं, अकथ है जो कुछ दिखाते आप हैं।
देखता हूँ किस तरह कितनी कठिन, मुश्किलों से भी बचाते आप हैं।
जहाँ पर भी हमें गिरते देखते, वहीं से ऊँचे उठाते आप हैं।
मोह ममता में फँसे इस जीव को, जिस तरह भी हो छुड़ाते आप हैं।
डूबते देखा जहाँ दुख सिन्धु में, किनारे आकर लगाते आप हैं।
जहाँ मेरे लिये जो भी उचित है, युक्तियाँ सारी दिखाते आप हैं।
जानता हूँ मैं 'पथिक' कितना पतित, उसे भी पावन बनाते आप हैं।

**सन्त-वचन—प्रेम तभी पूर्ण होता है जब कुछ चाह नहीं रहती चाह कामना तभी नहीं रहती जब आत्मीयता पूर्ण होती है। ज्ञान स्वरूप से प्रीति करना मोक्ष का सुगम साधन है। प्रकृति क्षण-क्षण परम प्रभु का संदेश दे रही है। प्रेम में होकर ही परम प्रभु को प्राप्त अनुभव करोगे। प्रेम के लिये आसक्ति अहंकार का त्याग करना पड़ता है।**

सभी संत गुरुजन जो कुछ कह रहे हैं,
वह चर्चा भुलाने के काबिल नहीं है।
बड़े भाग्य से मानव जीवन मिला है,
निरर्थक बिताने के काबिल नहीं है।

जो है साधु सन्तों का निन्दक विरोधी,
है जिसमें कुमति बुद्धि पशुवत अबोधी।
सदा लोभ से ग्रस्त अत्यन्त क्रोधी,
वह संगति में लाने के काबिल नहीं है।

जो हो आलसी दुर्व्यसनी विलासी,
जहाँ इन्द्रियों की बनी बुद्धि दासी ।
भले घूम आया हो मथुरा या काशी,
वो घर में बुलाने के काबिल नहीं है ।

धनी हो के भी जो नहीं दान देता,
जो निज गुरुजनों को नहीं मान देता ।
जो सेवा भजन में नहीं ध्यान देता,
वह सम्मान पाने के काबिल नहीं है ।

जिसे देख हम धर्म को भूल जायें,
जिसे पाके अभिमान में फूल जायें ।
जिधर चल के हम प्रभु के प्रतिकूल जायें,
'पथिक' उधर जाने के काबिल नहीं है ।

---

**सन्त-वचन—मन में भरी वासना ही गुरोपासना में बाधक रहा करती है। बुद्धि की जड़ता तथा मूर्खता, मूढ़ता के कारण यथार्थ बात, हर व्यक्ति समझाने पर भी नहीं समझ पाता। ऐसे लोगों से कुछ शुभकर्म बनें और भगवद्नाम जप अथवा कीर्तन से कुछ भावना पवित्र हो इसलिये सन्त महात्मा कुछ करते रहने को बता देते हैं।**

---

सभी सन्त गुरुजन जो समझा रहे हैं ।
यह चर्चा भुलाना महा मूढ़ता है ।
बड़े भाग्य से ऐसा अवसर मिला है ।
निरर्थक बिताना महा मूढ़ता है ।।

समझ लो यह परिवार कब तक रहेगा ।
किसी का सुखद प्यार कब तक रहेगा ।
जो माना है अधिकार कब तक रहेगा ।
नहीं समझ पाना महा मूढ़ता है ।।

बहुत शीघ्र ही अपना उद्धार कर लो ।
जो कुछ कर सको पर उपकार कर लो ।
यह अज्ञान की सीमा पार कर लो ।
देरी लगाना महा मूढ़ता है ।।

जहाँ रह रहे हो, निकलना पड़ेगा ।
नहीं चाहने पर भी चलना पड़ेगा ।
जिसे खोके फिर हाथ मलना पड़ेगा ।
वहाँ मन फँसाना महामूढ़ता है ।।

सदा शान्ति रहती समता के पीछे ।
समता न आती विषमता के पीछे ।
विषमता रहा करती ममता के पीछे ।
ममता बढ़ाना महा मूढ़ता है ।।

कहीं मुग्ध होकर के तन में न अटको ।
अचल मैं रहो चपल मन में न अटको ।
'पथिक' अटक जाना महा मूढ़ता है ।।

---

**सन्त-वचन—जो कुछ असत्य है दुखद अशान्तिकर है उसे भूलना सीखो। वियोग अपमान हानि को भी भूलना सीखो। वर्तमान का सदुपयोग करो। मनुष्य में सामर्थ्य बुद्धि से नहीं बल्कि अभ्यास से आती है।**

---

## प्रार्थना

सर्व विघ्ननाशक भगवान, कृपा करो हे कृपा निधान ।
मेरी क्षुद्र वासना क्षय हो, मेरा चित्त तुम्हीं में लय हो ।
मुझ में कुछ न रहे अभिमान, कृपा करो हे कृपानिधान ।।

नाथ तुम्हारी शरणागत हम, निभा सकें अपने सत् व्रत हम ।
हो जाये मेरा कल्याण, कृपा करो हे कृपानिधान ।।

कहीं न अब प्रभु दीन रहें हम स्वतन्त्र सत्याधीन रहें हम ।
दे दो बुद्धियोग सद्ज्ञान, कृपा करो हे कृपानिधान ।।

मेरे नाथ शक्तिदाता तुम, अपनी विनय भक्ति दाता तुम ।
तुम पावन मैं पतित महान, कृपा करो हे कृपानिधान ।।

किसी भाँति तुम को पा जायें, मिट जायें पथ की बाधायें ।
यही 'पथिक' का सविनय गान, कृपा करो हे कृपानिधान ।।

**सन्त-वचन—प्रार्थना असीम अनन्त सत्य से सम्बन्धित करती है। प्रार्थना अपनी अयोग्यता और दुर्बलता की स्वीकृति पर होती है। जब अनिवार्य संकट उपस्थित हो और कष्ट असह्य हो तब प्रार्थना करना चाहिए। विद्यार्थी,धनार्थी, भोगार्थी और परमार्थी की प्रार्थना भिन्न-भिन्न हैं।**

स्वामी श्री सद्‌गुरु भगवान

तुम शरणागत के प्रतिपालक, अनुपम दया निधान ।।

तुम समर्थ सर्वज्ञ सरल चित, प्रेमनिधे अविकारी ।
तुम अज्ञान-तिमिर के नाशक, दीनबन्धु दुखहारी ।
तुम सन्मति सद्गति के दाता, ज्ञाता गुणी महान ।। स्वा०।।

अधमोद्धारक तारक तुम ही, सर्व सिद्धि के दानी ।
अपने-अपने इच्छित सुख को, तुमसे पाते प्रानी ।
करुणावत्सल दया दृष्टि से, करते तुम कल्याण ।। स्वा०।।

इस भूतल पर प्रेमभाव वश, मानव तन धर आते ।
पद्म पत्र-सम निर्मल रहकर परहित सदा निभाते ।
तुम सच्चिदानन्दघन हे प्रभु, 'पथिक' हृदयधन प्रान ।। स्वा०।।

**सन्त-वचन—जो अपने मनको चेला बना लेता है वही गुरु की शरण लेकर गुरु हो जाता है। देह की पूजा को गुरु-पूजा न मानो। गुरु-आज्ञा को पूर्ण करना ही सच्ची गुरु पूजा है। अपनी लघुता को गुरुता में लीन करने के लिये गुरु-आज्ञा का पालन करना गुरु-उपासना है।**

साथी आना है तो आ ले ।।

देख ज़गत् का ले न सहारा, खुद भूला है जगत् बिचारा ।
वह क्या देगा तू क्या लेगा, उससे नजर हटा ले ।। साथी०।।

कोई अपने सुख में फूला, कोई अपने दुख में भूला ।
सुख भी झूठा, दुख भी झूठा, अपना मन समझा ले ।। साथी०।।

लम्बी मंजिल हिम्मत भर ले, अपने को अपने वश कर ले ।
राह कठिन है, थोड़ा दिन है, जल्दी कदम बढ़ा ले ।। साथी०।।

जीवन के स्वर-ताल मिला ले, इसमें प्रेम गीत कुछ गा ले ।
'पथिक' प्रगति से, निश्चल मति से, निज प्रियतम को पा ले ।। साथी०।।

**सन्त-वचन—वह वीर है जो दूसरों पर विजय प्राप्त करता है किन्तु जो अपने मन बुद्धि को स्ववश में रखता है वह तो महात्मा है।**

साधु-साधना नहीं भुलाना इसकी सिद्धि प्रेम को पाना ।।

काम क्रोध से शक्ति बचाना सब इन्द्रियों को बस में लाना ।
क्षणिक सुखों में मन न फँसाना, साधु साधना नहीं भुलाना ।।

अन्धे की लाठी बन जाना, भटके जन को मार्ग बताना ।
दीन अनाथों को अपनाना, साधु साधना नहीं भुलाना ।।

दुखी जनों का कष्ट हटाना, कंटक चुनकर फूल बिछाना ।
अन्धकार में ज्योति जलाना, साधु साधना नहीं भुलाना ।।

भूखे जन की क्षुधा मिटाना, प्यासे की तुम प्यास बुझाना ।
रोगी को औषधि पहुँचाना, साधु साधना नहीं भुलाना ।।

गिरे हुये को तुरत उठाना, शोक विकल को गले लगाना ।
रोते को भी धैर्य बंधाना, साधु साधना नहीं भुलाना ।।

निर्धन को कुछ धन दे आना, निर्बल को बलवान बनाना ।
कहना मत करके दिखलाना, साधु साधना नहीं भुलाना ।।

पर धन में न कभी ललचाना, जगत् दृश्य से विरति बढ़ाना ।
कर्मवीर जग में कहलाना, साधु साधना नहीं भुलाना ।।

वैभव में न कभी इतराना, असफलता में चित न डिगाना ।
'पथिक' सभी विधि नियम निभाना साधु साधना नहीं भुलाना ।।

**सन्त-वचन—दैवी सम्पत्ति से प्रेम होने पर अभिमान, लोभ, ईर्ष्या द्वेषादि आसुरी सम्पत्ति का त्याग सुलभ हो जाता है। सुख के लिये ही संसार की वस्तुओं, व्यक्तियों का संग किया जाता है**

**और निराश दुखी होने पर शान्ति के लिये सब कुछ का त्याग किया जाता है।**

---

सुन लो हम यही बताते हैं, तुम किधर यह किधर जाते हैं ।।

तुम गर्व पूर्वक कहते हो, यह भी मेरा वह भी मेरा ।
यह प्रभु से कहते 'तू ही तू' यह भी तेरा वह भी तेरा ।
तुम कुगति यह सुगति पाते हैं ।। तुम किधर०।।

तुम बन्धन तोड़ नहीं सकते, तन धन के अभिमानी होकर ।
यह सब कुछ समझ रहे प्रभु का इसलिये आत्मज्ञानी होकर ।
अपने को मुक्त बनाते हैं ।। तुम किधर०।।

तुम सुख के कारण दुख पाते, मिटती है मन की भ्रान्ति नहीं ।
यह सुख दुख को मिथ्या समझें, दिखती है कहीं अशान्ति नहीं ।
अपना कर्तव्य निभाते हैं ।। तुम किधर०।।

यह जिस प्रकाश में देख रहे, तुम मान रहे हो रात वहाँ ।
तुम जहाँ वस्तुओं से चिपटे, सुनते न ज्ञान की बात वहाँ ।
गुरु बार-बार समझाते हैं ।। तुम किधर०।।

तुम जिसको अपना समझ रहे, अपने संग सदा न रख पाते ।
यह प्रेमी हैं उस प्रियतम के जो क्षण भी दूर नहीं जाते ।
हम 'पथिक' इन्हीं की गाते हैं ।। तुम किधर०।।

---

**सन्त-वचन—परमात्मा को न खोजो अपने को खोजो। जिस परमात्मा को खोज रहे हो वह स्वयं में ही छिपा है उसे इधर-उधर भाग कर कभी न पा सकोगे। इसी क्षण ठहरो शान्त हो जाओ और देखो, तुम उसी परमाश्रय में हो। न देख सको तो देखने वालों से पूछो। वासना से सनी बुद्धि अन्धी होती है। दरिद्र भिखारी अहंकार जो कुछ बनना चाहता है अथवा पाना चाहता है वह अहंकार है, वह ज्ञान में नहीं देखता। पापी अहंकार पुण्य के वस्त्र पहिन लेता है। वही ज्ञानी बनता**

**है त्यागी धर्मात्मा बनता है। उसी अहंकार को ज्ञान में देखना मुक्त होने का सहज उपाय है।**

---

सुनो प्यारे श्रोता सज्जन, सुना हमने यह गुरु प्रवचन ।

ज्ञान में जो साधक जागे, विषय सुख को विषवत त्यागे ।
देखता रहे साक्षी बन, जो कुछ भी होता हो आगे ।
नहीं बँधता वह कर्ता बन, सुना हमने यह गुरु प्रवचन ।।

ज्ञान में पाप मिटा करते, सभी संताप मिटा करते ।
कष्ट जो कुछ भी आते हैं, सब अपने आप मिटा करते ।
प्रेम ही होता जीवन धन, सुना हमने यह गुरु प्रवचन ।।

साध कर जो वाणी बोले, बुद्धि साधे अन्तर तोले ।
साध कर काम क्रोध के वेग, भेद अपना न कहीं खोले ।
साध लेता वह चंचल मन, सुना हमने यह गुरु प्रवचन ।।

मन से जो कुछ माना जाता, बुद्धि से वह जाना जाता ।
स्वयं में शान्त मौन रहकर, आत्मा पहचाना जाता ।
'पथिक' मिल जाता आनन्दघन, सुना हमने यह गुरु प्रवचन ।।

---

**सन्त-वचन—परम लाभ के लिये—(१) सदाचार का ही पालन करो, (२) सत्पुरुषों का संग करो, (३) किसी की निन्दा न करो, (४) अपनी निन्दा सुनकर क्षोभ न करो, (५) अपनी प्रशंसा सुन कर हर्षित न होओ, (६) अमानी रह कर मान दो, (७) स्मृति और प्रज्ञा को जाग्रत बनाये रहो, (८) भोग सुख में धन में, अधिकार सम्मान में सन्तोष करो किंतु प्रभु के ध्यान में ज्ञान में सद्गुण विकास में, दान में, स्वाध्याय में, तप त्याग में, कहीं सन्तोष न करो।**

---

सुन्दर हो यह मानव जीवन ।।

मेरे नाथ दीन दुखहारी , कृपा आपकी पतितपावनी ।
अहेतुकी है सुधामयी है, सर्व समर्थ विपदा नशावनी ।
उसी कृपा से हे आँनदधन ।। सुन्दर० ।।

सुखी दशा में सावधान कर, हम सबको सेवा का बल दो ।
दुखी दशा में त्याग कर सकें वही शक्ति दो निर्मलमति दो ।
लगा रहे तुममें चञ्चल मन ।। सुन्दर० ।।

जिससे हम सुख दुख बन्धन से, इस जीवन में मुक्त हो सकें ।
सतस्वरूप का अनुभव करके, क्षुद्र देह अभिमान खो सकें ।
कहीं रह न जाये अपनापन ।। सुन्दर० ।।

प्रभो आपके परम प्रेम का नित्य मधुर आस्वादन करके ।
परम तृप्त कृतकृत्य हो सकें अपने में तुमको ही भर के ।
तुम्हीं 'पथिक' के हो प्रियतम धन ।। सुन्दर० ।।

---

**सन्त-वचन—अपने को इतना सुन्दर बना लो कि प्रेमास्पद प्रभु तुम्हें चाहें, तुम उनसे कुछ न चाहो । अपना जीवन इतना सुन्दर बना लो कि संसार चाहे पर जीवन संसार से कुछ न चाहे।**

---

सोचो किसने क्या पाया, मानव क्यों जग में आया ।।

आने वालों को देखो, क्या लेकर वे आते हैं ।
जाने वालों को देखो, क्या संग लेकर जाते हैं ।
कुछ पुण्य किये या यूँ ही, यह नर तन व्यर्थ गवाँया ।।

उस लोभी को भी देखो, संचय का जिसे व्यसन है ।
लाखों की सम्पत्ति जोड़ी, पर तृप्त न होता मन है ।
कौड़ी न साथ जायेगी फिर किसके लिये कमाया ।।

उस कामी को भी देखो, मन भरा या कि रीता है ।।
इच्छायें पूरी करते कितना जीवन बीता है ।
यह वही काम है जिसने, किस किसको नहीं नचाया ।।

उस मोही को भी देखो, सबकी ममता में फूला ।
निज देह गेह में फँस कर, उस परमेश्वर को भूला ।
यह मोह दुखों की जड़ है, इसने किसको न रुलाया ।।

उस अभिमानी को देखो, यह विभव रहेगा कब तक ।
उससे भी बढ़कर जग में, हो गये करोड़ों अब तक ।
मिट्टी में खोजे कोई, उनकी कंचन सी काया ।।

उस दानी को भी देखो, क्या सुख मिलता देने में ।
वह क्या जानेंगे इसको जो लगे हुए लेने में ।
इन देने वालों ने ही, है सच्चा लाभ उठाया ।।

उस ज्ञानी को भी देखो, जिसको न कहीं कुछ भय है ।
दिख रहा दृष्टि में उसको, यह विश्व आत्मा मय है ।
जो कोई सन्मुख आया, उसका अज्ञान मिटाया ।।

उस प्रेमी को भी देखो, जो प्रियतम में लय होकर ।
स्वाधीन विचरता जग में, तन मन की चिन्ता खोकर ।
वह 'पथिक' धन्य है जिस पर, पड़ जाती इनकी छाया ।।

---

**सन्त-वचन—अदूरदर्शी मनुष्य ही लोभी मोही अभिमानी होते हैं क्योंकि वे विनाशी वस्तुओं के अथवा क्षणस्थायी सुखों के आगे नहीं देख पाते। जो जहाँ तक देखते हैं वहीं तक जीते हैं और वहीं तक कर्म करते हैं।**

---

सोचो किसने क्या पाया, मानव जग में क्यों आया ।
देखो सुख के बदले में कितना है दुःख उठाया ।।

इन भोग सुखो के पथ में, होकर तन-मन के रोगी ।
कितने ही पुण्य मिटा कर, मर गये करोड़ों भोगी ।
उनकी दुर्गति को लखकर, सन्मति ने तत्क्षण गाया ।। सोचो०।।

कितने राजे महाराजे, हो गये महा अभिमानी ।
वे भी न रहे इस जग में, उन की रह गई कहानी ।
अनुभवी जनों ने जग को, है मिथ्या भास बताया ।। सोचो०।।

जिनके महलों में प्रभुता, के राग सदा बजते थे।
इच्छित सुख दाता सेवक जिनको न कभी तजते थे ।
उनकी समाधि के सूनेपन ने तब यह गीत सुनाया ।। सोचो०।।

जिनको इस जग में सबसे, बढ़कर सत्कार मिला है ।
जिनको पुण्यों के बदले में, उत्तम प्यार मिला है ।
उनको देखो क्यों इतना, पाकर सन्तोष न आया ।। सोचो०।।

जो कुछ है अभी समय है, तुम कर लो अपने हित की ।
अन्तर्मुख हो कर त्यागो, चंचलता अपने चित की ।
यदि कर न सके तुम ऐसा, तो जीवन व्यर्थ गँवाया ।। सोचो०।।

उन सत्पुरुषों को देखो, जो परम तपस्वी त्यागी ।
तज मान मोह माया को, जो हुए सत्य अनुरागी ।
हम 'पथिक' जनों को ऐसे, सद्गुरु ने मार्ग दिखाया ।। सोचो०।।

---

**सन्त-वचन—देह छूटने के प्रथम ही शक्ति समय का दुरुपयोग नहीं करते हुए तृष्णा का त्याग कर दो, विनाशी से प्रीति हटा कर अविनाशी आत्मा में लगा दो आत्मा मैं ही शान्त तृप्त सन्तुष्ट रहो।**

---

सोचो जिससे सब कुछ मिलता, भगवान उसे ही कहते हैं ।।
जिसमें सब, जो सब में परिपूर्ण, महान उसे ही कहते हैं ।।

दोष हों जिसे दीखते न हों व पशुवत् मानव आकृति में ।
जो मन में दोष न रहने दे, विद्वान उसे ही कहते हैं ।।

निबलों के काम आसके जो, जग में सच्चा बलवान वही ।
जब धन की चाह न रह जाये धनवान उसे ही कहते हैं ।।

कामना पूर्ति का लोभी प्राणी, कामी क्रोधी बन जाता ।
निष्काम बना दे जो कि, प्रेममय ध्यान उसे ही कहते हैं ।।

जिससे कि जान ले अपने को, इस जग को, जगदीश्वर को भी ।
जब 'पथिक' मुक्त हो सके, ज्ञान विज्ञान उसे ही कहते हैं ।।

**सन्त-वचन—अज्ञान में सत्य प्राप्ति का प्रयत्न असत्य अनित्य से बाँधे रहता है। अज्ञान में आनन्द के लिये किया गया प्रयत्न दु:ख में ही ले जाता है इसीलिये अज्ञान को जानो सर्वप्रथम स्वयं का ज्ञान प्राप्त करो। जिससे सब कुछ प्रकाशित होता है, वही ज्ञान है। निर्णय बुद्धिगत है, दर्शन स्वयं में होता है।**

सोचो तो सज्जनों यहाँ, स्वाधीन शान्ति पाते न क्यों ।
सुख का ही अन्त दु:ख देखकर परमार्थ-पथ में आते न क्यों ।।

शुभ या अशुभ कर्मों का फल तुमको ही भोगना पड़े ।
अब सावधान होके तुम निष्कामता को लाते न क्यों ।।

कितना ही तुमने तप किया, संयम दान जप किया ।
सत्य को जानने न दे वह अभिमान मिटाते न क्यों ।।

मन में सुखोपभोग की तृष्णा भी एक आग है ।
उसकी न पूर्ति होती कभी त्याग से उसको बुझाते न क्यों ।।

सुन्दर मानव तन मिला, सत्संग का सुयोग भी ।
ऐसा सुअवसर पाके 'पथिक' जीवन सफल बनाते न क्यों ।।

**सन्त-वचन—अपने ही भाव से प्रत्येक अशान्त है। अपने ही भाव से शान्त भी हो सकता है। शान्ति के लिये अभ्यास आवश्यक नहीं है केवल सद्‌भाव ही पर्याप्त है। यह न पूछो कि शान्ति कहाँ मिलेगी ? प्रत्युत यह देखो कि अशान्ति क्यों हैं ? वासना के कारण ही अशान्ति है। दूसरों का अनिष्ट चिन्तन करने से, पर धन की इच्छा से, देह को ही अपना रूप जानने से, सुखोपभोग की तृष्णा से अशान्ति होती है।**

सौभाग्य से गुरुदेव की जो शरण में आया ।।
गुरुदेव की कृपा से छुटी ममतामयी माया ।।

ममता के छद्मरूप में संसार भुलाना ।
गुरुदेव की कृपा बिना मिलता न ठिकाना ।
ममता में देह गेह से ही नेह लगाना ।

गुरुदेव की कृपा से सत्स्वरूप को जाना ।
ममता की मोहनी से गुरु ने ही बचाया ।।
सौभाग्य से गुरुदेव की जो शरण में आया ।।

ये ममता सदा कामना के सुख में फँसाती ।
गुरु कृपा सुख के अन्त में है दुख से बचाती ।
ये ममता ही संसार में मोही को रुलाती ।
गुरु कृपा मोह पाश से साधक को छुड़ाती ।
ममता ने गिराया वहीं सद्गुरु ने उठाया ।।
सौभाग्य से गुरुदेव की जो शरण में आया ।।

ममता ने मोही मन को भोग रोग में डाला ।
गुरु कृपा ने निज साधकों को इनसे निकाला ।
ममता में है अज्ञान-तिमिर से पड़ा पाला ।
गुरु की कृपा से मिल गया सद्ज्ञान उजाला ।
ममता ने भुलाया वहीं सद्गुरू ने बुलाया ।।
सौभाग्य से गुरुदेव की जो शरण में आया ।।

ममता के तागों से ही बँधा सुखासक्त मन ।
गुरु कृपा से ही टूटता क्षण मात्र में बंधन ।
ममता की परिधि में नहीं बन पाता है भजन ।
गुरु कृपा से लग जाती अनायास ही लगन ।
गुरु कृपा ने विचित्र चमत्कार दिखाया ।।
सौभाग्य से गुरुदेव की जो शरण में आया ।।

ये माया के पर्दे हैं जो सद्वस्तु छिपाते ।
गुरुदेव की दया है जो कि आके लखाते ।
ये माया है कि जिसमें सभी गोते लगाते ।

गुरुदेव निज दया से उन्हें आके बचाते ।
अपना बना लिया कि जिसे सामने पाया ।।
सौभाग्य से गुरुदेव की जो शरण में आया ।।

ममता ही नाम रूप में आसक्त बनाये ।
सद्गुरु कृपा सदा ही मुक्ति द्वार दिखाये ।
ममता विनाशी देह में ही चित्त फँसाये ।
गुरु कृपा आत्म ज्ञान से अज्ञान हटाये ।
ममता ने रुलाया वहीं सद्गुरु ने हँसाया ।।
सौभाग्य से गुरुदेव की जो शरण में आया ।।

ममता में प्यारे लगते हैं सब भोग के सामान ।
गुरु कृपा से प्रिय दीखता है भक्ति योग ध्यान ।
इस ध्यान योग में ही मिल जाते हैं भगवान ।
भगवान ही परमगुरु उनका स्वरूप ज्ञान ।
गुरु ज्ञान में दिखती 'पथिक' को माया की छाया ।।
सौभाग्य से गुरुदेव की जो शरण में आया ।।

---

**सन्त-वचन—अज्ञान में ही ममता दृढ़ रहती है। गुरु ज्ञान से ममता का नाश होता है। ममता का अन्त होने पर समता आती है। ममता में अगणित कष्ट हैं। समता में ही शान्ति सुलभ होती है। गुरु ज्ञान में असत्य को अनित्य को देखो और असंग होकर रहो। जो सदा न रहेगा उसकी ममता का त्याग करो।**

---

संसार में मानव वही सत् धर्म जो अपना सके ।
जिसमें कि सत्य विवेक हो, मन के विकार हटा सके ।।

ज्ञानी वही जो सर्वदा, दुख द्वन्द्व में भी शान्त हो ।
प्रतिकूलता कितनी ही हो, समता न कोई डिगा सके ।।

प्रेमी वही अपने लिये, जो कुछ नहीं हो चाहता ।
निष्काम सेवा भाव से, प्रियतम को जो कि रिझा सके ।।

त्यागी वही जो विरक्त है, जो लोभ मोह से मुक्त है ।
जो कामना के साथ ही, देहाभिमान मिटा सके ।।

जो दूरदर्शी सन्त जन, सौभाग्यवान उसे कहें ।
जो भाग्यहीनों के लिये सुख दान करता जा सके ।।

सम्पत्तिवान वही जहाँ, दैवी गुणों का राज्य हो ।
शीतल ह्रदय उसका है जो, तृष्णा की आग बुझा सके ।।

सबसे बड़ा समझो उसे, जिसकी बड़ी छाया रहे ।
सच्चा सुखी वह है कि जो, दुखियों के दुःख हटा सके ।।

है शक्तिमान वहीं यहाँ, आता है सबके काम जो ।
परमार्थी वह है 'पथिक', जो शान्ति शाश्वत पा सके ।।

---

**सन्त-वचन—व्यक्तित्व से स्वरूप तक जो ले जाता है वही धर्म है। सत्य निर्णय के लिये मोह, लोभ, क्रोध से मुक्त विवेकवती बुद्धि की जागृति आवश्यक है। परमात्मा से पूर्ण प्रेम ही स्वधर्म है। सत्यानुभूति के लिये यह 'स्व' ही द्वार है। निरन्तर सत्य परमात्मा का संग स्वधर्म है।**

---

शुभ अवसर बीते जाते हैं, तुम बुद्धिमान मानव जागो ।
अविवेकी देर लगाते हैं तुम बुद्धिमान मानव जागो ।।

यह महा दुखद अज्ञान-निशा जिसमें न सूझती सत्य-दिशा ।
इसको सब समझ न पाते हैं तुम बुद्धिमान मानव जागो ।।

यह झूठे दुख-सुख के सपने, जिनको तुम समझ रहे अपने ।
सब मन के माने नाते हैं तुम बुद्धिमान मानव जागो ।।

भोगों से जो कि विरक्त बने, जो सच्चे प्रभु के भक्त बने ।
वे गुरुजन नित्य जगाते हैं तुम बुद्धिमान मानव जागो ।।

जो उठते मोह नींद तजकर, चलते शुभ सद्‌गुण से सजकर ।
वे 'पथिक' सुपथ में गाते हैं, तुम बुद्धिमान मानव जागो ।।

---

**सन्त-वचन—वह होश किस काम का जो मानव को स्वार्थी, अभिमानी, क्रूर, कठोर बना दे। जाग्रत वही है जो मन में विकारों, दोषों का प्रवेश न होने दें। दृश्य से द्रष्टा की ओर जो ले जाये वही जागरण है। जाग्रत रह कर जो स्वयं में है वही स्वस्थ है।**

---

शुभ अवसर है तो यह है, जो चाहो लाभ उठाओ ।
यह व्यर्थ न जाने पाये, निज को निर्दोष बनाओ ।।

सत्संगति से गति मिलती, हितकर पुनीत मति मिलती ।
सद्‌गुरु विवेक मिल जाता, उसको न कहीं ठुकराओ ।।

दुख से न डरो जीवन में, प्रभु का आश्रय धर मन में ।
जो कर न सके थे अब तक, वह भी करके दिखलाओ ।।

जग के इन संयोगों में, तुम रमो न प्रिय भोगों में ।
तज कर वियोग का भय अब, नित योग गीत तुम गाओ ।।

अपने स्वरूप को जानो, तन धन अपना मत मानो ।
मोही बन कर आये थे, प्रेमी बन कर ही जाओ ।।

इच्छाओं के त्यागी बन, प्रभु के ही अनुरागी बन ।
ऐ 'पथिक' कहीं भी रहकर, तुम परमानन्द मनाओ ।।

---

**सन्त-वचन—परमार्थिक उन्नति के सात नियमों का पालन करो—(१) अपने गृह सम्बन्धी कार्यों में आनन्द न मानो, (२) व्यर्थ वार्ता में सुख न लो, (३) निद्रा में अधिक समय न काटो, (४) प्रपञ्ची जनों के साथ समय न बिताओ, (५) दुर्वासना के वश**

**होकर न रहो, (६) दुष्टों की संगति से बचते रहो। साधना समाधि में अल्प सफलता पाकर सन्तुष्ट न हो जाओ।**

---

शुभ चाहे तो प्रभु गुन गाय ले ।
निज मन का तू मोह मिटाय ले ।।

नाम प्रभु के अनेक, पर हैं वे तो एक ।
ऐसा उर में विवेक बसाय ले ।।

करो दोषों का त्याग, भरो सत्यानुराग ।
यहाँ तृष्णा की आग बुझाय ले ।।

करो पर उपकार सभी जीवों से प्यार ।
अपना हृदय उदार बनाय ले ।।

करो उसका ही संग, जिससे निर्मल हो अंग ।
प्रेम-भक्ति का रंग चढ़ाय ले ।।

तुम्हें ऐसा हो ज्ञान, कहीं भूले न ध्यान ।
अपना देहाभिमान हटाय ले ।।

जग का सब धन धाम सदा आता न काम ।
'पथिक' हो के उपराम सुख पाय ले ।।

---

**सन्त-वचन—त्याग न करोगे तो राग की वस्तु छिन ही जायेगी। तप न करोगे तो रोग-भोग को छीन ही लेगा। दान न दोगे तो कोई अपने आप ले ही लेगा।**

---

हम आपके गुणगान न गायें तो क्या करें ।
दुखिया हैं आपको न बुलायें तो क्या करें ।।

जब आपके सिवा यहाँ कोई न हमारा ।
अब आपको अपनी न सुनायें तो क्या करें ।।

हैरान हो रहे हैं अपने मन के मोह से ।
ये वासनायें हमको भुलायें तो क्या करें ।।

सेवा के लिये शक्ति, शान्ति स्वयं के लिये ।
हे नाथ चाहते हैं न पायें तो क्या करें ।।

है आपकी कृपा समर्थ पतित पावनी ।
हम दीन 'पथिक' शरण न आयें तो क्या करें ।।

---

**सन्त-वचन—संसार की कोई भी अवस्था ऐसी नहीं जिसमें कोई न कोई कमी शेष न रहे। निराश होने पर ही कोई भगवान की शरण लेता है।**

---

हम आये शरण तुम्हारी, दयानिधान हे भगवान ।
अब सुध लो नाथ हमारी, जीवन प्राण हे भगवान ।।

यही विनय है तुम्हारा हृदय में ध्यान रहे ।
तुम्हीं सर्वस्व हो अपने यही अभिमान रहे ।
दीन दुनिया का मुझे और न कुछ भान रहे ।
जहाँ कहीं भी रहूँ नाथ का गुण गान रहे ।
तुम हेतुरहित हितकारी, दयानिधान हे भगवान ।। १।।

तुम्हीं आधार हो केवल तुम्हीं सहारे हो ।
सभी जीवों के एक तुम्हीं प्राण प्यारे हो ।
सभी के मध्य हो सबसे परे किनारे हो ।
अनेक हमसे तुम्हें एक तुम हमारे हो ।
दुखियों के तुम दुखहारी, दयानिधान हे भगवान ।। २।।

वही जीवन है जो कि सत्य सुपथ पा जाये ।
वही पावन है जो सद्‌गुरु की शरण आ जाये ।
तभी आनन्द है भक्ति का नशा छा जाये ।
कि रोम-रोम में प्रभु प्रेम धुनि समा जाये ।
मम अन्तर हृदय बिहारी, दयानिधान हे भगवान ।। ३।।

कुछ भी पाऊँ या मैं खोऊँ तो यही कह करके ।
कभी हँसू या रोऊँ तो यही कह करके ।
सदा ही जागूँ या सोऊँ तो यही कह करके ।
'पथिक' तुम्हारा ही होऊँ तो यही कह कर के ।
प्रभु सरबस के अधिकारी, दया निधान हे भगवान ।। ४।।

**सन्त-वचन—जिसके द्वारा अनुभव करते हो वह स्वयं प्रकाश आपका निज स्वरूप है अपने निज स्वरूप से एकरसता का बोध ही सत्य ज्ञान है। निज स्वरूप सभी अवस्थाओं से अतीत है।**

हम बड़े भाग्यवान हैं भगवान की सुनते हैं ।
होता यथार्थ दर्शन उस ध्यान की सुनते हैं ।।

सर्वत्र असत् चर्चा सुनने को मिला करती ।
अगणित प्रपंचियों से यह भरी हुई धरती ।
प्रभु की कृपा से आज आत्मज्ञान की सुनते हैं ।। हम०।।

हम रूप में मनन को ही ध्यान मानते थे ।
ग्रन्थों के अध्ययन को ही ज्ञान मानते थे ।
पर ये हैं जानकारी विद्वान की सुनते हैं ।। हम०।।

आसक्त हो चुके हैं जन-धन में सुखी होकर ।
अब मुक्ति चाहते हैं बन्धन से दुखी होकर ।
तब विरति के लिये स्वधर्म दान की सुनते हैं ।। हम०।।

हमने न शान्ति पायी धन धाम छोड़ कर के ।
निष्कामता न आई सब काम छोड़ कर के ।
यह लीला अहंकार के अभिमान की सुनते हैं ।। हम०।।

धन स्वर्ण न छूने को हम त्याग समझते थे ।
ममता भरे क्रन्दन को अनुराग समझते थे ।
अब भ्रम निवृति के लिये महान की सुनते हैं ।। हम०।।

जब बुद्धि विमोहित है मोहान्ध मन के पीछे ।
मन भाग रहा इन्द्रिय सुख और तन के पीछे ।
हम 'पथिक' आज अपने उत्थान की सुनते हैं ।। हम०।।

**सन्त-वचन—संसार प्रपंच सुनते-सुनते, सुनना समाप्त नहीं हुआ, किन्तु श्रवण शक्ति क्षीण हो गयी। जो भगवान की सुनता है वही भाग्यशाली है प्रत्येक मनुष्य इसीलिये मोही लोभी अभिमानी बना है क्योंकि जो सुना है वही मान लिया है।**

हम गुरु संदेश सुनाते हैं, इसको सब कोई क्या जाने ।
यह परम लाभ की बातें हैं, इसको सब कोई क्या जाने ।।

ऐसा जग में संयोग नहीं, हो जिसका कभी वियोग नहीं ।
ऐसा कोई सुख भोग नहीं, जिसके पीछे दु:ख रोग नहीं ।
भोगी बन सब पछिताते हैं, इसको सब कोई क्या जाने ।।

है सफल उसी का नर जीवन, जो रहता जग में त्यागी बन ।
जिसने जीता है अपना मन, दैवी सम्पत्ति ही जिसका धन ।
वे महापुरुष कहलाते हैं, इसको सब कोई क्या जाने ।।

धन पाकर जो दानी न बने, जो सरल निरभिमानी न बने ।
जो ईश्वर का ध्यानी न बने, जो आत्मतत्व ज्ञानी न बने ।
वह जीवन व्यर्थ बिताते हैं, इसको सब कोई क्या जाने ।।

जो व्यक्ति वस्तु का दास नहीं, दोषों का जिसमें वास नहीं ।
जिसमें दुर्व्यसन विलास नहीं, दु:ख आते उसके पास नहीं ।
वह 'पथिक' महत् पद पाते हैं, इसको सब कोई क्या जाने ।।

**सन्त-वचन—अपने बनाये दोषों को दूसरा कोई नहीं मिटा सकता, दोषों का त्याग करने में हम सदा स्वतन्त्र हैं। सुखासक्ति ही त्याग नहीं करने देती।**

हम जान गये तुम हो पर यह कुछ भी नहीं हो ।।
जो कुछ हो बिलक्षण हो तुम जैसे भी कहीं हो ।।

तुम झलक दिखाते कभी ज्ञानी के ज्ञान में।
तुम समझ में आते कभी ध्यानी के ध्यान में।
तुम चेतना बन चमकते हो स्वाभिमान में।
तुम क्षुद्र में हो और तुम्हीं हो महान् में।
इस झूठ के पर्दे में हो जो कुछ हो सही हो ।। हम०।।

जिस दर पै आके फिर कहीं जाना नहीं रहे।
मन के लिये कोई भी बहाना नहीं रहे।
माया के लिये मन में ठिकाना नहीं रहे।
पाकर तुम्हें फिर कुछ कहीं पाना नहीं रहे।
मेरी ये चाह है कि तुम्हारी ही चही हो ।। हम०।।

तुमको कभी दूरातिदूर मान रहे हम।
आनन्दमय चिन्मात्र कभी जान रहे हम।
अपने ही रूप में कहीं पहिचान रहे हम।
संसार में क्या सार है यह छान रहे हम।
हमसे वो दूर कर दो जो कुछ भूल रही हो ।। हम०।।

तुमसे ही मिला करता पुण्य पाप को जीवन।
तुमसे मिला करता है वर या शाप को जीवन।
तुमसे ही दीखता है शीत-ताप का जीवन।
तुमसे ही मैं पाता हूँ अपने आप का जीवन।
मुझ 'पथिक' को दिखते नहीं हो फिर भी यही हो ।। हम०।।

---

**सन्त-वचन—भगवान समाज सेवक को दुखद संसार के रूप में, भक्त के रूप में, जिज्ञासु को ज्ञान के रूप में और प्रत्येक भावुक प्रेमी को भावानुसार विविध रूप में मिलते हैं।**

---

हम तुम क्या कितने महारथी इस जग में आकर चले गये ।।
निज कर्मों से ही नर्क-स्वर्ग की राह बना कर चले गये ।।

हम सब को भी चलना ही है, चलने की तैयारी कर लो।
जो पहले से तैयार न थे पछता पछता कर चले गये ।।

जब सब कुछ छुट जाना ही है, सबकी ममता का त्याग करो ।
मूरख तो मैं मेरी कह के मद मान बढ़ा कर चले गये ।।

हम सबको यही देखना है कुछ अशुभ न हो शुभ ही शुभ हो ।
लाखों अविवेकी शक्ति समय को व्यर्थ बना कर चल गाये ।।

अब अपना कुछ न मान करके सब कुछ परमेश्वर का जानो ।
वह 'पथिक' धन्य, जो भक्ति मुक्ति का सत्पथ पाकर चले गये ।।

---

**सन्त-वचन—मनुष्यता आरम्भ है। दिव्यता पथ है। परमात्मा अन्त है। जो देहादिक वस्तुओं में विश्वास करता है वह परिग्रही है, जो आत्मा में निष्ठा रखता है वही अपरिग्रही होता है। जो जीवन को नहीं जानते वही मृत्यु को जीवन का अन्त कहते हैं। जन्म जीवन का प्रारम्भ नहीं है और मृत्यु जीवन का अन्त नहीं है।**

---

हम पथिक हमारा और ढंग, मेरा औरों का कौन संग ।।

मैं किसे बताऊँ राह कौन, मेरे दिल की है चाह कौन ।
समझेगा मेरी आह कौन, करता किसकी परवाह कौन ।
अपनी-अपनी बज रही चंग, हम पथिक हमारा और ढंग ।।

है वैभव सुख की शान कहीं, है जाति देश अभिमान कहीं ।
है मत समाज का गान कहीं, स्वारथ युत धर्म विधान कहीं ।
सुन-सुन कर हम हो गये तंग, हम पथिक हमारा और ढंग ।।

कोई कुछ ज्ञान सिखाते हैं, कितनी विधि ध्यान बताते हैं ।
पर हम जो रोते गाते हैं, वह विरले ही लख पाते हैं ।
सुन देख सभी हो गये दंग, हम पथिक हमारा और ढंग ।।

हम चलना खा ठोकर सीखे, दिल पाना दिल खोकर सीखे ।
जो कुछ हँसकर रोकर सीखे, सच्चे आशिक होकर सीखे ।
हो गया निराला राग रंग, हम पथिक हमारा और ढंग ।।

हम जंगल में हैं या घर में, दिल लगा एक उस दिलवर में ।
वह मेरे बाहर भीतर है, व्यापक हर शै में हर दर में ।
बस रही मिलन को ही उमंग, हम पथिक हमारा और ढंग ।।

हम भला बुरा क्या पहचाने, हम तो प्रीतम के दीवाने ।
बस एक उन्हीं को ही जाने, हमको कोई कुछ भी माने ।
चल पड़े जिधर मन की तरंग, हम 'पथिक' हमारा और ढंग ।।

---

**सन्त-वचन—संसार से आशा और सम्बन्ध ही परमात्मा के योग-सिद्धि में बाधक है। आशा और सम्बन्ध को छोड़ दो।**

---

हम सबको इक दिन जाना है इस जग में आके देख लिया ।।
कुछ दिन तक ही रह पाना है घर-घर में जाके देख लिया ।।

ऐसा कोई अब तक न मिला जो आकर के फिर गया न हो ।
फिर भी मूरख रहना चाहें, उनको समझाकर देख लिया ।।

भोगी जन तो वाणी के मधुर मन के कठोर ही दिखते हैं ।
प्रेमी योगी विरले कोई यह खोज लगा के देख लिया ।।

अपना माना था जिसको भी वह कोई अपना रह न सका ।
हम भी तो किसी के हो न सके कुछ समय बिता के देख लिया ।।

हम भी तो धन की मान भोग की पूर्ति चाहते आये हैं ।
तृष्णा की आग न बुझती कभी बहुतेरा बुझा के देख लिया ।।

जब तक भीतर से त्याग न हो कामना अहंता ममता का ।
तब तक संन्यास नहीं होता सब वेष बना के देख लिया ।।

जब तक कि आत्मा में निश्चल सन्तुष्टि तृप्ति दृढ़ प्रीति न हो ।
तब तक विश्राम नहीं मिलता सब नियम निभा के देख लिया ।।

सब दौड़ रहे हैं जिधर, उधर से लौटने वाले कहते हैं ।
जो कुछ भी मिला वह रह न गया दुनिया को रिझा के देख लिया ।।

जिस अमृतत्व को खोज रहे थे इधर उधर मर कर जी कर ।
हम 'पथिक' उसे अपने में अहं का परदा उठा के देख लिया ।।

**सन्त-वचन—मृत्यु के समय स्नेह से भय से, द्वेष से, बुद्धि पूर्वक जिसका मन द्वारा चिन्तन होगा देहाभिमानी उसी रूप को प्राप्त करेगा अतः साधक को अविनाशी आत्मा परमात्मा से ही प्रीति करना चाहिये।**

हमने सद्गुरु से ज्ञान गीत गाना सीखा है ।।
समझ पाये हैं जितना वही बताना सीखा है ।।

बुद्धि बालकवत जिनकी वह फुसलाये जाते हैं ।
रागी मन वालों को कुछ देर रिझाना सीखा है ।।

कभी रटते हैं कोई पढ़ते है कुछ सीखते हैं ।
जो कि विद्वान हैं उनको समझाना सीखा है ।।

अभी लेने देने की बात बहुत दूर दिखती ।
अधिक जन प्रवचन सुनने भर को आना सीखा है ।।

मोहनिद्रा में कोई सोते कोई जाग जाते ।
बहुत लोगों ने तो बस मन मनाना सीखा है ।।

बिना सीखे ही लोभी मोही कामी क्रोधी थे ।
गुरु कृपा के बल से अब दोष मिटाना सीखा है ।।

जहाँ मानव पशुता का परिचय देता भोगी बन ।
हमने पशुता में मानवता लाना सीखा है ।।

हमको सतसंगति से जब सद्विवेक मिल पाया ।
उसी के द्वारा सबसे नेह निभाना सीखा है ।।

जहाँ से प्रियतम प्रभु की खोज का आरम्भ होता ।
वहीं पर लौट कर के प्रभु का पाना सीखा है ।।

खोजा हमने भी बहुत पाया नहीं कुछ बाहर ।
'पथिकमय' प्रभु ही हैं यह ध्यान लगाना सीखा है ।।

**सन्त-वचन—जीव का एक ही गुरु सम्बन्ध ऐसा है जो लघु सम्बन्धों से मुक्त होने में सहायक होता है। गुरु कृपा से ही वह ज्ञान सुलभ होता है जिससे अज्ञान की निवृत्ति होती है। मोह, लोभादि दोषों का त्याग सम्भव हो जाता है।**

हमारे प्रेमनिधे भगवान ।।

तुम्हीं ऐसे सुन्दर श्रद्धेय, परमधन जीवन के आधार ।
तुम्हारी अकथ प्रीति प्रिय नीति, तुम्हारा अतुलित अनुपम प्यार ।

रमे यह रोम रोम में ध्यान ।।

आज किस मुंह से विनती करूँ, जबकि मैं अति मलीन मतिमन्द ।
पतित हूँ निर्बल हूँ सब भाँति, कहूँ क्या क्या हे आनन्दंकद ।

जानते सब तुम दयानिधान ।।

जहाँ इतना अपनाया मुझे, कहीं मैं भूल न जाऊँ नाथ ।
सफल हैं जनम जनम के पुण्य, थाम लो हे प्रभु मेरा हाथ ।

तुम्हीं तो अपने प्रियतम प्रान ।।

तुम्हारा विरही हो फिर भला, चाह कब लेने देती चैन ।
सदा उत्सुक उत्कण्ठित हृदय, व्यथित रहता तुम बिन दिन रैन ।

'पथिक पथ' में गाकर यह गान ।।
हमारे प्रेमनिधे भगवान ।।

**सन्त-बचन—बड़ी से बड़ी अच्छाई अभिमान आने पर बुराई में बदल जाती है। देहाभिमानी संसार का दास होता है। सत्य से भिन्नता,असत्य से अभिन्नता स्वीकार करने पर अभिमान बढ़ता है विवेक से अभिमान की निवृति होती है।**

हर शय में हर एक शान में भगवान तुम्हीं हो ।
हर जान में बेजान में भगवान तुम्हीं हो ।।

ईसाई सिक्ख बुद्ध यहूदी वो पारसी ।
हिन्दू में मुसलमान में भगवान तुम्हीं हो ।।

गिरजा हो या मंदिर हो मस्जिद हो या समाधि ।
हर दीन में ईमान में भगवान तुम्हीं हो ।।

वेदों में पुरानो में गुरु ग्रन्थ तन्त्र में ।
उस बाइबिल कुरआन में भगवान तुम्हीं हो ।।

पंडित हो मौलवी हो या हो पोप पादरी ।
सब मतों के भाव गान में भगवान तुम्हीं हो ।।

हर ऋतु में हर दिशा में दिन रात सुबह शाम ।
बस्ती में या वीरान में भगवान तुम्हीं हों ।।

इस लोक में परलोक में या जन्म मृत्यु में ।
धरती में आसमान में भगवान तुम्हीं हो ।।

हर नाम में हर रूप में हर रंग ढंग में ।
पथ में 'पथिक' के ज्ञान में भगवान तुम्हीं हो ।।

---

**सन्त-वचन—ज्ञान में तुम माया की अद्भुत कृति को देखो यह माया एक को अनेक दिखा देती है असत् को सत् दिखा देती है हजार घड़ों में हजार सूर्य नहीं हैं परन्तु दीखते हैं जब कि सूर्य एक है।**

---

हरे राम श्रीकृष्ण श्याम की, पावन वाणी बोलो ।
क्या करना है क्या करते हो, सोचो आखें खोलो ।।

जीवन में प्रेमामृत भर लो, नहीं द्वेष विष घोलो ।
देखो अब निजस्वार्थ छोड़ कर तुम परमार्थ टटोलो ।।

सत्य असत को लोभ मोहवश, एक भाव मत तोलो ।
अब तो हरि के प्रेम रंग में, अपना हृदय भिगोलो ।।

जो कुछ बने सुकृत सरिता में, निज पापों को धोलो ।
मृत्यु निशा आने वाली है, अब इत उत मत डोलो ।।

'पथिक' तुम्हें घर चलना हो तो, सदगुरु के संग हो लो।
हरे राम श्रीकृष्ण श्याम की पावन वाणी बोलो ।।

**सन्त-वचन—जो कुछ दीखता है उसे सत्य न मानो। जो कुछ तुम्हें मिला है उसका सदुपयोग करो। जो तुम्हारें साथ नहीं है उसकी इच्छा न रक्खो। केवल परमात्मा का चिन्तन करो ।**

हे अच्युत अविचल हे भगवान्, परमेश परात्पर आनन्दघन ।
हे केवल विभु अज-विश्वभरन, हे नित्य निरंजन शान्तिसदन ।।

विश्वेश-रमेश-महेश्वर हे, करुणेश सुहृद हे प्रेमरमण ।
हे अविगत शुचितम जगवन्दन, हे दानी कलिमल क्लेशहरन ।।

हे शक्तिद भक्तिद मुक्तिद हे, अपना लो मेरा यह तन मन ।
प्राणेश प्रभो हे जगजीवन, सब छोड़ करें तव ध्यान भजन ।।
हे सत्य महान सुज्ञाननिधे, अभिलाष यही कब हों दर्शन ।
हे कोमल अनुपम मनमोहन, तव रूपसुधा के तृषित नयन ।।

हे पावन प्रेरक हे प्रियतम, शरणागत पालक चरन शरन ।
हे देव दयामय दैत्यदलन, स्वीकृत हो 'पथिक' हृदय अरपन ।।

**सन्त-वचन—भगवदभजन के लिये मन की पवित्रता और स्वस्थ शरीर होना परमावश्यक है। मन के पवित्र होने पर ही स्थिरता प्रसन्नता, निर्भयता आती है, प्राण-शक्ति प्रबल होती है।**

हे करुणामय करतार तुम्हीं, अक्षय सुख के भण्डार तुम्हीं ।
अज नित्य शुद्ध ओंकार तुम्हीं, अद्वैत अनन्त अपार तुम्हीं ।।

हो निराकार साकार तुम्हीं, प्रभु गुप्त प्रकट सतसार तुम्हीं ।
हे सुन्दर प्रेमागार तुम्हीं, जग के हो मूलाधार तुम्हीं ।।

हो पालक परम उदार तुम्हीं, भवनिधि से खेवनहार तुम्हीं ।
सुनते हो करुण पुकार तुम्हीं, सर्वेश्वर सर्वाधार तुम्हीं ।।

इस पार तुम्हीं उस पार तुम्हीं, करते सब विधि उद्धार तुम्हीं ।
सुधि लेते सभी प्रकार तुम्हीं, हो 'पथिक' जीवनाधार तुम्हीं ।।

**सन्त-वचन—राग द्वेष किया है तो त्याग और प्रेम करना ही होगा। विषयों का चिन्तन मिटाने के लिये भगवत चिन्तन करना ही होगा। भोगाभ्यास किया है तो योगाभ्यास करना ही होगा। स्वार्थ सिद्ध किया है तो सेवा करनी ही होगी।**

हे करुणामय भगवान बसो चंचल मन में ।
हे सर्वाधार महान बसो चंचल मन में ।।

हे विश्वम्भर ! परमेश एक परमाश्रय ।
तुम सबके जीवन प्रान बसो चंचल मन में ।।

हे सुन्दर ! हे सर्वस्व सुखों के स्वामी ।
हे अनुपम दयानिधान बसो चंचल मन में ।।

हे दाता ! हम तो आये द्वार तुम्हारे ।
दो भक्ति प्रेम का दान बसो चंचल मन में ।।

हे हरि ! हम दीन अकिंचन मोह भ्रमित हैं ।
हर लो सारा अज्ञान बसो चंचल मन में ।।

हे प्रेम निधे ! परमात्मन अन्तर्यामी ।
कर दो मेरा कल्याण बसो चंचल मन में ।।

हे प्रियतम प्रभु ! मैं पथिक तुम्हारा ही हूँ ।
दे दो निज शरणस्थान बसो चंचल मन में ।।

**सन्त-वचन—जिसके बिना किसी प्रकार रह नहीं सकते उसका ज्ञान होने पर ध्यान स्वतः हो जाता है। ध्यान में वह इच्छायें बाधक हैं जो पूरी नहीं हुई और मिट नहीं सकी।**

हे करुणामय हे जीवन धन ।।
प्रेमनिधे अनुपम महान तुम, पूर्ण समर्थ दयानिधान तुम ।

तुममें ही सर्वस्व समर्पन ॥

तुम जैसे हो कहे न जाते, किसी तरह से गहे न जाते ।
हो जाये तुम में तन्मय मन ॥

कहीं तुम्हारा ध्यान न भूलूँ, तुम अनंत यह ज्ञान न भूलूँ ।
तुम सब विधि सुन्दर आनन्द घन ॥
तुम अपने प्रियतम अपने में, हो जागृति सुषुप्ति सपने में ।
हम हैं 'पथिक' तुम्हारे ही जन ॥

---

**सन्त-वचन—परम प्रभु निकट से निकट हमारी सत्ता के रूप में विद्यमान हैं जो साधक नित्य प्राप्त प्रभु को तीर्थों में मन्दिरों में तथा अवतरित नाम रूपों में देखते-देखते जब तक स्वयं में नहीं देख लेता तब तक विश्राम नहीं मिलता। जो स्वयं में पा लेता है। वही उसे सभी में पा लेता है। जिसमें अनन्त, ऐश्वर्य अनन्त माधुर्य और अनुपम सौन्दर्य एक साथ मिलते हैं वही भक्तों का भगवान है। भक्त वही है जो भगवान से निरन्तर अभिन्न है।**

---

हे केशव ! हे कृष्ण मुरारी ! हे प्रभु पूरण काम ।
मोर मुकुट पीताम्बरधारी, कुञ्जबिहारी श्याम ॥

हे त्रैलोक्यनाथ नटनागर हे कोमलचित करुणासागर ।
सौम्य सुजान सरल गुण आगर हे परमाश्रय धाम ॥

हे अनन्त ! अविचल अविनाशी हे व्यापक ! हे हृदय निवासी ।
अकथ अलौकिक आनन्दराशी, प्रेमनिधे अभिराम ॥

हे श्रद्धेय विभूति भुवन के हे प्रियतम प्राणों के मन के ।
तुम ही हो सरबस जीवन के, ध्याऊँ आठों याम ॥

हे स्वामी ! मेरे मन भावन हे योगेश्वर शोक नशावन ।
'पथिक' पतित को कर लो पावन, अधम उधारन नाम ॥

---

**सन्त-वचन—कोई भी भगवान का होकर भक्त हो सकता है। भक्त होकर ही कोई भगवान को उनकी कृपा से जान सकता है। परम प्रभु कृपा से ही मिलते हैं कुछ करने से नहीं। वर्तमान**

**जीवन से असन्तोष होने पर उन्नति का आरम्भ होता है। जब प्राणी गुणों का उपभोग करने लगता है तब विकास रुक जाता है।**

---

हे कृष्ण केशव हे पूर्णकाम, कितने तुम्हारे सुमधुर है नाम ।।
माधव मदन मोहन हे मुरारी, गोविन्द गोपाल हे गिरधारी ।
हे गोपियों के नयनाभिराम ।।

हे राधिका के चितचोर स्वामी हे सर्वेश्वर अन्तर्यामी ।
हे सर्वमय व्यापक सब ठाम ।।

हे रुक्मिणीकान्त हे असुरारी, हे भक्तवत्सल कल्याणकारी ।
हे मंगलमय लीला ललाम ।।

हे अविनाशी शंकर-वन्दित, देव तुम्हारा प्रेम अखण्डित।
भूलूँ न तुमको मैं आठों याम ।।

कोई तुम्हें जान पाये न पाये, कोई शरण में आये न आये ।
मिलता सभी को तुममें विराम ।।

तुमने न जाने कितनों को तारा, सुन ली उसी की जिसने पुकारा ।
तुम्हीं 'पथिक' के आनन्दधाम ।।

---

**सन्त-वचन—तुम्हें आनन्द प्राप्त करना है अत: सदा आनन्दस्वरूप का चिंतन करो। तुम्हें प्रेमी होना है इसलिये प्रेमस्वरूप का ही मनन करो।**

---

हे केशव हे माधव, हे मनमोहन गिरधारी ।
हे प्रियतम हे परमेश्वर, हे अच्युत अविकारी ।।

हो समर्थ दानी तुम पूर्णपरम ज्ञानी तुम ।
हो अगम अमानी तुम चक्रसुदर्शन धारी ।।

अधमोद्धारक हो तुम, दोष-निवारक हो तुम ।
विघ्न-विदारक हो तुम दीनन के दु:खहारी ।।

निर्बल के बल हो तुम सुन्दर निर्मल हो तुम ।
रहते अविचल हो तुम सबके अति हितकारी ।।

दिव्य शक्तिधर हो तुम अनुपम अक्षर हो तुम ।
पूर्ण परात्पर हो तुम भक्तन हित अवतारी ।।

हृदय-निवासी हो तुम परम प्रकाशी हो तुम ।
अज अविनाशी हो तुम परम सुहृद उपकारी ।।

चिदानन्दधन हो तुम शान्ति-निकेतन हो तुम ।
'पथिक' प्राणघन हो तुम निज जन के अघहारी ।।

---

**सन्त-वचन—वस्तु तथा व्यक्ति की दासता ने ही सत्य से आनन्द से विमुख कर रक्खा है। मान तथा भोग सुख की तृष्णा ने ही वस्तु एवं व्यक्ति के दासत्व में बाँध रक्खा है।**

---

हे जीवनेश तुमको आसान नहीं पाना ।
आसान भी इतने हो बस पर्दा ही हटाना ।।

यह परदा भी जो कुछ है अपना ही बनाया है ।
अपने ही मन से मैंने जब दूर तुम्हें माना ।।

मुझे कौन जानता था तुम्हें मानने से पहले ।
तुम्हें अपना माना जबसे अब जानता जमाना ।।

सब रूप बदलते हैं यह मन भी बदलता है ।
पर तुम नहीं बदलते आना न कहीं जाना ।।

सब खोज ही गलत है एक जानना काफी है ।
जिसने भी जाना तुमको अपने में ही पहचाना ।।

यह 'पथिक' चलते-चलते इस दर पै आ गया है ।
यह द्वार आखिरी है है आखिरी ठिकाना ।।

**सन्त-वचन—ध्यान से देखने पर स्वयं का मूल श्रोत स्वयं में ही मिलेगा। अपने स्वरूप को जानना ज्ञानी की भक्ति है। सत्य की विस्मृति में ही संसार का प्रभाव रहता है।**

हे जीवनधन मिल जाओ ।।
मैंने देख लिया जग सारा, मिला न मुझको कहीं सहारा ।
होश हुआ तब तुम्हें पुकारा, अब मत देर लगाओ ।।

तुम किस विधि देते हो दर्शन, कैसे निश्चल हो चंचल मन ।
कौन सुलभ मिलने का साधन, वही मुझे बतलाओ ।।

तुम ही अपना ऐसा बल दो, तुम्हीं हमारे दोष कुचल दो ।
तुमही मुझको मति निर्मल दो, निज अनुकूल बनाओ ।।

अब प्रभु तुम बिन कुछ न सुहाये, चाहे कुछ भी आये जाये ।
'पथिक' हृदय तुमको ही ध्याये, अब न कहीं भरमाओ ।।

**सन्त-वचन—सद्‌गुरु के महत्व को जान लेने पर गुरु के प्रति अटूट श्रद्धा होती है। गुरु का दर्शन आँखों से नहीं होता वह तो गुरु कृपा से बुद्धि दृष्टि खुलने पर ज्ञान प्रकाश में होता है।**

हे दयानिधान तुम्हारे ही गुण गाते जायेंगे ।।
जो कुछ भी अपने मन में तुम्हें सुनाते जायेंगे ।।

बस तुम्हीं एक ऐसे संगी हो दीख रहे जग में ।
जो कभी न तजते हमें प्रेरणा देते पग-पग में ।
अब हम हर एक बहाने तुम्हें बुलाते जायेंगे ।।

जो कुछ भी मेरे लिये उचित है वही करोगे तुम ।
हे देव कभी न कभी मेरे सब दु:ख हरोगे तुम ।
तुमसे बल पाकर अपने दोष मिटाते जायेंगे ।।

यह सच है प्रियतम तुम्हें खोजने दूर नहीं जाना ।
दर्शन देने को दूर कहीं से तुम्हें नहीं आना ।
फिर भी हमको जाने कब तक तरसाते जायेंगे ।।

प्रभु क्या दूँ तुमको, जो कुछ है सर्वस्व तुम्हारा है ।
अपने इस तन मन पर भी क्या अधिकार हमारा है ।
हम 'पथिक' सदा तुमसे ही सब कुछ पाते जायेंगे ।।

---

**सन्त-वचन—अपने प्रियतम की अपने में ही स्थापना कर लो और मन को उन्हीं के निकट रखते हुये निरन्तर उपासना करते रहो।**

---

हे दुःखहारी शरण तुम्हारी तुम से निज दुःख रो न सके हम ।
नाथ तुम्हारे प्रेमामृत में अब तक हृदय भिगो न सके हम ।।

तीरथ गये किया जप तप भी शास्त्र पढ़े ज्ञानी कहलाये ।
किन्तु खेद सब कुछ के पीछे अहंकार को खो न सके हम ।।

व्यर्थ गया दीखता हमारा सद्विवेक बिन सकल परिश्रम ।
यदि मुनियों की भाँति जगत् में जाग सके या सो न सके हम ।।

जीवन कुछ करते ही बीता फिर भी हो न सका वह कुछ भी ।
जिससे सब अभाव मिट जाते ऐसी शक्ति संजो न सके हम ।।

देव तुम्हारे द्वारा ही हो सकता है यह निर्मल जीवन ।
कृपा दृष्टि से धुल जायेगा जो मल अब तक धो न सके हम ।।

हे सुख दाता दोष विनाशक पूरी हो यह भी अभिलाषा ।
जीवन बीत रहा पर अब तक 'पथिक' तुम्हींमय हो न सके हम ।।

---

**सन्त-वचन—अहंकार महादोष है जो किसी भी शुभकर्म से दूर नहीं होता। केवल आस्तिक में ही विनम्रता के द्वारा अहंकार का दमन हो जाता है।**

---

हे नटवर श्याम मुरारी ! गिरधारी ।।
विनय यही है तुमसे दीनानाथ, दे दो अपना हे जीवनघन हाथ ।
जिसके बल से तज दूँ जग की, माया ममता सारी ! गिरधारी ।।

तुम बिन मेरी और सुनेगा कौन, पतित समझ कर मत हो जाना मौन ।
देव तुम्हारी शरणागत हूँ, रखना लाज हमारी, गिरधारी ।।

यद्यपि मैं हूँ तपबल साधनहीन, विषय विकारों से है हृदय मलीन ।
किन्तु यही आशा बल मुझको, तुम दीनन हितकारी ! गिरधारी ।।

मुझको तो कुछ अधिक नहीं है ज्ञान, करुणानिधि की करुणा का है ध्यान ।
मैं हूँ 'पथिक' तुम्हारा हे प्रभू, चाहूँ भक्ति तुम्हारी ! गिरधारी ।।

---

**सन्त-वचन—शरणागत को आवश्यक वस्तु बिना माँगे ही मिलती है, अनावश्यक वस्तु माँगने पर भी नहीं मिलती। काम का अन्त होने पर राम की कृपा राम से मिलती है।**

---

हे परमेश्वर असुरारी ! हे दुःखहारी ।।

विनय यही है तुमसे दीनानाथ ।
सब कुछ देखूँ बुद्धियोग के साथ ।।
विवेक बल से तज दूँ जग की माया ममता सारी ।। हे दुःख०।।

तुम बिन मेरी और सुनेगा कौन ।
तुम्हें सुनाने को रहना है मौन ।।
तुम्हीं हृदय निवासी प्रभु हो परम सुहृद हितकारी ।। हे दुःख०।।

यद्यपि मैं हूँ तप बल साधनहीन ।
विषय विकारों से है चित्त मलीन ।।
कृपा दृष्टि से बन जायेगी बिगड़ी दशा हमारी ।। हे दुःख०।।

मुझको तो कुछ अधिक नहीं है ज्ञान ।
करुणानिधि की करुणा का है ध्यान ।।
मैं हूँ 'पथिक' तुम्हारा हे प्रभु, चाहूँ भक्ति तुम्हारी ।। हे दुःख०।।

---

**सन्त-वचन—प्रार्थना दुःखी हृदय की पुकार है जो मौन रहने पर भी चलती रहती है। उत्कट प्रतीक्षा प्रार्थना है। प्रार्थना द्वारा जो दूसरों से**

**मिलता है वह संसार की विनाशी वस्तु है। जो सत्य है श्रेष्ठ है, शिव सुन्दर है वह अपने में प्राप्त होता है।**

हे परमेश्वर परमात्मन हृदय बिहारी तुमको नमस्कार ।।
हे प्रणतपाल विश्वम्भर है दुःखहारी तुमको नमस्कार ।।

हे शान्तिसिन्धु हे परमपुरुष घट-घट व्यापक अन्तर्यामी ।
हे सर्वगुणाश्रय गुणातीत असुरारी तुमको नमस्कार ।।

हे नित्यशुद्ध हे परम बुद्ध हे पूर्ण परात्पर अकथनीय ।
हे प्राणिमात्र के जीवनधन हितकारी तुमको नमस्कार ।।

हे पूर्णकाम सच्चिदानन्द हे नित्यमुक्त भव-भय भंजन ।
हे जनतारन भक्त-उबारन हित अवतारी तुमको नमस्कार ।।

हे विभु हे सर्वेश्वर्यपूर्ण हे प्रेममूर्ति अनुपम दाता ।
हो 'पथिक' तुम्हीं मय पाकर शरण तुम्हारी तुमको नमस्कार ।।

**सन्त-वचन—संसार में भय तथा चिंता इसीलिये है कि तुम विनाशी वस्तुओं का आश्रय छोड़कर अविनाशी सत्य का आश्रय लेकर अभय तथा चिंतामुक्त हो जाओ।**

हे पुरुषोत्तम भगवान तुम्हें सब में प्रणाम ।
हे सर्वाधार महान तुम्हें सब में प्रणाम ।।

तुम क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ सभी के आश्रय ।
तुम प्रकृति पुरुष के प्राण तुम्हें सब में प्रणाम ।।

हम विमूढ़तावश तुमको समझ न पाते ।
तुम ही हरते अज्ञान तुम्हें सब में प्रणाम ।।

तुम पाँच तत्व मन मति चित अहमिति में हो ।
तुम नित्य जीव में ज्ञान तुम्हें सबमें प्रणाम ।।

हे दाता हम सब कुछ तुम से ही पाते ।
भूलें न तुम्हारा दान तुम्हें सब में प्रणाम ।।

जब तुममें रहकर विमुख तुम्हीं से रहते ।
तब तुम हरते अज्ञान तुम्हें सबमें प्रणाम ।।

जब करुणामय सतसंग सुलभ कर देते ।
तब मिटे मोह अभिमान तुम्हें सबमें प्रणाम ।।

तुमसे कण-कण में प्रतिक्षण-क्षण में गति है ।
तुम सब में एक समान तुम्हें सब में प्रणाम ।।

हम 'पथिक' तुम्हीं में तुम ही तो हम मय हो ।
यह रहे निरन्तर ध्यान तुम्हें सब में प्रणाम ।।

---

**सन्त-वचन—पानी का स्त्रोत सभी जगह है, उसी प्रकार ऐसा कोई स्थान नहीं जहाँ परमात्मा न हो। जड़-चेतन सबमें वही है इसलिये सब को नमस्कार करो।**

---

हे प्रभु तुम अपनी माया में क्यों हमें भुलाते हो ।।
मेरे इस मूरख मन की पूरी करते जाते हो ।।

तुमसे मैंने सब कुछ पाया पर तुम न मिले अब तक ।
मिलते भी कैसे, उर में सच्ची चाह नहीं जब तक ।
तुम तो सच्चे प्रेमी को ही प्रभु दरश दिखाते हो ।।

हे नाथ, बता दो हम भी ऐसा प्रेम कहाँ पायें ।
तुम से ही माँग रहे हैं बोलो और कहाँ जायें ।
हम योग्य नहीं है इसीलिये तो देर लगाते हो ।।

हे दानी, वह बल दो जिससे हम हो जायें त्यागी ।
अब देख सकें प्रियतम तुमको हम होकर अनुरागी ।
सुनता हूँ एकाकी होने पर ही मिल जाते हो ।।

अज्ञान तिमिर छाया है तुमको पहिचानें कैसे ।
यह अहंकार बाधक है तब तुमको जाने कैसे ।
हम दीन 'पथिक' के दोषों को अब क्यों न मिटाते हो ।।

**सन्त-वचन—तुम अपना कर्तव्य पूरा करो प्रभु को जो करना चाहिये वह तुम्हारे कहने के प्रथम ही कर चुके हैं उनकी कृपा का अनुभव करो।**

हे प्रभु तुम आके चले गये ।।

सोचा था तुमको पायेंगे, अपने उद्गार सुनायेंगे ।
यह जीवन सफल बनायेंगे, मेरे सब दुःख मिट जायेंगे ।
पर मेरी सब आशाओं को, क्यों व्यर्थ बना कर चले गये ।।

अब देखो हे भगवन् तुम बिन, यूँ ही बीते जाते हैं दिन ।
मिलनाशा में घड़ियाँ गिन-गिन, होते रहते अधीर छिन-छिन ।
किन अपराधों से तुम हमको, इक राह बता के चले गये ।।

यह सच है हममें भक्ति नहीं, साधन में भी अनुरक्ति नहीं ।
भोगों से अभी विरक्ति नहीं हम हैं अधिकारी व्यक्ति नहीं ।
क्या इसीलिये है दीनबन्धु, हमको फुसला के चले गये ।।

हम होकर अतिशय दीन हृदय हैं शरण तुम्हारी करुणामय ।
मेरे पापों का कर दो क्षय, जिससे मैं हो जाऊँ निर्भय ।
फिर मिलो 'पथिक' के मनमोहन क्यों झलक दिखा के चले गये ।।

**सन्त-वचन—चाह को व्याकुलता से, प्रेम को त्याग से, ज्ञान को समता से, तप को सहनशीलता से, प्यार को सेवा से, प्रीति को चिन्तन से, शक्ति को श्रम से, उदारता को दान से, नाप कर देखो।**

हे प्रभु शरणागत हम हैं स्वीकार करो ।
अधमोद्धारक तुम हो मेरा उद्धार करो ।।

हम माया मानबद्ध अजितेन्द्रिय कृपण दीन ।
राग-द्वेष परिपूरित मेरा मन अति मलीन ।
मुझको शुभ मति गति दो सद्यः उपचार करो ।।

दूर करो दुःखहारी दुर्गम देहाभिमान ।।
देख सकें सतस्वरूप ऐसा दो विशद ज्ञान ।
हे समर्थ मेरे प्रति भी यह उपकार करो ।।

बन जाये हम पवित्र प्रेमी निष्काम हृदय ।
और अचञ्चल चित हो मिल जाये आत्म विजय ।
मेरे दुःख दोषों का स्वामी संहार करो ।।

हम तुममय हो जायें तब समझें सत्यसंग ।
मिट जायें अन्तर से जो कुछ भी असत रंग ।
'पथिक' तुम्हारे पथ में परमेश्वर पार करो ।।

---

**सन्त-वचन—दोष अपने देखो और उन्हें दूर करो। गुण जहाँ-जहाँ कहीं देखो परमेश्वर के समझो। ज्ञान रूप गुरु की शरण लो।**

---

हे प्रभो यह प्राण अब घबरा रहे हैं ।
व्यर्थ जीवन दिवस बीते जा रहे हैं ।।

इसी आशा में कभी प्रियतम मिलेंगे ।
विरह पीड़ा बीच मोद मना रहे हैं ।।

इस अनाश्रित के परम आश्रय तुम्हीं हो ।
तुम्हीं से हम रो रहे हैं गा रहे हैं ।।

अब हमें परिणामदर्शी बुद्धि द्वारा ।
ये मनोहर सुख दुःखद दिखला रहे हैं ।।

छद्मवेशी रुचिर भोग-विलास सारे ।
रम्य उपवन तपन सी अब ला रहे हैं ।।

पा सकें हम शान्ति अब ऐसी कृपा हो ।
सुखों के पीछे बहुत दुःख पा रहे हैं ।।

हम 'पथिक' हैं हे प्रभो पावन बनाओ ।
आप ही का नाम लेते जा रहे हैं ।।

**सन्त-वचन—जिस ज्ञान से जगत् दृश्य देख रहे हो उसी ज्ञान से अहंकार को देखो। सत्य के लिये साहस की परम आवश्यकता है साहस में ही दोषों के त्याग का दृढ़ संकल्प होता है। हीनता के भाव से महत्वाकांक्षा उत्पन्न होती है।**

हे प्रियतम भगवान प्रेममय मेरे परमाधार प्रभो ।
हे समर्थ सबके संरक्षक हे अच्युत अविकार प्रभो ।।

हे समदर्शी पूर्ण परात्पर हे सबके आश्रय दाता ।
बिना हेतु के प्राणिमात्र पर करते हो उपकार प्रभो ।।

कितना ही कोई पापी हो, फिर भी नहीं किसी का त्याग ।
शरणागत का जैसे भी हो करते तुम उद्धार प्रभो ।।

हममें सारी शक्ति तुम्हीं से तुममें ही हम रहते नाथ ।
किन्तु तुम्हारा ध्यान न रखकर करते स्वेच्छाचार प्रभो ।।

हममें कितने ही दुर्गुण हैं अगणित होते आये पाप ।
फिर भी हम पाते रहते हैं नित्य तुम्हारा प्यार प्रभो ।।

हम कितना ही भूलें भटकें पाते तुम में ही विश्राम ।
सन्मुख आ जाते हम जब भी कर लेते स्वीकार प्रभो ।।

हे दानी तुम सब विधि पूरण, हे करुणानिधि हे निष्काम ।
हम लेते तुम देते रहते अनुपम परम उदार प्रभो ।।

जितने बन्धन दुःख यहाँ हैं वह निज मन से ही उत्पन्न ।
तुम तो परमानन्द रूप हरि हरते हो दुःख भार प्रभो ।।

हम विचित्र अपराधी हैं पर यही सोचकर हैं निश्चिन्त ।
कितने ही हम पतित 'पथिक' हों तुम कर दोगे पार प्रभो ।।

**सन्त-वचन—चित्त जहाँ जाय वहाँ से लौटाकर स्थिर करो और सोचो कि सब नाशवान है दु:खरूप है त्याज्य है।**

हे भगवन् भूल रहा भव में, भ्रम विपति छुटैया कोई नहीं ।।
यदि तुम भी नाथ न सुधि लोगे, तब और सुनैया कोई नहीं ।।
भूलते हुए ऐसे ही क्या, जीवन दिन सब खो जावेंगे ।।
शरणागत हूँ प्रभु आप बिना, सत सुपथ दिखैया कोई नहीं ।।
इतने पर भी यदि अधम जान, अनकृपा दृष्टि से काम लिया ।।
तब तुम बिन मेरा इस जग में, दुख द्वन्द्व मिटैया कोई नहीं ।।
सन्तोष हेतु तुम ही धन हो, तुम बिन तो कुछ आधार नहीं ।।
हम निबल अपावन जन को तो, तुम बिन अपनैया कोई नहीं ।।
हे अधमोद्धारक दीनबन्धु, मैं सत्य प्रेम का भिक्षुक हूँ ।।
भूलना न हे विभु आप बिना, पति 'पथिक' रखैया कोई नहीं ।।

**सन्त-वचन—व्याकुलता रहित साधन प्राणहीन साधन है। व्याकुलता अनेक दोषों का नाश करती है। अपने प्रेमास्पद के योग लाभ के लिये सच्ची व्याकुलता वही है जो किसी के संयोग की इच्छा ही न करे।**

हे नाथ तुम्हारे दर्शन की कब पूरी होगी आश ।
सेवा में सफल बने तन-मन यह जीवन को अभिलाष ।।

वासना जगत् के भोगों की इस जग में लाती है ।
अब समझे हमको कहाँ-कहाँ कामना नचाती है ।
हे देव हमें वह बल दो जिससे तोड़ सकें यह पाश ।।

सुनता हूँ निर्मल मन जिनका वे तुमको पाते हैं ।
फिर पतित जनों को भी तो पावन आप बनाते हैं ।
पर हमको ही सन्मुख होने का मिल न सका अवकाश ।।

सब कुछ पाया पर तुम न मिले दिन बीत गये इतने ।
हम बता न सकते हैं अब तक अपराध किये कितने ।
बस तुम्हीं एक मेरे दोषों का कर सकते हो नाश ।।

अभिमान-शून्य हो जाऊँ सब कुछ तुमको ही मानूँ ।
जो कुछ भी देखूँ सब में केवल तुमको ही जानूँ ।
मैं दीन 'पथिक' हूँ मुझको दे दो अपना ज्ञान प्रकाश ।।

---

**सन्त-वचन—संसार से सुख की आशा करना उसी से सम्बन्ध जोड़ना संसार में बद्ध होना है। परमेश्वर से परम शान्ति की आशा करना और उन्हीं से सम्बन्ध जोड़ना संसार से मुक्त हो जाना है।**

---

हे मनमोहन ! हे जीवन धन ।

प्रेम निधे अनुपम महान तुम, हो समर्थ सद्गुण निधान तुम ।
तुम में ही सर्वस्व समर्पन ।।

तुम जैसे हो कहे न जाते किसी तरह से गहे न जाते।
हो जाता तुम में तन्मय मन ।।

कहीं तुम्हारा ध्यान न भूलूँ, तुम अनन्त यह ज्ञान न भूलूँ ।
तुम सब विधि सुन्दर आनन्दधन ।।

तुम अपने प्रियतम अपने में हो जागृति सुषुप्ति, सपने में ।
अनुभव करते प्रेमी 'पथिक' जन ।।

---

**सन-वचन—परम प्रभु दीनता और अपनत्व के भाव से रीझते हैं और अपना प्रेम प्रदान करते हैं।**

---

हे समर्थ प्रभु दया तुम्हारी मेरे सारे दुख हरती है ।।
तुमसे मिलकर ही हे प्रियतम अनुपम शान्ति मिला करती है ।।

इसी दया से प्राणिमात्र को तुमने बहुविधि दान दिया है ।
शरणागत अधमातिअधम को अपने निकट स्थान दिया है ।
सबको सबकी इच्छित विधि से अपनी गति का ज्ञान दिया है ।
अपने से अनुरक्त जनों को सर्वोपरि सम्मान दिया है ।
पतित पावनी इसी दया से असुरो की माया डरती है ।।

करते आये और करोगे नाथ सदा तुम प्यार हमारा ।
तुम्हीं जानते हो किस विधि से होना है उपचार हमारा ।
तुमसे हमने सब कुछ पाया तुममें ही संसार हमारा ।
तुमको ही तो भव बन्धन से करना है उद्धार हमारा ।
नाथ तुम्हारे चिन्तन से ही मेरी सब बाधा हरती है ।।

हम न समझ पाते हैं तुमको किन रूपों में क्या कर जाते ।
जहाँ भूलते हैं इस जग में तुम करुणानिधि राह दिखाते ।
गिर पड़ते हैं जहाँ कहीं हम तुम्हीं शक्ति दे शीघ्र उठाते ।
सुख से अधिक सदा दुख में हम अपने निकट तुम्हीं को पाते ।
हम तुम में ही हैं इस अनुभव से चित की चिन्ता मरती है ।।

अब समझे हैं अन्तर्यामी तुम किंचित भी दूर नहीं हो ।
कितना ही हम भूले तुमको तुम न भूलते हमें कहीं हो ।
तुम्हीं चाहते हो जब जिसको तत्क्षण मिलते उसे वहीं हो ।
मेरे जन्म-मृत्यु के संगी नित्य सत्य तुम अभी यहीं हो ।
'पथिक' हृदय में भक्ति तुम्हारी अति आनन्द सुधा भरती है ।।

---

**सन्त-वचन—परम प्रभु की याद उलट कर दया बन जाती है। जो अभिमानी है वही दया का अनुभव नहीं करते। दया दीन के साथ रहती है, दया के साथ सभी सद्‌गुण रहते हैं।**

---

हे समर्थ शक्तिमान ! हे परम गुरो महान ।

हे निज जन मन रंजन, हे सत्वर भय भंजन ।
हे हरि दुर्मद गञ्जन, परम वन्द्य जगत प्रान ।।

कोमल करुणावतार सर्वोपरि सुखाधार ।
सबके प्रति अमित प्यार दुख हारी दयावान ।।

अतिशय गम्भीर धीर, हे सुन्दर परमवीर ।
तुम तम का हृदय चीर, देते हो दिव्य ज्ञान ।।

हे निर्भय परम बुद्ध, माया ममता विरुद्ध ।
हे प्रभु सर्वाङ्ग शुद्ध, चाहे यह 'पथिक' ध्यान ।।

---

**सन्त-वचन—महान के चिन्तन से महत्ता प्राप्त होती है। चिन्तन के अनुसार ही चित्त का रूप बन जाता है। अशुद्ध का चिन्तन चित्त की अशुद्धि है, शुद्ध का चिन्तन ही चित्त की शुद्धि है।**

---

हे समर्थ हे परम हितैषी तुमसे ही कल्याण हमारा ।
तुम्हें न पाकर व्यर्थ चला जाता मानव का जीवन सारा ।।

परम बन्धु युग-युग के योगी, महाबुद्ध हे अमर महात्मन ।
चूम सके जो चरण तुम्हारे उसका सफल हुआ मानव तन ।
देव तुम्हारे दर्शन करके लग जाता तुम में जिसका मन ।
तुम्हें छोड़ कर कहीं न जाता तुम्हीं दीखते हो प्रियतम धन ।
कितनों ने ही सीख लिया मर कर जीने का मन्त्र तुम्हारा ।। १।।

जाने कितने मुरझाये मुख खिलते देखे तुमको पाकर ।
सदा पीड़ितों की पुकार पर रहे दौड़ते कष्ट उठाकर ।
जो न कहीं सुख देख मिला, वह देखा श्रीचरणों में आकर ।
जो न कभी हो सका वही, हो गया तुम्हारा ध्यान लगाकर ।
शरण ले लिया उसको जिसने कभी हृदय से तुम्हें पुकारा ।। २।।

तुमको हमने दीनों दलितों की कुटिया में जाते देखा ।
अपनी योगशक्ति से उनके, तुमको दुःख मिटाते देखा ।
कहीं अश्रु से गीली पलकें स्वामिन, तुम्हें सुखाते देखा ।
जो कि तुम्हें करना था उसमें कभी न देर लगाते देखा ।
तुमने उसकी सुनी दयामय जिसको सबने ही दुतकारा ।। ३।।

निज तन-मन का ध्यान न रखकर तुमने पर उपकार किया है ।
तुमने सदा बिना कुछ चाहे प्राणिमात्र से प्यार किया है ।
हे संघर्षातीत ! तुम्हीं ने षटरिपु का संहार किया है ।
शरणागत डूबते हुए को जब देखा तब तार दिया है ।
भव सागर में पड़े जीव को नाथ तुम्हीं से मिला किनारा ।। ४।।

हे अभेद दृष्टा ! मंगलमय, शोक विनाशक हे विज्ञानी ।
जन-मन रंजन, भक्त पाल, हे बाल सखा श्रद्धेय अमानी ।
अतुलित प्राण शक्ति के सागर, गुण आगर हे अनुपम दानी ।
तुमसे ज्ञान ज्योति पाते हैं जग के चिर-तमवेष्ठित प्राणी ।
सदा अशक्त बद्ध पीड़ित को, दिया तुम्हीं ने शक्ति सहारा ।। ५।।

बीतराग, हे परम तपस्वी, नित्य समाहित चित्त धीर तुम ।
शिव सुन्दर-सत्य के समिश्रण, हरते भव की विषम पीर तुम ।
पावन तप के ओज तेज से दीप्तिमान निर्दोष वीर तुम ।
हे संदर्शक परम तत्व के, चलते तम के हृदय चीर तुम ।
'पथिक' हृदय को तुमसे मिलती दिव्य प्रेम की अविरल धारा ।। ६।।

---

**सन्त-वचन—मुक्तात्मा बद्ध जीव को मुक्ति मार्ग दिखाते हैं। जिसमें अलौकिक सौन्दर्य माधुर्य ऐश्वर्य एक साथ हो वही विभूति है।**

---

हे सुघर सलोने श्याम हमारे मनमोहन ।।
हे परमात्मन सुखधाम हमारे मनमोहन ।।

हे निर्गुण ! हे विभु गुणागार ।
हे प्रभु सर्वज्ञ ललाम हमारे मनमोहन ।।

हे नित्य निरंजन ! हे निष्क्रिय ।
हो तुम निर्भय निष्काम, हमारे मनमोहन ।।

हे करुणामय ! अविचल अव्यय ।
अतुलित अनुपम अभिराम हमारे मनमोहन ।।

हे ज्ञान ध्यान के परमाश्रय ।
हे मुक्ति के विश्राम हमारे मनमोहन ।।

तुम वाल्मीकि के उलटे जप ।
अरु तुलसी के श्रीराम हमारे मनमोहन।।

तुम मीरा के गिरधर गोपाल ।
हे सूरदास के श्याम हमारे मनमोहन ।।

भक्तों के हित हे भावरूप ।
तुम धारे अगणित नाम हमारे मनमोहन ।।

यह 'पथिक' प्रेम से तुमको ही ।
अब ध्याये आठों याम हमारे मनमोहन ।।

---

**सन्त-वचन—दोषों के रहते अथवा किसी कमी के रहते चैन न लो तो सारे दोष या प्रत्येक कमी से निवृत्ति मिल जायगी। अनुकूलता ने ही हमें भगवान से विमुख बना रखा है।**

---

है उस महान को नमस्कार ।।

जो केवल परमानन्द रूप, है जिसका कण-कण में निवास ।
उसको ही सब जग रहा खोज, जिसका यह जगमय चिद्विलास ।
उस शक्तिमान को नमस्कार ।।

जिसकी विभुता इतनी विशाल, वसता है उसमें शून्य व्योम ।
जिसमें रहते पृथ्वी सागर, जिसमें चलते हैं सूर्य सोम ।
उस प्रकृति प्राण को नमस्कार ।।

जो एक प्रेम के भाववश्य, पाते जिसको प्रेमी प्रवीन ।
आते रहते जिसके सम्मुख, नीचातिनीच दीनातिदीन ।
उस दयावान को नमस्कार ।।

जिसको कहते हैं दीनबन्धु, जो दुखियों की सुनता पुकार।
जिसकी महिमा अतुलित अनंत, जिसका चहुँदिशि से खुला द्वारा।
उस गुणनिधान को नमस्कार ।।

जिसकी इतनी है सरल प्राप्ति मिल सकते हैं जो सभी ठाम।
भक्तों के ही भावानुसार, दर्शन देते आनन्दधाम।
उसके विधान को नमस्कार ।।

जो जीवन का निर्मल प्रकाश, मिटती है जिससे भूल भ्रान्ति।
गल जाता है देहाभिमान, मिलती है पावन परम शान्ति।
उस दिव्य ज्ञान को नमस्कार ।।

जिस बल से वह अज्ञेय तत्व, अनुभव होता यद्यपि अरूप।
जिस बल से वह चिन्मय अचिन्त्य चिन्तन में आता निज स्वरूप।
उस सतत ध्यान को नमस्कार ।।

बढ़ती जिससे अनुरक्ति भक्ति, होता जिससे परमानुराग।
ऐसा जिसका सुन्दर प्रभाव, हो जाय 'पथिक' में मोह त्याग।
उस सत्य गान को नमस्कार ।।

---

**सन्त-वचन—भगवद् चिन्तन से विषय चिन्तन को, त्याग से ही राग को, प्रेम से ही द्वेष को, योग से ही भोग को, आत्मज्ञान से ही देहाभिमान को मिटा सकोगे।**

---

है बहारे बाग दुनिया चन्द रोज।
देख लो इस का तमाशा चन्द रोज ।।

पूछा लुकमा से जिया तू कितने रोज।
दस्त हसरत मल के बोला चन्द रोज ।।

बाद मदफन कब्र से बोली कजा।
अब यहाँ पर सोते रहना चन्द रोज ।।

ऐ मुसाफिर कूच का सामान कर।
इस जहाँ में है बसेरा चन्द रोज ।।

तुम कहाँ और हम कहाँ ऐ दोस्तो ।
साथ है मेरा तुम्हारा चन्द रोज ।।

जो सताते है किसी बे जुर्म को ।
समझ लो उनका जमाना चन्द रोज ।।

याद रखना मौत और भगवान को ।
जिन्दगी का बस भरोसा चन्द रोज ।।

सोच लो क्या साथ, अपने जायगा ।
कौन कितने दिन यहाँ रह पायेगा ।
'पथिक' कर लो मेरा-तेरा चन्द रोज ।।

---

**सन्त-वचन—जो संसार के वैभव में विश्वास करते हैं वही अहंकारी अभिमानी होते हैं। बड़ी से बड़ी अच्छाई अभिमान आने पर बुराई में बदल जाती है।**

---

है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे ।।
विद्वान हो के नित्य विद्यमान को चाहे ।।

भोगी सदा ही भोग के सामान को चाहे ।
अभिमानी सदा अपने ही सम्मान को चाहे ।
वह त्यागी तपस्वी भी कीर्तिगान को चाहे ।
वह देव पुजारी भी तो वरदान को चाहे ।
कोई चहे कुरान या पुरान को चाहे ।।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे ।।

कोई सुकाल में, कोई अकाल में खुश हैं ।
देखो यहाँ सब अपने ही स्वर ताल में खुश हैं ।
जो मन में भर गई है उसी चाल में खुश हैं ।
हैं बन्धे हुए फिर भी अपने हाल में खुश हैं ।
सागर में चले कोई वायुयान को चाहे ।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे ।।

कितने ही अपने भले बुरे काम में भूले ।
कुछ नाम में भूले हैं कोई मान में भूले ।
कोई हजार लाख जोड़ दाम में भूले ।
जो रूप के मोही हैं गोरे चाम में भूले ।
भूले नहीं वो जो दयानिधान को चाहे ।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे ।।

बुलबुल को रहा करती गुलस्तान की तलाश ।
उल्लू को देखिये तो है वीरान की तलाश ।
पशु को भी अपनी जात के हैवान की तलाश ।
सबको है अपने-अपने इतमीनान की तलाश ।
कोई जमीन कोई आसमान को चाहे ।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे ।।

चलता है भिखारी सदा धनवान के पीछे ।
मोही घुला करता है सन्तान के पीछे ।
दुर्बल रहा करता है बलवान के पीछे ।
खोता है मूर्ख सब कुछ अज्ञान के पीछे ।
पर बुद्धिमान प्रभु के ही विधान को चाहे ।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे ।।

प्रेमी बने है कोई भाव प्यार में अटके ।
बन कर के कोई सेवक अधिकार में अटके ।
कुछ प्रीति मान छोटे से परिवार में अटके ।
यदि पुण्य किये, स्वर्ग के साकार में अटके ।
कोई बिहिस्त कोई परिस्तान को चाहे ।।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे ।

जो नित्य विद्यमान है वह दूर नहीं है ।
वह सर्वमय है साक्षी है और यहीं है ।

सब उसी के भीतर ही है जो कुछ भी कहीं है ।
हम भूले हुए जहाँ भी है वह भी वहीं है ।
जो ज्ञान में है इसी अधिष्ठान को चाहे ।।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे ।।

भगवान वही जिससे सब पूरे होते काम ।
भगवान से प्रकाशित हैं सारे रूप नाम ।
भगवान में ही जीव को मिलता परम विश्राम ।
सबके वही परमाश्रय सत् चिदानन्द धाम ।
यह 'पथिक' किसी विधि उन्हीं महान को चाहे ।।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे ।।

---

**सन्त-वचन—भगवान की चाह वही सच्ची है जो उनके अतिरिक्त कहीं चैन न लेने दे। भगवान का ज्ञान होना ही पर्याप्त नहीं है उनके प्रति पूर्ण प्रेम होना आवश्यक है। प्रीतिपूर्वक चिन्तन ही भक्ति की साधना है। भगवान से अभिन्नता का बोध रहना ही भक्ति है। क्रोध ईर्ष्या, द्वेष काम से तपायमान अन्त:करण में भक्ति जाग्रत नहीं होती, भगवान को शीतल स्थान प्रिय है।**

---

ज्ञान अद्वय जब प्रकाशित वहीं भगवद् अवतरण है ।
वहीं सद्गुरु अवतरण है ।।
तभी दर्शन सुलभ होता शुद्ध जब अन्त:करण है ।

आत्मा आनन्दमय है सर्वमय है नित्य चेतन ।
अहंकार विमूढ़ दुख-सुख भोक्ता है संग तन-मन ।
प्रेम में गलता पिघलता जब कि श्रद्धायुत शरण है ।।

मैं ही खुद खोया हुआ था खोज में ही जब तुला था ।
अनदिखा आनन्द का यह द्वार तो सब दिन खुला था ।
यहाँ मिटता ज्ञान में अज्ञान का जो आवरण है ।।

कौन हमको जानता था शरण में आने के पहले ।
अब जमाना जानता है शक्ल दिखलाने के पहले ।
बिना अपने कुछ किये ही हो रहा पोषण-भरण है ।।

जो कहीं भी पा न सकते वह यहाँ पर पा रहे हैं ।
जो कहीं भी गा न सकते वह यहाँ हम गा रहे हैं ।
जो कहीं भी बन न सकता बन रहा वह आचरण है ।।

जब कभी ममता मिटे तब अहं के आकार टूटें ।
इसी को तो मुक्ति कहते मान्यता के बन्ध छूटें ।
यही परम स्वतन्त्रता है यही ज्ञानामृत झरण है ।।

यहाँ आने पर ही जाना कहीं कुछ पाना नहीं है ।
स्वयं में ही प्राप्त प्रभु है अब कहीं जाना नहीं है ।
'पथिक' का विश्राम धाम स्वज्ञान ही सब दुख हरण है ।।

---

**सन्त-वचन—आत्मा में अनन्त शक्ति सामर्थ्य एवं अनन्त ज्ञान है बुद्धियोग द्वारा जागृति होती है। परमात्मा के स्मरण करते रहने से व्यर्थ चिन्तन के त्याग से बुद्धियोग प्राप्त होता है।**

---

ज्ञान में जब दिखा देते हो तुम, बात बिगड़ी बना देते हो तुम ।।
जिसे हम दूर नहीं कर पाते, दोष मेरा हटा देते हो तुम ।।
बिना तुमसे मिले जो बुझती नहीं, प्यास ऐसी जगा देते हो तुम ।।
गरुर अपने आप झुक जाता, चोट ऐसी लगा देते हो तुम ।।
मेरी ये बन्द आँखें खुल जाती, रोशनी जगमगा देते हो तुम ।।
हम तो भूले स्वयं को तुमको भी, याद अपनी दिला देते हो तुम ।।
'पथिक' गिरते हुए संभल जाता, मन्त्र ऐसा सुना देते हो तुम ।।

**सन्त-वचन—केवल ज्ञान स्वरूप चेतन में बुद्धि को स्थिर करना योगाभ्यास है। सीमित ज्ञान ही अहंकार है असीम ज्ञान ही आत्मा है। वास्तव में चेतन स्वरूप ही आत्म सर्वस्व है।**

ज्ञान में यह जागरण का समय है सोते न रहना ।
सुखद स्वप्नों में न हँसना दुखद में रोते न रहना ।।

मन विषय विष से सना है निर्विषय इसको बनाओ ।
प्रेममय होकर सदा आनन्द के ही गीत गाओ ।
कामना वश कर्म के अब बीज तुम बोते न रहना ।।

शान्ति शाश्वत प्राप्त ही है अहंकार अशान्त रहता ।
सत्य से दूरी नहीं है मन विमुख हो भ्रान्त रहता ।
क्षणिक सुख के लिये जीवन व्यर्थ अब खोते न रहना ।।

तुम सदा ही मुक्त हो यदि अब कभी मन की न मानो ।
रहो जग में मोह तज कर सभी प्रभु की वस्तु जानो ।
व्यर्थ असत् के संग से अब भिखारी होते न रहना ।।

तीन गुण के साथ ही जग में प्रकृति कुछ कर रही है ।
तत्व के आश्रित निरन्तर रूप अगणित धर रही है ।
'पथिक' कर्तापने का अब भार तुम ढोते न रहना ।।

**सन्त-वचन—तत्व का बोध होना सम्यक् ज्ञान है जब तक राग द्वेष मोह लोभादि दोष हैं तब तक सम्यक् ज्ञान नहीं।**

## पुस्तक प्राप्ति स्थल

* संत पथिक साधना आश्रम
हरिपुर कलाँ, हरिद्वार-249205
मो. 9045598290

* डॉ. जे. एल. सूरी
28, विधान सभा मार्ग, लखनऊ
मो. 9415062640

## प्रकाशक

* सूश्री मालती पाण्डेय
नौबस्ता आश्रम, कानपुर

* संत पथिक वृद्ध साधना ट्रस्ट (रजि.)
हरिपुर कलाँ, हरिद्वार